प्रकाशकीय वक्तव्य

प्रिय पाठक गण !

चित्रभूतीला के पश्चात् रामायण का दूसरा संस्करण आपके हाथों तक पहुंच रहा है। सं० २०१० के चातुर्मास में पंडित प्रवर मन्त्री मुनि श्री शुक्लचन्द्र जी ने अपनी शास्त्रीय अमृतवर्षा के साथ-साथ रामायण की ऐतिहासिक कथा का भी रस प्रवाहित किया। श्रोतृवर्ग में सर्वश्री ला० बोधराज जी (रावलपिण्डी वाले), ला० वृद्धिशाह जी, ला० बालमुकुन्द शाह जी, ला० रोचीशाह जी तथा ला० प्यारेलाल जी निरन्तर उपस्थित रहे। आप महानुभावों के मन में रामायण का द्वितीय संस्करण निकालने की महती इच्छा जागृत हुई। आप लोगों ने स्वयं तथा अपने भाइयों से सहायता प्राप्त करके इस गुरुतर कार्य को सम्भाला। इसी प्रकार श्री किशनलाल गुप्ता मालिक कृष्णा हौजरी लाजपतनगर से भी अमूल्य सहयोग प्राप्त हुआ। जिसके फलस्वरूप यह पुस्तक प्रस्तुत है। इसके लिये उपर्युक्त महानुभावों के प्रति समाज सदा कृतज्ञ रहेगा। इसमें महाराज जी ने कुछ नवीन प्रकरण भी जोड़ दिये है, जैसे—परशुराम संवाद, अहिल्या प्रकरण आदि। आशा है इस अपूर्व रचना से समाज पूरा-पूरा लाभ उठायेगा।

विनीत
भीमसेनशाह

विषय सूची

॥ ओ३म् ॥

—: प्राक्कथन :—

(१) इस अनादि संसार में सर्वज्ञ देव ने काल के दो विभाग किये हैं। एक का नाम अवसर्पणि काल और दूसरे का नाम उत्सर्पणि काल। अपसर्पणि काल के छः विभाग किये हैं। जिनको छः आरे भी कहते हैं। प्रथम आरा चार क्रोडाक्रोड सागरोपम का होता है। इस में जो मनुष्य होते हैं वे अकर्म भूमिज युगलिये कहलाते हैं। दश प्रकार के कल्प वृक्षों से ही जिन्हों की इच्छायें पूर्ण होती हैं। धर्म नीति राजनीति व्यवहारिक कार्य कुछ नहीं होते। भद्र शान्त परम सुख भोगने वाले होते हैं, इस लिये इसका नाम सुखमा सुखमा है।

२ दूसरा सुखमा यह तीन क्रोडाक्रोड सागर का होता है। इसमें भी उपरोक्त सब बातें होती हैं। इतना विशेष है कि अनन्ते वरुण गंधरस स्पर्श को न्यूनता के कारण सुखमा कहलाता है।

३ तीसरा आरा सुषमा दुखमा कहलाता है, यह दो क्रोडाक्रोड सागरोपम का होता है। इसके पहिले दो भागों में प्रायः दूसरे आरे के समान स्थिति रहती है। और तीसरे में जब चौरासी लाख पूर्व से अधिक समय शेष रह जाता है उस समय पदार्थों की कमी होने के कारण मनुष्यों में झगड़ा पैदा हो जाता है। झगड़ा मिटाने के लिये उन में से पांच मनुष्य नियत होते हैं और 'हैं' ऐसा दण्ड स्थापन करते हैं। कुछ समय बीत जाने के बाद और पांच मनुष्य नियत होते हैं और 'मा' ऐसा दंड स्थापन करते हैं। कुछ समय बाद पांच मनुष्य और नियत होते हैं

और ('धिक्कार') दंड स्थापन करते हैं। इस तरह झगड़ों को शान्त करते हैं। जब इस से भी आगे अधिक झगड़ा बढ़ गया तो १५ वे श्री नामक अपर नाभि नामक कुलकर को विशेष अधिकार दिये गये। इस लिये इनका नाम कुलकर है और (मनु) भी इनको कहते हैं। इन में १५ वें कुलकर को नाभिराजा भी कहते हैं। नाभिराजा की स्त्री मरुदेवीजी ने एक श्रेष्ठ और अति उत्तम पुत्र को जन्म दिया। जिनका नाम श्री आदिनाथ रखा गया। जब ये बड़े हुए तब इनके पिता ने इनकी शादी दो सुन्दर कन्याओं से की। एक का नाम सुमंगला और दूसरी का नाम सुनन्दा। श्री सुमंगला के बड़े पुत्र का नाम भरत था और पुत्री का नाम ब्राह्मी। सुनन्दाजी ने एक पुत्र का जन्म दिया उनका नाम बाहुबली था और कन्या का नाम सुन्दरी था। वैसे तो अकर्म भूमि में कर्म भूमि चन्द्रहर्ष कुलकर से ही प्रारम्भ हो गई थी, परन्तु श्री आदिनाथ जी ने जनता को अनाज बोना बर्तन बनाना, खाना पकाना मकानादि बनाना, वास्त्रादि बनाना, आवश्यक शिल्प कला व्यवहार आदि की शिक्षा दी। इस तरह सर्व प्रकार के सुधारों का प्रादुर्भाव श्री ऋषभदेव जी ने किया। इसी कारण इस काल के आदिनाथ कहलाये। प्रजा ने आदिनाथ को अपना राजा बना लिया। आदिनाथ ने राजनीति चलाने के बाद धर्म नीति स्थापना की, धर्म दान से होता है। इस कारण एक वर्ष तक ऋषभदेवजी ने निरंतर दान दिया, स्वयं आदर्श दानी बनने के पश्चात् अपने पुत्रों को राजपाट बांट कर संसार का त्याग कर मुनिपद को धारण किया। बहुत काल भ्रमण के बाद चार घातिक कर्मों का नाश कर केवल ज्ञान को प्राप्त किया। और चार तीर्थ की स्थापना करके मुनि और गृहस्थ दो प्रकार का धर्म संसार रूपी समुद्र से तैरने को बतलाया। तीसरा आरा कुछ शेष रहने पर सर्व कर्मों को काट कर मोक्ष को प्राप्त हुए। सिद्ध बुद्ध सच्चिदानंद हुए।

आदिनाथजी के पुत्र भरतजी इस काल के प्रथम चक्रवर्ती हुए। भरत क्षेत्र के छः खण्डों का राज किया। इन्होंने भी अपने पुत्र सूर्य कुमार को अपना उत्तराधिकारी बना के राज को छोड़ कर केवल ज्ञान को प्राप्त किया और मोक्ष में पहुचे। सूर्य कुमार से सूर्यवंश की स्थापना हुइ और इस प्रकार तीसरे आरे में एक तीर्थंकर प्रथमावतार श्री आदि नाथ जी और एक चक्रवर्ती प्रथम भोगा वतार भरत हुए।

४ चौथा आरा दुखमा सुखमा कहलाता है। इस में सुखकी अपेक्षा दुःख अधिक होता है। इसका समय प्रमाण ४२ हजार वर्ष कम एक क्रोडाक्रोड सागर का होता है। इस आरे में २३ तीर्थंकर धर्मावतार, ११ चक्रवर्ती भोगावतार, ६ वलदेव, ६ वासुदेव, ६ प्रतिवासुदेव, यह २७ कर्मावतार हुए हैं और इनके समकालीन ६ नारद, २४ कामदेव अवतार ११ रुद्रावतार (क्रूर-कर्मी) होते हैं।

५ पांचवां आरा दुखमा कहलाता है, इस में दुःख ही दुःख होता है।'समय प्रमाण २१ हजार वर्ष का होता है। इसको पंचम काल और कलियुग भी कहते हैं। चौथे आरे के अन्तिम तीर्थंकर धर्मावतार भगवान् महावीर स्वामी के निर्वाण मोक्ष जाने के तीन वर्ष साढे आठ महीने पश्चात् पंचम आरा कलियुग लगा है और यह अवनति काल है।

६ छठा आरा दुखमा दुखमा कहलाता है। काल प्रमाण २१ हजार वर्ष का होता है। इस आरे का प्रथम दिन लगते ही भरत क्षेत्र के वैताड पर्वत के आसपास क्षेत्र को छोड़कर अर्ध भरत से न्यून सर्व क्षेत्रों में प्रलय होती है। २१ हजार वर्ष तक प्रलय रहता है। इस में राजनीति धमनीति कुछ नहीं होती है। वैताड पर्वत के आसपास भी प्राणी मात्र क

महा कष्ट होता है। सब मिलकर दश कोडाकोड सागर का अवसर्पणि काल है। इसी तरह १० कोडाकोड सागर की उत्सर्पिणी काल है ; वह इस तरह है—

पहिला दुषमा-दुषमा अवसर्पणि के छठे आरे की मानिन्द यह भी २१ हजार वर्ष का होता है और प्रलय काल भी रहता है। दूसरा आरा दुषमा २१ हजार वर्ष का अवसर्पणि काल क पांचवे आरे के समान विशेषताएं होती हैं। उन्नति कर समय है। तीसरा आरा ४२ हजार वर्ष कम एक कोडा कोड सागर का होता है, अवसर्पिणि काल के चौथे आरे की तरह २३ धर्मावतार ११ चक्रवर्ती ६ बलदेव, ६ वासुदेव आदि होते हैं। चौथा आरा दो कोडा कोड सागर का होता है। दुखमा सुखमा अवसर्पणि काल के तीसरे आरे की तरह एक धर्मावतार एक चक्रवर्ती होता है। इसके पिछले भाग में अकर्म भूमि युगलिए मनुष्य हो जाते हैं।

पांचवा आरा सुखमा अवसर्पणि के दूसरे आरे की तरह तीन कोडा कोड सागर का।

छठा आरा—सुखमा-सुखमा अवसर्पणि के प्रथम आरे की तरह चार कोडा कोड सागरोपम का होता है।

दश कोडा कोड सागर का अवसर्पिणी काल और दश कोडा कोड सागर सागर का उत्सर्पणि काल २० कोडा कोड सागर का एक काल चक होता है। ऐसे अनन्त काल चक्र बीत गये और अनन्त बीतेंगे। अनादि अनन्त यही नियम है।

* चौबीस तीर्थंकरों (धर्मावतार) का परिचय *

भगवान् ऋषभदेवजी तीसरे आरे के अंत में हुए इनके सौ पुत्र थे, जिस में भरत महाराज प्रथम चक्रवर्ती हुए। भरत

महाराज के बड़े पुत्र सूर्यकुमार राज्य के अधिकारी हुए। इन से सूर्यवंश चला है। रामचन्द्रजी भी इसी वंश के थे।

भगवान् ऋषभदेवजी के निर्वाण पद को प्राप्त करने के पश्चात लाख करोड़ सागरोपम के पश्चात् दुपम सुपमा नामक चौथे आरे में स्वर्ग से चवकर दूसरे तीर्थंकर पद के भावी अधिकारी श्री अजितनाथ अयोध्या नगरी के राजा जितशत्रु की रानी विजया की कोख में पधारे। इनका जन्म माघ शुक्ला ८ को हुवा। यहां उन्होंने एकहत्तर लाख पूर्व तक गृहस्थोचित राजसुखों का उपभोग किया। तदुपरान्त माघ शुक्ला ९ को अपनी राजधानी ही के उपवन में संसार के प्रति उपराम हो जाने पर इन्होंने दीक्षा व्रत ग्रहण किया। दीक्षा व्रत के बारह वर्ष पीछे पौष कृष्ण ११ को इन्हें केवल ज्ञान प्राप्त हुआ। तदनन्तर एक लाख पूर्व तक चरित्र का पालन करते रहे और जब सम्पूर्ण कर्मों का नाश कर चुके तब चैत्रशुक्ल ५ को मोक्ष पधारे। गुण संपन्न नाम इस कारण रक्खा कि जब यह गर्भ में थे तो इनकी माता इनके पिता के साथ सदा पासों का खेल खेला करती थी। उसमें वह कभी भी पराजित नहीं हुई और यही कारण है कि उसका नाम 'अजितनाथ' रखा गया। इनके समय में इनके चचा सुमित्र का सुपुत्र सागर हुआ जो आगे चक्रवर्ती राजा हुआ।

दूसरे तीर्थंकर अजितनाथ जी के निर्वाण पधारने के ३० लाख करोड़ सागरोपम के पश्चात् तीसरे तीर्थंकर श्री संभवनाथ जी इस लोक में पधारे। इनका जन्म माघ शुक्ला १४ को हुआ था। श्रावस्ती नगरी के जितारी राजा और सेवा रानी इनके पिता माता थे। उनसठ लाख पूर्व गृहस्थाश्रम में बीते। अगहन शुक्ल १५ को अपनी जन्म भूमि ही के उपवन में जाकर दीक्षा ग्रहण की। यों जब दीक्षित होने को पूरे चौदह वर्ष हो गये।

कार्तिक कृष्ण ४ को इन्हें केवल ज्ञान प्राप्त हुआ। इस के पश्चात् एक लक्ष पूर्व तक आपने चारित्र का पालन किया और जब सारे कर्म क्षय हो गये तब यह चैत्र शुक्ल ४ को मुक्ति में पधारे। जब आप गर्भ में आये थे, उस समय चारों ओर सुकाल सुख और शान्ति की संभावना होने लगी। बस इसी तत्कालीन परिस्थिति को देखकर इनका नाम संभवनाथजी दिया गया।

इन तीसरे तीर्थंकर के निर्वाण पद को प्राप्त करने के बाद दश लाख करोड सागरोपम का समय बीत जाने के बाद माघ शुक्ल १ को अयोध्या में राजा संवर की सिद्धार्थ रानी की कोख से श्री अभिनन्दन जी चौथे तीर्थंकर का जन्म हुआ। कहते हैं कि इनके गर्भ में पधारने और जन्म ग्रहण करने के बीच वाले अवसर में राजा संवर की शासन नीति से अति ही प्रसन्न होकर चारों ओर के आश्रित माण्डलिक राजाओं ने उन को अभिनन्दन पत्र भेंट कर उनके लिये अपनी कृतज्ञता प्रकट की। इस के लिए उनकी प्रजा ने उन दिनों बड़ा ही आनन्द मनाया और उसी उमड़े हुए चहु ओर के आनन्द का अनुमान कर माता पिता ने नवजात राज कुमार का नाम अभिनन्दन रख दिया। एक दिन माघ शुक्ला १२ को अपनी पैतृक सम्पत्ति का उनचास लाख पूर्व तक राजोचित सुख भोगने के पश्चात् इन्होंने अयोध्या के निकटवर्ती उपवन में दीक्षा ग्रहण की। इस के अठाईस वर्ष बाद पौष कृष्णा १४ को केवल ज्ञान की इन्हें प्राप्ति हुई। यों एक लाख पूर्व के अपने दीक्षा व्रत से सम्पूर्ण कर्मों का क्षय कर वैशाख शुक्ल ८ को मोक्ष पधारे।

चौथे तीर्थंकर मुक्ति में पधार जाने के नौलाख करोड सागरोपम के पीछे एक दिन वैशाख शुक्ल ८ को अयोध्या के तत्कालीन राजा मेघ की रानी मंगला की कोख से पांचवें तीर्थंकर

सुमतिनाथ का जन्म हुआ। आप उनतालीस लाख पूर्व तक गृहस्थाश्रम में रहे फिर वैशाख शुक्ल ६ को अयोध्या के उपवन में आपने दीक्षा व्रत लिया। उसके ठीक वीस वर्ष पश्चात चैत्र शुक्ला ११ को आपने केवल ज्ञान प्राप्त किया। इस के पश्चात् इन्होंने भी एक लाख पूर्व तक दीक्षाव्रत का पालन कर और अपने शुक्ल ध्यान के वल से सम्पूर्ण कर्मों का क्षय कर चैत्र शुक्ला ६ के दिन मुक्ति में पधारे। जब आप गर्भ में थे, इनकी माता ने वड़ा ही सुन्दर न्याय किया था। वह इस प्रकार था—एक मनुष्य के दो स्त्रियां और एक पुत्र था। इस बालक का पिता बचपन से ही मर चुका था। उपमाता माता से भी अधिक स्नेह उस बालक पर करती थी। बालक माता और उपमाता को भी मार कह कर ही पुकारता था। कुछ समय बाद उन दोनों स्त्रियों में विरोध हो गया। अन्त में दोनों के बीच झगड़ा इतना बढ़ा कि उन दोनों में से प्रत्येक पुत्र को मेरा-मेरा कह कर बड़े ही जो से झगड़ने लगी। अन्त में निश्चय आपस में कोई भी न होता देख उन मे से हर एक न्यायाधीश के पास गई। राजा ने विद्वानों की सभा में बैठ कर दोनों की अलग अलग बातें सुनीं। बालक से पूछा गया। बालक ने उत्तर में दोनों को अपनी माताएं बताई यहां उपमाता पर और भी गहरा प्रेम प्रकट किया। राजा और उसकी सभा के विद्वान् बड़े ही आश्चर्य में पड़ गये और अंतिम निर्णय नहीं दे सके। रानी ने भी यह विचित्र घटना राजा द्वारा सुनी। रानी ने इस उलझन का सुनते ही सुलझा लिया।

उसने कहा दोनों स्त्रियों से कह दिया जाय कि -जो उसके पति की सम्पत्ति है उसके और इस पुत्र के यों दोनों वस्तुओं के समान दो-दो भाग कर दिये जांय। पश्चात् जो भाग जिसको स्वीकार हो वह ले ले। यह बात सुनकर जो उपमाता होगी वह चुप रह जायगी। परन्तु जो बालक की माता होगी वह शीघ्र कह देगी कि मुझको तो सम्पत्ति भी चाहे न दी जाय परन्तु मेरे बालक को किसी भी प्रकार सुरक्षित रखा जाय। उसके दो विभाग किसी हालत मे न किये जांय। चाह फिर उसे भी उपमाता का ही सौंप दिया जाय। उसके जीवित रहने से किसी समय देख तो लूंगी। इस प्रकार से माता एवं उपमाता दोनों का पता लग जायगा। रानी की यह सम्मति राजा ने भी स्वीकार कर ली। उसने जा कर वैसा ही फैसला किया। रानी के कथनानुसार फैसला सुनाते ही बालक की माता और उपमाता का पता लग गया। तब तो राजा एवं राजसभा ने एक स्वर मे रानी की बुद्धि की प्रशंसा की। उसी दिन से राजा और उसके दरबारियों के द्वारा रानी के भावी पुत्र का नाम सुमति रखने का निश्चय हुआ।

पाचवे तीर्थंकर सुमतिनाथ जी के निर्वाण के नव्वे हजार करोड सागरोपम के पश्चात् कार्तिक कृष्णा १२ को कौशाम्बी नगरी के राजा, श्रीधर की रानी सुसीमा की कोख से भगवान् पद्म प्रभु छठे तीर्थंकर का जन्म हुआ। आप उनतीस लाख पूर्व तक गृहस्थाश्रम मे रहे। फिर आपने कौशाम्बी के उपवन में जाकर कार्तिक कृष्णा ३१ को दीक्षा ग्रहण की, चैत्र शुक्ल १५

को अनुमान छः मास बाद आपको केवल ज्ञान की- प्राप्ति- हुई। एक लाख पूर्व चरित्र पाला और अपने कर्मों का क्षय कर मार्गशीर्ष कृष्णा ११ के दिन मुक्ति को प्राप्त किया था।

नौ हजार करोड सागरोपम जब छठे तीर्थंकर के निर्वाण का काल बीत चुका, उस समय ज्येष्ठ शुक्ला १२ को वाराणसी नगरी जिसे आज काशी या बनारस भी कहते हैं—में राजा प्रतिष्ठ के घर एक बड़े ही सुन्दर सबल और दिव्य शरीरी बालक की उत्पत्ति हुई। माता और पुत्र के नाम क्रमशः पृथ्वी देवी और सुपार्श्व थे। यह ही आगे चलकर सुपार्श्वनाथ नाम के सातवें तीर्थंकर हुए। इन्होंने उन्नीस लाख पूर्व गृहस्थाश्रम में रह कर वाराणसी के उपवन में ज्येष्ठ सुदि १३ को दीक्षा ग्रहण की। इसके नौ मास बाद फाल्गुण कृष्णा ६ के दिन आपको केवल ज्ञान की प्रप्ति हो जाने पर सम्पूर्ण कर्मों का क्षय करके फाल्गुण कृष्णा ७ को निर्वाण पद प्राप्त किया।

सातवें तीर्थंकर के निर्वाण पद में पधारने को जब सौ करोड़ सागरोपम बीत चुके थे तब पौष कृष्णा १२ को चन्द्रपुरी नगरी में महासेन राजा के यहां रानी लक्ष्मणा के गर्भ से आठवें तर्थंकर भगवान् चन्द्रप्रभु का जन्म हुआ। ये नौ लाख पूर्व संसार में रहे। पौष कृष्ण १३ को चन्द्रपुरी के उपवन में दीक्षा ग्रहण की। उसी वर्ष फल्गुण कृष्णा ७ को इन्हें केवल ज्ञान की प्राप्ति हुई। एक लाख पूर्व चारित्र पाला फिर अपने सम्पूर्ण कर्मों का क्षय कर, यह भाद्रपद कृष्णा ७ को परम पद मोक्ष के अधिकारी बने।

आठवें तीर्थंकर के निर्वाण पद की प्राप्ति के नव्वे करोड़ सागरोपम के बाद अगहन कृष्ण ५ को काकन्दी नगरी में राजा सुग्रीव के घर उनकी रामा नामक रानी की कोख से नवें तीर्थंकर श्री सुविधिनाथ जी का जन्म हुआ। आप एक लाख पूर्व तक संसार में रहे फिर उसी नगरी के उपवन में अगहन कृष्ण ६ को दीक्षा ग्रहण की। दीक्षा ग्रहण करने के चार मास बाद कार्तिक शुक्ल ३ को केवल ज्ञान प्राप्त हुआ। एक लाख पूर्व तक चारित्र पाला और अपने सम्पूर्ण कर्मों का क्षय कर भाद्रपद शुक्ला ९ को मोक्ष में पधारे।

दशवें तीर्थंकर श्री शीतलनाथ जी थे। इनका जन्म नौवें तीर्थंकर के परम पद प्राप्त करने के करोड़ सागरोपम के पीछे का है। उस दिन माघ कृष्ण १२ का दिन था। इनके पिता दृढ़-रथ और माता नन्दादेवी थी। गृहस्थाश्रम में रह कर इन्होंने पचहत्तर हजार पूर्व बिताये। तब संसार से चित्त की उपराम अवस्था में अपनी राजधानी ही के उपवन में माघ कृष्ण १२ को दीक्षा ग्रहण की। इसके पश्चात् दूसरे वर्ष के पौष कृष्ण १४ को केवल ज्ञान की प्राप्ति हुई और पच्चीस हजार पूर्व चारित्र पाला फिर यह अपने सम्पूर्ण कर्मों का क्षय करके वैशाख कृष्ण २ को मुक्ति में पधारे।

ग्यारहवे तीर्थंकर श्रेयासनाथ जी थे, इन का जन्म फाल्गुन कृष्ण १२ को दशवें तीर्थंकर के निर्वाण काल के सौ सागर छियासठ लाख छब्बीस हजार वर्ष न्यून एक करोड़ सागरोपम के

पश्चात् सिंहपुरी नगरी में हुआ। इनके पिता विष्णु जी एवं माता श्रीमती विष्णुदेवी थे। ६३ लाख पूर्व तक संसार में रहे। फाल्गुण कृष्ण ३ को केवल ज्ञान की प्राप्ति हुई और इक्कीस लाखपूर्व चारित्र पाला। फिर अपने संम्पूर्ण कर्मों का नाश करके मोक्ष पद को प्राप्त किया। इन के समय में त्रिपृष्ठ नामके वासुदेव हुए जिन के भाई का नाम अचल था। उसी काल में रत्नपुर में अश्वग्रीव नामक प्रतिवासुदेव राज्य करते थे। त्रिपृष्ठने अश्वग्रीव को पराजित कर उसके सारे राज्य को अपने राज्य में मिला लिया था। इस बात का विशेष उल्लेख श्री वीर-चरित्र भगवान् महावीर के पूर्व भवों का परिचय में पाठकों क मिलेगा।

ग्यारहवें तीर्थंकर के निर्वाण पद प्राप्त कर लेने के चौपन सागरोपम के पश्चात् फालगुण कृष्ण १४ के दिन चम्पापुरी नाम की नगरी में बारहवें तीर्थंकर श्री वासुपूज्य जी का जन्म हुआ। इनके वसुदेव पिता और जयदेवी माता थी। और यह उसी के राजा रानी थे। भगवान् वासुपूज्य ने अठारह लाख पूर्व तक संसार में रह कर फाल्गुण कृष्ण १५ को अपनी ही राजधानी के उपवन में दीक्षा ग्रहण की। उसके बाद माघ शुक्ल २ को इन्हें केवल ज्ञान हुवा। इन्हों ने चौपन लाख पूर्व तक चारित्र पाला। आषाढ शुक्ल १४ को मोक्ष पद में पधारे। इन्हों के समय में द्वारिका के राजा ब्रह्मदेव की रानी सुभद्रा से विजय नामक बल-देव का जन्म हुआ। उमा इसी राजा की दूसरी रानी थी उसके

गर्भ से द्विपृष्ठ पैदा हुआ । दूसरी ओर विजयपुर में श्रीधर राजा राज्य करता था। श्रीमती उसकी एक रानी का नाम था। इसी श्रीमती रानी से तारक नामक बालक पैदा हुआ। जिन्होंने आगे चलकर प्रति वासुदेव का पद पाया। इसी तारक को युद्ध में पराजित कर और मारकर द्विपृष्ठ ने तीन खंड का राज्य पाया और वह दूसरे वासुदेव बने।

तेरहवें तीर्थंकर श्री विमलनाथ जी थे। इनका जन्म बारहवे तीर्थंकर के निर्वाण हो जाने के तीस सागरोपम के पश्चात् माघ शुक्ल ३ को हुआ था। कम्पिलपुरी इनकी जन्म भूमि थी। इनकी माता वहां की रानी थी और पिता राजा थे। कृतवर्मा पिता का नाम और श्यामादेवी माता का नाम था। पैंतालीस लाख वर्ष तक राजपाट का सुख भोगा। फिर भव बंधन से छुटकारा पाने के लिये माघ शुक्ल ४ को अपनी राज धानी ही के उपवन में जाकर उन्होंने दीक्षा ली। पश्चात् पौष शुक्ल ६ को केवल ज्ञान इन्हें हुआ। पन्द्रह लाख वर्षों तक चारित्र पाला। बाद में सम्पूर्ण कर्मों का क्षय करके आषाढ कृष्ण ७ को मोक्ष पधारे। जब ये गर्भावस्था में थे, उससमय एक पुरुष अपनी स्त्री को ससुराल से लेकर आ रहा था। मार्ग में एक स्थान पर वह प्यास से व्याकुल हो पानी पीने के लिये उतरी। इतने में एक व्यन्तरी उस स्त्री की भांति रूप बनाकर उसके पति के पास आकर बोली—चलो—यहा ठहरने की जगह नहीं है। इस ठौर व्यन्तरियों का भयंकर प्रचार है। तब तो यह पुरुष और

व्यन्तरी शीघ्र ही वहां से चले। इतने में ही उस पुरुष की वह असली स्त्री जा दूर ही से इस सारी बात को देख रही थी, हांपते कांपते उनके पास आई और बोली-अजी मुझ अनाथिनी को इस निर्जन वन में आप कहां छोड़ रहे हो। आपके साथ जो स्त्री लग गई है वह आपकी स्त्री नहीं है। अब तो व्यन्तरी ने अपने वचनों को सत्य सिद्ध करने के लिए समय विचारा और तत्काल ही उस पुरुष के प्रति बोली-मैंने जो कहा था वही हुआ ना। अब भी यहां से जल्दी निकल भागो नहीं तो जीना भी कठिन हो जायगा। इस आश्चर्य वाली बात को देखकर वह बड़ा भयभीत हो गया एवं असमजस में पड़ गया। वह वहां से चलने की तैयारी ही में था कि इतने में उसकी असली स्त्री ने उस व्यन्तरी का हाथ पकड़ लिया, तब तो परस्पर वाद विवाद करने लग पड़ी कि मैं हूँ मुख्य स्त्री और दूसरी कहती है कि मैं हूँ मुख्य स्त्री। ऐसा कहकर हाथा पाई करने लगी, अन्त में वह पुरुष न्याय की याचना करने के लिये उन दोनों को राजा के पास ले गया और सारा वृत्तान्त कह सुनाया, उनका रंग-ढंग बोल एक सा देखकर राजा भी आश्चर्य में पड़ गया कि न्याय क्या दिया जाय। अन्त में राजा ने रानी को यह बात कही दूसरे दिन रानी ने उसका ठीक न्याय कर दिया।

भद्र नाम का बलदेव इन्हीं का समकालीन था। द्वारावती के राजा रुद्र और उनकी रानी सुभद्रा उन के माता पिता थे। स्वयंभू नामक वासुदेव *का जन्म इसी राजा की दूसरी रानी

पृथ्वी के गर्भ से हुआ था। मेरक नामक प्रतिवासुदेव भी पूर्वजात हुवा था। यह वंदन पुर निवासी और समर केशी राजा के पुत्र थे। माता का सुन्दरी नाम था स्वयंभू मेरुक नामक प्रतिवासुदेव को युद्ध में संहार करके तीन खण्ड के अधिपति बने। यह तीसरे वासुदेव थे।

तेरहवें तीर्थंकर के मोक्ष पधारे ६ सागरोपम व्यतीत हो चुका। बाद म वैशाख कृष्ण १३ को अयोध्या में १४ वें तीर्थंकर श्री अनत नाथ जी का जन्म हुआ। इन्होंने साढ़े बारह लाख वर्ष राज सुख भोगा, फिर संसार के आवागमन से छूटने के लिये वैशाख कृष्ण १४ को उपवन में दीक्षा अंगीकार की। वैशाख कृष्ण १४ को केवल ज्ञान की प्राप्ति हुई। सिंहसेन पिता और सुयशा माता थी। साढ़े सात लाख वर्ष तक श्री अनंतनाथजी ने दीक्षा व्रत पाला अन्त में सम्पूर्ण कर्म क्षय करके चैत्र शुक्ला ४ को मोक्ष पद को प्राप्त हुए।

द्वारावती के राजा सोम की रानी सुदर्शना के सुप्रभ नाम का बलदेव इन्हीं के समय हुआ था। इसी राजा को दूसरी रानी सीता के गर्भ से पुरुषोत्तम नामक चौथे वासुदेव का जन्म हुवा, उस समय पृथ्वीपुर का विलास राजा गुणवती रानी से पैदा हुआ मधुक नामक प्रतिवासुदेव राज करता था। पुरुषोत्तम वासुदेव ने मधुक प्रतिवासुदेव का मारकर तीन खण्ड का राज किया। चार सागरोपम का समय जब चौदहवें तीर्थंकर को निर्वाण पद प्राप्त किये हो गया तब माघ शुक्ल ३ के दिन रतनपुरी नगरी में १५

वें तीर्थंकर श्री धर्मनाथजी का जन्म हुवा, भानु राजा पिता और सुव्रता रानी माता थी। अनुमान नौ लाख वर्ष तक संसार में रहे। रतनपुरी के उपवन में दीक्षा ग्रहण की। माघ कृष्ण १३ को दो वर्ष के आसपास दीक्षा को हुवे ही होंगे तो पौष शुक्ल १४ को केवल ज्ञान की प्राप्ति हो गई। एक लाख वर्ष चरित्र का पालन किया अंत में कर्म क्षय करके ज्येष्ठ शुक्ल ५ का मोक्ष पधारे। इन्हीं के समय अश्वपुर के राजा शिव के दो रानियों से दो पुत्र पैदा हुए। विजया के गर्भ से सुदर्शन बलदेव और अम्बिका के गर्भ से पुरुषसिंह नामक पांचवें वासुदेव हुए। और हरिपुर में निशुम्भ प्रति वासुदेव हुआ। पुरुषसिंह ने निशुम्भ को मार के तीन खंड का राज किया।

पंद्रहवें तीर्थंकर के पश्चात् और सोलहवें तीर्थंकर के पहले श्रावस्ती नगरी में राजा समुद्र विजय की भद्रा रानी के गर्भ से माघवा नामक तीसरे चक्रवर्ती का जन्म हुवा। इनके मोक्ष में जाने के कुछ समय बाद हस्तिनापुर में अश्वसेन राजा सहदेवी रानी के संतकुमार सम्राट् ४ चौथे चक्रवर्ती हुऐ।

पंद्रहवें तीर्थंकर के मोक्ष में जाने के पौन पल्योपम न्यून तीन सागरोपम के पश्चात् ज्येष्ठ कृष्ण १३ को शांतिनाथजी ने गज-पुर में विश्वसेन राजा पिता और अचिरादेवी रानी माता के यहां जन्म लिया। आप पांचवें चक्रवर्ती हुए। ७५ हजार वर्ष गृहस्थ में रहे, फिर एक वर्ष दान देकर नगरी के उपवन में ज्येष्ठ कृष्ण ४ को दीक्षा ली। अनुमान १ वर्ष के बाद पौष शुक्ल ६ को केवल

ज्ञान हुआ। आप १६ वें तीर्थंकर हुए। २५ हजार वर्ष तक दीक्षा पाली। अन्त में सर्व कर्म क्षय करके ज्येष्ठ कृष्णा १३ को मोक्ष में गये।

श्री शांतिनाथ जी सोलहवें तीर्थंकर के निर्वाणकाल के आधा पल्योपम का समय बीत जाने के पश्चात् गजपुर में सूर राजा और श्री नाम की रानी से वैशाख कृष्ण १४ को सतरहवें तीर्थंकर श्री कुंथुनाथजी का जन्म हुवा। आप इकहत्तर हजार दोसौ पचास वर्ष गृहस्थाश्रम में रहे। पश्चात् गजपुर के उपवन में चैत्र कृष्ण ५ को दीक्षा ग्रहण की। दीक्षा के १६ वर्ष बाद चैत्र शुक्ल ३ को केवल ज्ञान हुआ। ७३ हजार सात सो पचास वर्ष तक दीक्षा पाली फिर वैशाख कृष्ण १ को मोक्ष प्राप्त किया। आप तीर्थंकर पद से पहले ६ ट्ठे चक्रवर्ती थे। भारत वर्ष के सम्पूर्ण छः खंडों का राज किया।

१७ वें तीर्थंकर को निर्वाण पद प्राप्त किये जब एक करोड़ एक हजार वर्ष न्यून पाव पलोपम का समय बीत गया तब अगहन शुक्ल १० को गजपुरी में राजा सुदर्शन की रानी देवी देवकी से १८ वें तीर्थंकर श्री अरहनाथ जी का जन्म हुआ। आप ६३ हजार वर्ष गृहस्थ में रहे। सातवें चक्रवर्ती बनकर छः खण्डों का राज किया। पश्चात् अगहन शुक्ल ११ को गजपुर के उपवन में दीक्षा ली। दीक्षा के ३०० वर्ष पीछे कार्तिक शुक्ला १२ को केवल ज्ञान हुआ। इक्कीस हजार वर्ष तक चारित्र का पालन किया। अगहन शुक्ला १० को मोक्ष पधारे। इनके निर्वाण होने के पश्चात्

और उन्नीसवें तीर्थंकर के जन्म से पहिले कीर्तिवीर्य राजा तारा रानी माता के संभुम नामा चक्रवर्ती हुआ। ६ खण्ड का राज किया, सातवां खंड साधना की लालसा में समुद्र मे डूब कर मर गये। सातमी नर्क मे जा पहुंचे। इस घटना के कुछ ही समय पश्चात् काशी के राजा अग्निसिंह की रानी जयंति से नन्दन नामक सातवें बलदेव, दूसरी रानी शीलवी के गर्भ से दत्त नामक सातवे वासुदेव उत्पन्न हुए और पूर्वजात इनका समकालीन सिंहपुर में प्रह्लाद राजा प्रति वासुदेव राज करता था। दत्त वासुदेव ने प्रल्हाद को मार कर ३ खंड का राज किया।

अठारहवें तीर्थंकर के निर्वाण पद पाने के एक करोड़ एक हजार वर्ष पीछे मिथिला नगरी के कुम्भकार राजा की प्रभावती रानी से अगहन शुक्ल ११ को उन्नीसवे तीर्थंकर श्री मल्लीनाथ जी का जन्म हुआ। सौ वर्ष तक गृहस्थ में रहे। मिथिला के उपवन में अगहन शुक्ला ११ को दीक्षा ली। उसी दिन केवल ज्ञान की प्राप्ति हुई। तब से पूरे ५३ हजार ६ सौ वर्ष तक दीक्षा पाली। फाल्गुन शुक्ल १२ को मोक्ष प्राप्त किया।

चौपन लाख वर्ष समय जब उन्नीसवें तीर्थंकर को मोक्ष पधारे बीत गया तब राजग्रही नगरी में सुमित्र राजा के पद्मावती रानी से बीसवें तीर्थंकर श्री मुनिसुव्रत स्वामी ज्येष्ठ कृष्णा ८ को जन्म। यह साढे बाईस हजार वर्ष गृहस्थाश्रम मे रहे। पश्चात् फाल्गुन शुक्ला १२ को अपनी राजधानी के उपवन म दीक्षा ली। अनुमान ११ महीनों के पश्चात् केवल ज्ञान प्राप्त

किया। साढे सातसौ वर्ष तक दीक्षा पाली। सर्व कर्म क्षय करके ज्येष्ठ कृष्ण ६ को मोक्ष में पधारे।

इन्हीं के समकालीन ६ नौवे चक्रवर्ती महापद्म हुवे। हस्तिनापुर नगर पद्मोत्तर राजा ज्वाला रानी माता थी। अन्त में दीक्षा धारण कर के मोक्ष में गये। महापद्म चक्रवर्ती के कुछ ही काल के पश्चात् अयोध्या के राजा दशरथ पिता अपराजिता रानी की कुक्ष से आठवें बलदेव श्री रामचन्द्रजी पैदा हुए। दूसरी रानी सुमित्रा इसका वास्तव में कैकेयी नाम था परन्तु जब कैकेयी रानी भरत की माता का विवाह राजा दशरथ से स्वयंवर मंडप करके हुआ उस समय दो कैकयी होने के कारण प्रथम का सुमित्रा रख दिया। इसलिए यह सुमित्रा के नाम से प्रसिद्ध हुई। सुमित्रा के अष्टम वासुदेव श्री लक्ष्मणजी हुवे। (इन को नारायण भी कहते हैं)। तीसरी रानी कैकेयी के भरत राजकुमार हुआ। चौथी सुप्रभा रानी से शत्रुघ्नजी हुवे उस समय इन से पूर्वजात लङ्कापुरी में राजा रत्नश्रवा पिता और कैकसी माता से पैदा हुवा दशकन्धर राजा प्रतिवासुदेव लंका का क्या तीन खंड का अधिपति था। लक्ष्मण जी रावण को मार और तीन खंड के अधिपति बने।

श्रीमद तीर्थंकर को मोक्ष में गये छः लाख वर्ष हुवे ही थे कि श्रावण कृष्ण अष्टमी को मथुरापुरी में विजय राजा और विप्रा देवी माता के इक्कीसवें तीर्थंकर श्री नमिनाथ जी का जन्म हुआ। १ हजार वर्ष तक गृहस्थ में रहे। फिर आषाढ़ कृष्ण ६ को मथुरा

नगरी के उपवन में दीक्षा ग्रहण की। नौ महीने बाद अगहन शुक्ला ११ को केवल ज्ञान की प्राप्ति हुई। एक हजार वर्ष तक चारित्र पाला। पश्चात् वैशाख कृष्ण १० को मोक्ष में पधारे।

इक्कीसवें श्री नमिनाथ तीर्थंकर के ही समय कम्पिल नगर में महा हरी राजा मेरा देवी माता के हरीषेण नामक १० वें चक्रवर्ती हुये। दीक्षा लेकर यह भी मोक्ष में गये।

इनके कुछ समय बाद राजग्रही नगरी में विजय राजा वप्रावती रानी के जयसेन नामक राजकुमार हुआ और आगे चल कर ११ वें चक्रवर्ती जयसेन हुआ। यह भी राज छोड़ दीक्षा लेकर मोक्ष पहुँचे।

इक्कीसवें तीर्थंकर के निर्वाण पाने के पांच लाख वर्ष के पश्चात् राजा समुद्र विजय की शीवादेवी रानी से श्रावण शुक्ला ५ को २२ वें तीर्थंकर श्री नेमिनाथ जी हुए। आप ३०० वर्ष गृहस्थाश्रम में रहे। विवाह न करते हुए एक वर्ष दान देकर अपनी राजधानी के उपवन मे श्रावण शुक्ला ६ को दीक्षा ली। ५४ दिन के पश्चात् क्वांर कृष्ण अमावस्या को केवल ज्ञान होगया। सात सौ वर्ष तक दीक्षा पाली। सर्व कर्म क्षय करके, आषाढ़ शुक्ला ८ को मोक्ष पधारे। ग्यारहवें चक्रवर्ती महाराज जयसेन के निर्वाण के हजारों वर्ष बीत जाने के पश्चात् हरीवंश में यदुनामक राजा हुआ। यदु के शौरी और सुवीर नाम के दो पुत्र हुए। शौरी के पुत्र अंधक विष्णु। अंधक के दश पुत्र हुए। जो शास्त्र में दशोंदशार के नाम से प्रसिद्ध हैं। इन दशों में से छोटे एक भाई का नाम वसुदेव

था। वसुदेव की रोहिणी नाम की रानी से नौंवे बलदेव बलभद्र जी हुए। और दूसरी देवकी रानी से नौंवे वासुदेव श्रीकृष्ण महाराज हुए। दूसरे सुवीर के पुत्र का नाम भोज विष्णु था। उसके उग्रसेन और देवक दो पुत्र थे। उग्रसेन के एक पुत्र कंस, और दूसरी पुत्री राजुलमति नाम की हुई। उधर देवक के देवकी नाम की पुत्री हुई। इसी देवकी का विवाह वसुदेव जी से हुआ था। कृष्ण ने कंस को मार मथुरा पर अधिकार जमाया ही था कि जरासिंध के भय से, समुद्र विजय आदि सब दौड़-भाग कर समुद्र के किनारे आये। वहां द्वारिका नगरी बसाई। दशों दशारों में बड़े भाई समुद्र विजय थे। कृष्ण महाराज के ताया और यही राजा थे। समुद्र विजय की शिवादेवी रानी से बाइसवें तीर्थंकर श्री अरिष्टनेमि जी जन्मे। अरिष्टनेमि भगवान् के पास कृष्ण महाराज के छोटे भाई गजसुकुमाल ने दीक्षा ली और जल्दी ही कर्म काट के मोक्ष में पधार गये।

जरासिंध प्रतिवासुदेव से कृष्ण महाराज का युद्ध हुआ। जरासिंध को मार कर कृष्ण वासुदेव तीन खंड के राजा बने।

अरिष्टनेमि के मोक्ष में पधारने के कुछ समय ही पीछे ब्रह्म नामक राजा चुलनी रानी माता के ब्रह्मदत्त का जन्म हुआ। समय पाकर ब्रह्मदत्त बारहवें चक्रवर्ती हुवे। और भोगों में आसक्त बन कर अन्त मृत्यु पाकर सातमी नर्क में गये। जहा उत्कृष्टी तेतीस सागर की उम्र है।

बाइसवें तीर्थंकर के मोक्ष में पधार जाने के पौने चौरासी हजार वर्ष के पश्चात् बनारसी नगरी में अश्वसेन राजा रानी वामादेवी के तेईसवें तीर्थंकर श्री पार्श्वनाथ जी पौष कृष्ण १० को हुए। ३० वर्ष पर्यन्त गृहस्थाश्रम में रहे। बाद में पौष कृष्ण एकादशी को बनारसी के पास उपवन मे दीक्षा ली। दीक्षा के चौरासी दिन बाद केवल ज्ञान हुआ चैत्र कृष्ण ४ को और सत्तर वर्ष तक संयम पाला। सब कर्म क्षय करके श्रावण शुक्ला अष्टमी को मोक्ष पधारे। दीक्षा धारण के बाद देवता द्वारा पार्श्व-नाथ भगवान् को उपसर्ग हुआ था।

ईसा से ८०० वर्ष पूर्व का अनुमान लगाया जाता है कि ऐतिहासिक लोग गहरी छानबीन के बाद पार्श्व संवत् तक पहुं-चते हैं।

तेइस २३ वें श्री पार्श्वनाथ भगवान् के मोक्ष प्राप्त करने के अनुमान २५० वर्ष के बाद श्री महावीर स्वामी मोक्ष में पधारे। क्षत्री कुंड नगर में सिद्धार्थ भूप एवं त्रिशला देवीजी की कुख से महावीर का जन्म हुआ। तीस वर्ष पर्यंत गृहस्थाश्रम में रहे। बाद में संयम लेकर साढ़े बारह वर्ष तक घोर तपस्या करके कर्म नाश किये। केवल ज्ञान को प्राप्त किया। बहत्तर ७२ वर्ष की आयु भोगकर मोक्षपद को प्राप्त किया। चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के रोज आपका जन्म एवं कार्तिक अमावस्या को मोक्षपद प्राप्त हुआ।

चौबीसवें धर्मावतार श्री महावीर स्वामी के मोक्ष प्राप्त करने

के पश्चात् हुवे राजों का वर्णन। श्री महावीर स्वामी के निर्वाण के दूसरे ही दिन अवंती नगरी में पालक का राज्याभिषेक हुवा। पालक ने ६० वर्ष राज किया। पश्चात् १५० वर्ष नन्दों ने राज किया। १६० वर्ष मौर्यों ने राज किया। ३५ वष पुष्यमित्र ने राज किया। ६० वर्ष बल मित्र भानुमित्र ने राज किया। ४० वर्ष नभसेन ने राज किया। १०० वर्ष गर्धभिल्लोंका राज रहा। पश्चात शक राजों का राज हुवा। श्री महावीर स्वामी के निर्वाण हुए ६०५ वर्ष बीतने बाद शक राजा उत्पन्न हुवा।

भरत क्षेत्र के वर्तमान प्रसिद्ध .....१२ चक्रवर्ती।

इस भरत क्षेत्र के छः विभाग हैं, दक्षिण मध्य भाग को आर्य खण्ड व शेष ५ को म्लेच्छ खण्ड कहते हैं। काल का परिवर्तन आर्य खण्ड में ही होता है। म्लेच्छ खण्डों में दुखमा सुखमा काल की कभी उत्कृष्ट और कभी जघन्य रीति रहती है। जो इन छः खण्डों के स्वामी होते हैं उनको चक्रवर्ती राजा कहते हैं। चक्रवर्ती के चौदह रत्न होते हैं। जिस में सात एकेन्द्रिय रत्न अचेतन होते हैं। १ सुदर्शन चक्र, २ छत्र, ३ दण्ड, ४ खड्ग, ५ मणि, ६ चर्म, ७ काकिनी, सात पंचेन्द्रिय चेतन रत्न होते है। १ सेनापति, २ गृहपति, ३ शिल्पी, ४ पुरोहित. ५ पटरानी, ६ हाथी, ७ अश्व। नौ निधान होते हैं १ काल, २ महाकाल, ३ नैसर्प, ४ पाण्डुक, ५ पद्म, ६ माणक, ७ पिंगल, ८ शंख, ९ सर्वरत्न। जो क्रम से पुस्तक असिमसी साधन, भाजन, धान्य, वस्त्र. आयुध, आभूपण वार्दित्र वस्त्रों के भण्डार होते हैं। इन

सब के रक्षक देवता हैं। बतीस हजार देश और बतीस हजार मुकुटबंध राजा इन्हीं के आधीन होते हैं। बतीस हजार देवता आधीन होते हैं, बतीस हजार रानियां, बतीस हजार दासियां यह वास्तव में रानियां ही होती हैं। प्रथम बतीस हजार रानियों में इन का दर्जा कुछ मध्यम होता है। इस लिये ६४००० रानियां होती हैं। बतीस प्रकार के नाटक तीन सौ साठ रस हुए। अठारह श्रेणि प्रश्रेणि आदि राजे, चौरासी लाख अश्व, चौरासी लाख हाथी, चौरासी लाख संग्रामी रथ, चौरासी लाख विकट गाड़ियां, विमानादि का समावेश है। छियानवे करोड़ पदाति सेना, बहत्तर हजार राजधानी, छियानवे करोड़ ग्राम, निन्यानवे हजार द्रोणमुख जैसे बम्बई, कराची आदि आजकल हैं ऐसे नगर, अड़तालीस हजार पट्टन तिजारती नगर जैसे देहली, अमृतसर की तरह, चौबीस हजार कर्वट सेना स्थान (छावनी), चौबीस हजार मंडल बीस हजार सोन चान्दी रत्न लोहादि की खानें, सोलह हजार खेड़े, चौदह हजार संवाद, छप्पन हजार अन्तरोदक अखंड भरतक्षेत्र का ऐश्वर्य भोगने वाले को चक्रवर्ती कहते हैं। छः खंडों के राजाओं को दिग्विजय के द्वारा अपने आधीन करते हैं और न्याय से प्रजा को सुखी करते हुए राज्य करते हैं। ऐसे १२ चक्रवर्ती २४ तीर्थंकरों के समय में नीचे लिखी रीति से हुए हैं।

(१) भरत-ऋषभदेव जी के पुत्र थे बड़े धर्मात्मा थे। एक समय इनको तीन समाचार एक साथ मिले। ऋषभदेव का

केवल ज्ञानी होना आयुधशाला में सुदर्शन चक्र का प्रकट होना, अपने पुत्र का जन्म होना। अपने धर्म को श्रेष्ट समझकर पहिले ऋषभदेव के दर्शन किये फिर लौट कर दोनों लौकिक काम किये। भरत ने दिग्विजय करके भरत खण्ड को वश किया, मुख्य सेनापति हस्तिनापुर का राजा जयकुमार था, छोटे भाई बाहुबली ने इनको सम्राट् नहीं माना, तब इनसे युद्ध ठहरा। मंत्रियों की सम्मति से सेना की व्यर्थ में जिससे किसी भी प्रकार की क्षति न हो, इस कारण परस्पर तीन प्रकार के युद्ध ठहरे। दृष्टियुद्ध, जलयुद्ध एवं मल्लयुद्ध तीनों युद्धों में भरत ने बाहुबली से हारकर क्रोधित हो बाहुबली का कुछ बिगाड़ न सका तो भरत बहुत लज्जित हुए। उधर बाहुबली अपने बड़े भाई भरत की राज्य लक्ष्मी की निन्दा कर तुरन्त साधु हो गया और बहुत कठिन तपश्चर्या करने लगे। एक वर्ष तक लगातार ध्यान में खड़े रहने से इनके शरीर पर बेलें चढ़ गईं। अन्त में केवल ज्ञान प्राप्त कर मोक्ष पधार गये।

भरत बड़े न्यायी थे, इनका बड़ा पुत्र अर्ककीर्ति (सूर्यकुमार) जिससे सूर्यवंश चला है। काशी के राजा प्रकम्पन ने अपनी पुत्री सुलोचना के सम्बन्ध के लिये स्वयम्वर मण्डप रचा तब सुलोचना ने भरत के सेनापति जयकुमार के गले में माला डाली। इस पर अर्ककीर्ति ने रुष्ट होकर झगड़ा किया किन्तु चक्रवर्ती भरत ने अपने पुत्र की अन्याय प्रवृत्ति पर बहुत खेद किया और उसका किसी प्रकार का पक्ष न लेकर उचित न्याय किया।

भरत बड़े आत्मज्ञानी व राज्य करते हुए भी वैरागी थे।

एक वार एक धार्मिक वक्ता ने कहा कि भरत महाराज छः खंड जैसे राज्य में महान् आरम्भ करता है और महा आरम्भ करने वाले की गति नरक होती है। इस बात को भरत जी ने भी सुना उसको समझाने के लिये आपने एक तेल का कटोरा दिया और कहा तू मेरे कटक में घूम आओ किन्तु इस कटोरे में से यदि एक बूंद भी गिरी तो तुझे मृत्यु दण्ड मिलेगा। वह कटोरे को ही देखता लौट आया महाराज ने पूछा कि क्या देखा ? उसने कहा कि मैं कुछ नहीं कह सकता क्योंकि मेरा ध्यान कटोरे में था। यह सुनकर भरत ने कहा कि इसी तरह मेरा ध्यान आत्मविकाश में रहता है। मैं सब कुछ करते हुए भी अलिप्त रहता हूँ। एक दिन प्रातःकाल स्नान करके एवं वस्त्राभूषण धारण करके महाराज भरत आरिसा भवन में गये वहां एक उंगली में से अगूठी गिर गई। विना अ गूठी के उगली भद्दी लगने लगी। तब आपने विचार किया कि यह सब शोभा शरीर की नहीं किन्तु आभूषणों की है। मिथ्या मोह में मुझे क्यों मुग्ध होना चाहिये, ऐसा सोचकर आपने अन्य उंगलियों से अंगूठियाँ निकालना प्रारम्भ किया इससे हाथ विशेप भद्दा हो गया। फिर आपने सब वस्त्र और आभूपण उतार दिये। इससे आपको ज्ञात हुआ कि सब शोभा वस्त्रों और आभूषणों की है। शरीर तो असार है ऐसा विचार करते करते आप शरीर की अनित्यता का चिन्तवन करने लगे और शुक्ल ध्यान की श्रेणी तक चढ़ गये, उसी समय आप के घनघाती कर्मों का

क्षय हो गया। तथा आप केवल ज्ञानी मुनि बन गये। आपके साथ और बहुत भव्य प्राणियों ने दीक्षा ली और सब ने आत्म कल्याण किया।

(२) सगर—यह अजितनाथ जी के समय में हुए। इक्ष्वाकु वंशी पिता समुद्र विजय माता सुबाला थी, सगर के ६०००० पुत्र थे। एक बार इन पुत्रों ने सगर से कहा कि हमें कोई कठिन काम बताइये, तब सगर ने कैलाश के चारों ओर खाई खोदकर गंगा नदी बहाने की आज्ञा दी। वे गये। खाई खोदी तब सगर के पूर्व जन्म के मंत्री मुनिकेतु देव ने अपने वचन अनुसार सगर को वैराग उत्पन्न कराने के लिये उन सर्व कुमारों को अचेत करके सगर के पास आकर यह समाचार कहे कि आपके पुत्र सब मर गये। यह सुनकर सगर को वैराग्य हो गया और भगीरथ को राज्य दे आप साधु हो गये। पुत्र जब सचेत हुए और पिता का साधु होना सुना तो यह भी सर्व त्यागी बन गये।

(३) माघव—यह चक्रवर्ती सगर से बहुत काल पीछे श्री धर्मनाथ जी के मोक्ष हो जाने के बाद हुए। इक्ष्वाकुवंशीय राजा सुमित्र और सुभद्रा के पुत्र थे, अयोध्या राजधानी थी, बहुत काल राज्य कर प्रियमित्र पुत्र को राज देकर साधु हो तप कर मोक्ष पधारे।

(४) सनत्कुमार—कुछ काल बीतने के बाद चौथे चक्रवर्ती अयोध्या के इक्ष्वाकु वंशीय राजा अनन्त वीर्य और रानी सहदेवी के पुत्र आप बड़े न्यायी सम्राट् थे, तथा बड़े रूपवान् थे। एक दिन आपके

रूप की प्रशंसा इन्द्र के मुख से सुनकर एक देव देखने को आया, और देखकर बहुत प्रसन्न हुआ। फिर राज सभा में प्रकट होकर मिलने को गया। उस समय मान के कारण उनकी सुन्दरता में कमी देखकर मस्तक हिलाया, सम्राट् ने मस्तक हिलाने का कारण पूछा। उत्तर में देव द्वारा अपने रूप की क्षण मात्र में ही कम हो जाने की बात सुनकर चक्री को संसार की अनित्यता देख कर वैराग्य हो गया, उसी समय पुत्र देवकुमार को राज्य देकर शिव गुप्त मुनि से दीक्षा ले तप करके मोक्ष पधारे। तप के समय एक बार कर्म के उदय से कुष्टादि भयंकर रोग हो गये। एक देव परीक्षार्थ वैद्य के रूप में आया और कहा कि औषधि लें। मुनि ने उत्तर दिया कि आत्मा के जो जन्म मरणादि रोग हैं यदि उन्हें आप दूर कर सकते हैं तो दूर करें। मैं आपकी दी हुई अन्य वस्तुएँ लेकर क्या करूँगा? देव ने मुनि को चारित्र में दृढ़ देखकर उनकी स्तुति की और अपने स्थान को वापिस चला गया।

(५) १६ वें तर्थंकर श्री शान्ति नाथ जी। यह एक दिन दर्पण में अपने दो मुँह देख संसार को अनित्य विचार अपने नारायण पुत्र को राज्य दे साधु हो गये। आठ वर्ष पीछे ही केवली हो अन्त में मोक्ष पधारे।

(६) १७ वें तीर्थंकर श्री कुंथुनाथ जी एक दिन वन में क्रीड़ा करने गये थे। लौटते समय एक साधु को देखकर वैरागी हो गये। १६ वर्ष तक तप करके केवल ज्ञानी होकर मोक्ष पधारे।

(७) १८ वें तीर्थंकर श्री अरहनाथ जी राज्यावस्था में एक दिन शरद् ऋतु में मेघों का आकाश में नष्ट होना देख आप वैरागी हो गये। १६ वर्ष तप कर अरिहन्त होकर उपदेश दे अन्त में मोक्ष पधारे।

(८)संभौम—श्री अरहनाथ जी तीर्थंकर के मोक्ष के बाद में हुए। अयोध्या के इक्ष्वाकु वंशीय राजा सहस्रबाहु और रानी चित्रमती के पुत्र थे। आप का जन्म एक वन में हुआ था। इन के पिता सहस्रबाहु के समय में इन के बड़े भाई कृतवीर्य ने एक बार किसी कारण से राजा जमदग्नि को मार डाला। तब जमदग्नि के पुत्रपरशुराम और श्वेतराम ने यह बात जान बहुत क्रोध किया। और सहस्रबाहु तथा कृतवीर्य को मार डाला तब सह-बाहु के बड़े भाई शाडिल्य ने गर्भवती रानी चित्रमती को वन में रखा यहा सभौम उत्पन्न हुए। वह १६ वें वर्ष मे चक्रवर्ती हुए। एक दिन परशुराम को निमित्त ज्ञानी से मालूम हुआ कि मेरा मरण जिससे होगा वह पैदा हो गया है। निमित्तज्ञानी ने उस की परीक्षा भी बताई कि जिम के आगे मरे हुए राजाओं के दान्त भोजन के लिये रखे जावें और वह सुगन्धित चावल सम हो जावे वही शत्रु है। इसलिये परशुराम ने अनेक राजाओं को सभौम के साथ बुलाया। संभौम के सामने दांत चावल हो गये, संभौम को ही शत्रु समझ परशुराम ने संभौम को पकडा परन्तु उसी समय सभौम को चक्र रत्न की प्राप्ति हुई। इस चक्र से ही युद्ध कर सभौम ने परशुराम को मार डाला। परशुराम सातवीं

पृथ्वी के पांथड़े में जाकर पैदा हुवा। दिग्विजय कर संभौम ने बहुत काल राज्य किया यह बहुत ही विषयी लंपटी था। एक वार इस को एक शत्रु देव ने व्यापारी के रूप में वड़े स्वादिष्ट अपूर्व फल खाने को दिये। जब वह फल न रहे तब चक्री ने और मांगे। व्यापारी ने कहा कि यह एक द्वीप में मिल सकेंगे। आप जहाज पर मेरे साथ चलिये। वह लोलुपी चल दिया। मार्ग में उस देव ने जहाज को डुवो दिया और चक्रवर्ती खोटे ध्यान से मर कर सातवीं नरक में गया।

(६) नव वें चक्री २० वें तीर्थंकर मुनि सुव्रत स्वामी के समय में काशी नगरी के स्वामी इक्ष्वाकु वंशी पद्मोत्तर और ज्वला रानी के सुपुत्र महापद्म थे। बादलों को नष्ट होते देख वैरागी हो गये और साधु होकर मोक्ष पधारे।

(१०) दशवें चक्री श्री हरिसेण भगवान् नेमिनाथ के काल में भोगपुर के राजा इक्ष्वाकु वंशी पद्म और मेरादेवी के सुपुत्र थे। एक दिन आकाश में चंद्र ग्रहण देख आप साधु हो गये तथा अन्त में मोक्ष पधारे।

(११) ग्यारह वें चक्रवर्ती जयसेन श्री नेमिनाथ भगवान् के पीछे और अरिष्ट नेमि के पहिले कौशाम्बी नगर के इक्ष्वाकु वंशी राजा विजय और रानी वप्रावती के पुत्र थे। एक दिन आकाश में उल्कापात देखकर वैराग्य हो साधु हो गये। तप करते हुए अन्त में श्री सम्मेदशिखर पर पहुंचे। वहां चारण नाम की चोटी पर समाधि मरण कर सिद्धि को प्राप्त हुए।

(१२) श्री अरिष्ट नेमि जी के पीछे और श्री पार्श्वनाथ जी के पहले अन्तर में चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त हुआ। यह ब्रह्म राजा व रानी चूल देवी का पुत्र था। यह विषय भोगों में फंसा रहा। अन्त में मर कर सातवें नरक में गया।

कर्मावतार अर्धचक्री नारायण वासुदेव पद की प्राप्ति होने पर इन्हें सात रत्न प्राप्त होते हैं। वे निम्न हैं।

१ सुदर्शन चक्र
२ अमोघ शंख
३ कौमुदी गदा
४ पुष्प माला
५ धनुष्य अमोघ बाण
६ कौस्तुभमणि
७ महारथ

ये फलवान और महा सुन्दर होते हैं। इनकी ऋद्धि व सिद्धि चक्रवर्ती से आधी होती है।

इति शम्

मुनिवर श्री शुक्लचन्द्र जी महानुभाव
प्रशस्तिसूक्तम्

श्रीमान्मनस्वी मुनिः शुक्लचन्द्रः
श्वेताम्बरः स्थानकवासिनां यः।
अग्रेसरः श्रीजिनपादसेवी
विराजते स्वीयगुणैरुदारैः ॥ १ ॥

दयालुमात्मानमसौ बिभर्ति
गजेषु कीटेषु च तुल्यवृत्तिम्।
गणं गुणैराद्रियते बुधानां
विराजिपार्श्वो निकरैः कवीनाम् ॥ २ ॥

स पक्षपातोज्झितबुद्धिशोभी
शत्रौ च मित्रे च समानभावः।
सदोपकारं कुरुते जनानां
जिनाङ्घ्रिसेवी शरणागतानाम् ॥३॥

२ ५ ६
भुजाधिके तत्वमिते महाप्त-
१
चन्द्राङ्किते विक्रमवत्सरे सः।
स्वजन्मना भूपितवान्द्विजानां
पञ्चापदेशे शुचिमन्ववायम् ॥ ४ ॥

२ ७ ६ १
नेत्रर्षिनन्देश्वरसंख्यवर्षे
आषाढशुक्लस्य च पूर्णिमायाम्।
जग्राह दीक्षामयमार्हतीं स
प्रसन्नचेताः जिनमार्गगामी ॥ ५ ॥

विलोक्य चेमं जिनपादपद्मयो-
र्नतं मुनीन्द्रं मुनियेपधारिणम्।
तुतोष वाढं विशदाशया सती
सममदेशे मुदिता क्षनावली ॥ ६ ॥

यद्यप्यमी पूज्यतमो विचारतो-
वभूव लोके स पुनरेप देहिनाम्।
गृहीतदीक्षः पुनरेप सूर्य्यवद्
भृशं दिदीपे जिनसाधुलक्षणैः ॥ ७ ॥

सोऽयं मुनीन्द्रो मुनिशुक्लचन्द्रो-
रामायणं जैनमतानुसारि।
लिलेख भापामधुरे निवन्धे
भव्याशयं काव्यगुणानुयायि ॥ ८ ॥

इद निगाद्यं जनसंकुले पथि
प्रपठ्यतां श्रावकमण्डलेऽपि तत्।
कल्याणद मङ्गलदं मदापहं
जनस्य सन्मार्गकरं परं वरम् ॥ ६ ॥

द्विजेन तेनागमवेदिनोदिता
विवेकविज्ञानसुधामयी कथा।
व्यधायि सूक्तं च जयेन तन्मुने-
र्यदस्य मूल जिनशास्त्रवल्लरी ॥ १० ॥

इति श्री दिल्ली हीरालाल जैन हाईस्कूल भूतपूर्व-
संस्कृतप्रधानाध्यापकेन साहित्याचार्य्य-
पण्डित 'जयराम' शास्त्रिणा विरचित सूक्तम्।

॥ समाप्तम् ॥

मंगल-प्रार्थना

(तर्ज—बालम आय बसो मोरे मन में—)

प्रथम नमो देव अरिहन्ता ।—स्थायी

सुरनर मुनि जन ध्यान धरत हैं।
प्रेमी जन नित नाम रटत हैं ॥
कल कलेश छिन माहिं कटत हैं।
ऐसो नाम भगवन्ता ॥ १ ॥

संकट हारी मंगल कारी ।
सर्वाधार सर्व हित कारी ॥
किम बरणूं मैं महिमा तिहारी ।
गाय थके श्रुति सन्ता ॥ २ ॥

दीन दयाल दया के सागर ।
त्रयी गुण धारी जगत उजागर ॥
कर ही कृपा प्रभु निज भगतन पर ।
सिद्ध रूप गुण वन्ता ॥ ३ ॥

"शुक्ल" प्रभु हम शरणागत हैं ।
विद्या बुद्धि वर मांगत हैं ॥
दीनों की बस आप ही पत हैं ।
केवल ज्ञान अनन्ता ॥ ४ ॥

———

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

॥ ॐ असिआउसाय नमः ॥ ॥ परमेष्ठिभ्यो नमः ॥

॥ अथ रामकथाम् ॥

शिष्य-प्रश्न

दोहा

जिन वाणी नित दाहिने, अरिहन्त सिद्ध जगदीश।
परमेष्ठी रक्षा करें, त्रिपद धार मुनीश ॥ १ ॥
श्री जिनवाणी शारदा, नमूं प्रथमहिय ध्याय।
मनो कामना सिद्ध हो, विघ्न समूह नस जाय ॥ २ ॥

विघ्न समूह नस जाय, ध्यान धरते ही जगदम्बा का।
केवल है आधार श्री, त्रिशला दे सुत नन्दा का ॥
स्वपुरुषार्थ कहा शास्त्र, छेदना कर्म फन्दा का।
सम्यक ज्ञान निमित्त, राह दर्शक होता अन्धा का ॥

दौड़

गुरु चरणन सिर नाके, सिद्ध ईश्वर को ध्याके।
बात कुछ कहूँ पुरानी, क्या गौरव था भारत का
अब कथा सुनो सुखदानी ॥

दोहा

प्रथम शिष्य प्रभु वीर के, इन्द्र भूति शुभ नाम।
पाठी चौदह पूर्व के, आत्म गुणों के धाम ॥

प्रसिद्ध थे गोतम गोत्र से, श्रुत ज्ञान में ऊंचा आसन था।
हितकारी प्राणी मात्र को, श्री महावीर का शासन था॥
थे सर्वज्ञ ब्रह्मज्ञानी, और तीन काल के ज्ञाता थे।
सिद्धार्थ भूपके राजकुंवर, नन्दी वर्धन के भ्राता थे॥
विशेष ज्ञान के लिये पढ़ो, तुम इनके जीवन चरित्र को।
शान्त वीर रस धरताके, देखो शुद्ध ज्ञान पवित्र को॥
कुछ प्रश्न पूछने के हेतु, एक रोज श्री गौतम स्वामी।
नमस्कार कर यो बोले, जहाँ बैठे थे अन्तरयामी॥

दोहा

भगवन्! इस ससार में, कौन है पद प्रधान।
किस पद से निश्चय मिटे, आवागमन तमाम॥
अवतार कौन कहलाते हैं, और क्या क्रम इनके होने का।
क्या सभी परस्पर एक रंग, या फरक है सोने सोने का॥
वर्तमान मे कौन कौन हैं, कर्म मैल धोने वाले।
थे भूतकाल मे कौन भविष्यत् में, कौन कौन होने वाले॥
कितने कितने अन्तर से, इस काल के सब अवतार हुए।
कितने हैं भवधारी इनमे, कितने भवसागर पार हुए॥
और काल का भी कुछ भाग पृथक करके स्वामी दर्शावेंगे।
मम इच्छा पूरण करने को, कृपया अमृत वर्षावेंगे॥

दोहा

नम्र निवेदन शिष्य का, सुन करके भगवान।
कृपासिन्धु फिर इस तरह, करने लगे बखान॥
तीर्थंकर पद को कहा, सब ही ने प्रधान।
पाकर यहाँ विशेषता, पहुँचे पद निर्वाण॥

अब सुनो एकाग्र चित्त करके, कुछ काल विभाग बताते हैं।
जिस जिस क्रमसे जिस जिस गुण से, जैसे अवतार कहाते हैं॥
दश क्रोड़ाक्रोड़ सागर का, अब काल यह अवसर्पणि है।
उत सर्पणि दस का बीत गया, आगे भी उतसर्पणि है॥

दोहा

प्रतिसर्पणि में हुए, होंगे हैं अवतार।
त्रिषष्ठी प्रतिकाल में समझो गणितानुसार॥
धर्मा अवतार हुए चौवीस, अब हैं आगे को होवेंगे।
सब तारन तरण जहाज आगामी कर्ममैल को धोवेंगे॥
बारा भोगावतार हुये, इसमें आगे होंगे बारा।
निग्रन्थ बने सो मोक्ष लहें नहीं बास अधोगति मंझारा॥

दोहा

कर्मावतार होते सभी सम्मुख बचे जो शेष।
बरणन करते हैं सभी, जो जो फरक विशेष॥
उक्त काल के हिस्सों में, नौ नौ बलदेव कहाते हैं।
यह उत्तम प्राणी त्यागशील से, स्वर्ग अपवर्ग पाते हैं॥
अनुज भ्रात इनके ही क्रम से, वासुदेव कहलाते हैं।
अपर नाम नारायण जो, दुनियां से नहीं दहलाते हैं॥
संग्राम में इनसे बढ़ करके, दुनियां में नहीं कोई शूरा है।
क्योंकि इनका पिछला बांधा, होता नहीं पुण्य अधूरा है॥
पूर्व पुण्य शुभ भोग यहाँ, यहाँ का आगे जा पाते हैं।
बलि के द्वारे के अतिरिक्त, ना और कहीं पर जाते हैं॥
इन अष्टादश के पूर्वजात, नौ प्रति नारायण होते हैं।
प्रति वासुदेव, कह दो चाहे, अवसान में सर्वस्व खोते हैं॥

दोहा

कथन आपका है प्रभु, प्रश्न व्याकरण मांय।
सीता कारण क्षय हुवा, महान जन समुदाय॥
अष्टम वासुदेव लखन श्री, रामचन्द्र और रावण का।
हनुमान और सुग्रीव आध सीता का हाल चुरावन का॥

१८	,, अरहनाथजी	मत्स का
१९	,, मल्लिनाथजी	कलश का
२०	,, मुनिसुव्रतजी	कछुए का
२१	,, नेमिनाथजी	कमल का
२२	,, अरिष्टनेमीजी	शंख का
२३	,, पार्श्वनाथजी	सर्प का
२४	,, महावीर स्वामीजी	सिंह का

द्वादश भोगावतार चक्रवर्तियों के नाम

१	भरत चक्री	७	अरहनाथ चक्री
२	सगर चक्री	८	सम्भूम चक्री
३	माघव चक्री	९	महापद्म चक्री
४	सनत कुमार चक्री	१०	हरिषेण चक्री
५	शान्तिनाथ (तीर्थंकर) चक्री	११	जयनाम चक्री
६	कुन्थुनाथ चक्री	१२	ब्रह्मदत्त चक्री

कर्मावतार नौ वासुदेव नारायण

१	त्रिपिष्ट	६	पुण्डरीक
२	द्विपिष्ट	७	दत्त
३	स्वयम्भू	८	लक्ष्मण
४	पुरुषोत्तम	९	कृष्ण महाराज
५	पुरुषसिंह		

स्वामिन है इच्छा सुनने की, वह भी कृपा हम पर होगी।
कौन कौन गये शुभ गति में, गति को को हुए विषम भोगी॥

कर्मावतार नौ प्रति वासुदेव प्रति नारायण

१ अश्वग्रीव
२ तारक
३ मेरक
४ मधुकैटक
५ निशुम्भ
६ बल
७ प्रह्लाद
८ रावण
९ जरासिन्ध

नव बलदेव

१ अचल
२ विजय
३ भद्र
४ सुपुत्र
५ सुदर्शन
६ आनन्द
७ नन्दन
८ पद्म (राम)
९ बलभद्र

नव नारद

१ भीम
२ महाभीम
३ रुद्र
४ महारुद्र
५ काल
६ महाकाल
७ दुर्मुख
८ नर्क मुख
९ अधोमुख

एकादश रुद्र

१ भीमवली
२ जीत शत्रु
३ रुद्र
४ विश्वनाथ
५ सुप्रविष्ट
६ अन्तक
७ पुण्डरीक
८ अजित धर
९ जितनामी
१० पीठ
११ सात्यकि

वासुदेव के हाथों से ही, क्रम से इनका मरना है।
बलके द्वारे बिना इन्हें भी, और नहीं कहीं शरणा है॥

दोहा

इन नौ नौ के ही समय, नौ नौ नारद जान।
भूमण्डल के भूपति, करते सब सम्मान॥

अद्वितीय कलह प्रिय होते, पर होते हैं शुद्ध ब्रह्मचारी।
इनसे जो कोई प्रतिकूल चले, उनको होते महाभयकारी॥
विग्रह करके उपशान्त बनाना, यामें करका खेल सभी।
भ्रात भले जामात बुरे के बद से भला न करें कभी॥
घर घर क्या सब रणवासों तक. ना रोक इन्हें कोई होती हैं।
और जिसने कुछ विपरीत किया. तो उसकी किस्मत सोती है॥
अन्त्यम् होता है स्वर्ग गमन, ब्रह्मचर्य गुण के कारण से।
और वासुदेव संगप्रेम इन्हो का, होता असाधारण से॥

दोहा

जिसने पूर्व जन्म में, किया धर्म हितकार।
रूप ऋद्धि उनको यहां, मिलती अपरम्पार॥

अतुल रूप धारी चौबीस ही, कामदेव अवतार हुवे।
सब कामदेव को जीत जीत, बहुते भव सिन्धु पार हुवे॥
नर नारी क्या शुभ रूप देख, सुर इन्द्राणी मुर्झाती है।
किन्तु विषयों में खुचे नहीं, चाहे सुरललना तक चाहती है॥

दोहा

एकादशरुद्र हुवे महाक्रूर अवतार।
जाते आप अधोगति फैला कर व्यभिचार॥

यह तप जप से हो भ्रष्ट सभी, खोटे कर्मों में लगते हैं।
फिर अशुभ कर्म भोगन कारण, जाकुम्भिपाक में गलते हैं॥
शुभ पुण्य रूप नरतन पाकर, सब क्रूर कर्म में चलते हैं।
अनमोल समय चिन्तामणि तन, खोकर अपने कर मलते हैं।

दोहा

धर्म ध्यान शुभ शुक्ल दो प्राणी को सुखदाय।
नाम स्थानादिक सभी देखो यन्त्र मांय॥

२४ तीर्थंकर देवों का नाम और लक्षण

	नाम	लक्षण
१	श्री ऋषभदेवजी	बैल का
२	,, अजितनाथजी	हस्ती का
३	,, संभवनाथजी	अश्व का
४	,, अभिनन्दनजी	कपि का
५	,, सुमतिनाथजी	चक्रवाक का
६	,, पद्मप्रभुजी	कमल का
७	,, सुपार्श्वनाथजी	साथिये का
८	,, चन्द्रप्रभुजी	चन्द्रमा का
९	,, सुविधिनाथजी	नाव का
१०	,, शीतलनाथजी	कल्पवृक्ष का
११	,, श्रेयांसनाथजी	गैंडे का
१२	,, वासुपुज्यजी	भैंसे का
१३	,, विमलनाथजी	वराह का
१४	,, अनन्तनाथजी	सेही का
१५	,, धर्मनाथजी	वज्र दण्ड का
१६	,, शान्तिनाथजी	हिरण का
१७	,, कुन्थुनाथजी	अज का

दोहा

कथन आपका है प्रभु, प्रश्न व्याकरण मांय।
सीता कारण क्षय हुवा, महान जन समुदाय॥
अष्टम वासुदेव लखन श्री, रामचन्द्र और रावण का।
हनुमान और सुग्रीव आध सीता का हाल चुरावन का॥

१८ ,, अरहनाथजी	मत्स का
१९ ,, मल्लिनाथजी	कलश का
२० ,, मुनिसुव्रतजी	कछुए का
२१ ,, नेमिनाथजी	कमल का
२२ ,, अरिष्टनेमीजी	शंख का
२३ ,, पार्श्वनाथजी	सर्प का
२४ ,, महावीर स्वामीजी	सिंह का

द्वादश भोगावतार चक्रवर्तियों के नाम

१ भरत चक्री	७ अरहनाथ चक्री
२ सगर चक्री	८ सम्भूम चक्री
३ माघव चक्री	९ महापद्म चक्री
४ सनत कुमार चक्री	१० हरिषेण चक्री
५ शान्तिनाथ (तीर्थंकर) चक्री	११ जयनाम चक्री
६ कुन्थुनाथ चक्री	१२ ब्रह्मदत्त चक्री

कर्मावतार नौ वासुदेव नारायण

१ त्रिपिष्ट	६ पुण्डरीक
२ द्विपिष्ट	७ दत्त
३ स्वयम्भू	८ लक्ष्मण
४ पुरुषोत्तम	९ कृष्ण महाराज
५ पुरुषसिंह	

स्वामिन है इच्छा सुनने की, वह भी कृपा हम पर होगी।
कौन कौन गये शुभ गति में, गति को को हुए विषम भोगी॥

कर्मावतार नौ प्रति वासुदेव प्रति नारायण

१ अश्वग्रीव
२ तारक
३ मेरक
४ मधुकैटक
५ निशुम्भ
६ बल
७ प्रह्लाद
८ रावण
९ जरासिन्ध

नव बलदेव

१ अचल
२ विजय
३ भद्र
४ सुप्रभ
५ सुदर्शन
६ आनन्द
७ नन्दन
८ पद्म (राम)
९ बलभद्र

नव नारद

१ भीम
२ महाभीम
३ रुद्र
४ महारुद्र
५ काल
६ महाकाल
७ दुर्मुख
८ नर्क मुख
९ अधोमुख

एकादश रुद्र

१ भीमवली
२ जीत शत्रु
३ रुद्र
४ विश्वनाथ
५ सुप्रतिष्ट
६ अन्वल
७ पुण्डरीक
८ अजित धर
९ जितनामी
१० पीठ
११ सात्यकि

भाइयों में कैसा प्रेम और, मित्रों में कैसी मित्रता थी।
पुत्रो मे कैसा विनय और, चरित्र में क्या विचित्रता थी॥

चौबीस काम देवावतार

१ बाहुबलि	१३ कुन्थुनाथ
२ अमिततेज	१४ विजयराज
३ श्रीधर	१५ श्रीचन्द्र
४ दशभद्र	१६ राजा नल
५ प्रमेनजीत	१७ हनुमानजी
६ चन्द्र वर्ण	१८ बल राजा
७ अग्नि मुक्ति	१९ वसुदेव
८ सनत् कुमार (चक्री)	२० प्रद्युम्न
९ वत्सराज	२१ नाग कुमार
१० कनक प्रभ	२२ श्री पालनृप
११ संघवर्ण	२३ जम्बू स्वामी
१२ शान्तिनाथ (१६ जिन)	२४ सुदर्शन

चतुर्दश कुलकर (मनु)

१ प्रतिश्रुति	८ चक्षुष्मान
२ सम्मति	९ यशस्वी
३ क्षेमंकर	१० अभिचन्द्र
४ क्षेमन्धर	१ गंद्राभ
५ सीमंकर	१२ मरुदेव
६ सीमन्धर	१३ प्रसेनजीत
७ विमलवाहन	१४ नाभिराजा

द्वादश प्रसिद्ध पुरुष हुए

१ नाभिराजा	७ रावण
२ श्रेयांस	८ कृष्णजी

क्या प्रेम था सासु बधुका, और पतिव्रता कैसी थी नारी।
सत्यपथ पर कैसे मरते थे, कैसे थे दृढ़ धर्म धारी॥

३ बाहुबली	६ महादेव
४ रामचन्द्र	१० भीम
५ हनुमान	११ श्री पार्श्वनाथ
६ सीता	१२ भरतेश्वर

भूतकाल के तीर्थंकरों के नाम

१ श्री निर्वाणजी	१३ ,, शिव गणजी
२ ,, मागरजी	१४ ,, उत्साहजी
३ ,, महासिन्धुजी	१५ ,, सानेश्वरजी
४ ,, विमल प्रभुजी	१६ ,, परमेश्वरजी
५ ,, श्रीधरजी	१७ ,, निमलेश्वरजी
६ ,, दत्तजी	१८ ,. यशोधरजी
७ ,, अमल प्रभुजी	१९ ,, कृष्णमतिजी
८ ,, उद्धारजी	२० ,, ज्ञानमतिजी
९ ,, अंगीरजी	२१ ,, शुद्धमतिजी
१० ,, सनमतिजी	२२ ,, भद्रजी
११ ,, सिन्धुनाथजी	२३ ,, अतिकान्तजी
१२ ,, कुसुमांजलीजी	२४ ,, शान्त स्वामीजी

भविष्यकाल के चौवीस अवतारों के नाम

तीर्थङ्करों के नाम	जिन्होंने तीर्थङ्कर गोत्र उपार्जन किया
१ श्री महापद्मजी	१ श्रेणिक राजा
२ ,, सूर्यदेवजी	२ सुपार्श्वजी
३ ,, सुपार्श्व जी	३ उदय जी
४ ,, स्वयंप्रभजी	४ पोटिल अनगारजी

दोहा

अष्टम अक अवतारों का जो जो विवरण खास।
कम क्रम से होगा सभी, गति कर्म और वास॥

भारत का गौरव दर्शाने को, यह भी एक महा चरित्र है।
कर्त्तव्य जिसे कहती दुनियां, इसमें भी महा पवित्र है॥

५ ,, सर्वानुभूति	५ दढायु
६ ,, देवश्रुत	६ कार्तिकसेठ
७ ,, उदय	७ शंख श्रावक
८ ,, पेढालपुत्र	८ आनंद
९ ,, पोटिला	९ सुनंद
१० ,, शतकीर्ति	१० सतक
११ ,, मुनिसुव्रत	११ देवकी
१२ ,, सत्यभाववित	१२ सत्याकी
१३ ,, निषकषाय	१३ कृष्णवासुदेव
१४ ,, निष्पलाक	१४ बलभद्र
१५ ,, निर्मम	१५ रोहिणी
१६ ,, चित्रगुप्ति	१६ सुलसा
१७ ,, समाधि	१७ रेवती
१८ ,, सम्वर	१८ सथाल
१९ ,, यशोधर	१९ भयाल
२० ,, अनंधिक	२० द्विपायन
२१ ,, विजय (मावजी)	२१ नारद
२२ ,, विमल	२२ अम्बड
२३ ,, देवोपपात्त	२३ दासमृत-अमरजीव
२४ ,, अनन्तविजय	२४ स्वातिबुद्ध

शिक्षाप्रद है इतिहास सभी, हर प्राणी को नरनारी क्या ।
यदि चातक को ना बुन्द मिले, क्या करे विचारा वारिवाह ॥

दोहा

आप्त के उपदेश में, दोष नहीं लवलेप ।
आगे मति श्रुति ज्ञानि का, होगा कथन विशेष ॥
ग्यारह लाख छियासी सहस्र और साढ़े सौ सात ।
वर्ष पूर्व थे विचरते, मुनि सुव्रत जगनाथ ॥
साढ़े बाइस सहस्र वर्ष, बीते थे गृहस्थाश्रम में ।
फिर साढ़े सात हजार वर्ष, भोगे थे सन्यासाश्रम में ॥
निर्वाण बाद इस भारत में था, विद्यमान इनका शासन ।
सत्य भूति कुल भूषण आदि, मुनियों का था ऊंचा आसन ॥

दोहा

पंच परमेष्टी नमन से, पड़े अरि के त्रास ।
बदला ले अरु सुख मिले, फल निर्वाण निवास ॥

गाना नं० १

शोरो गुल को बन्द करके, लो मजा अब इस कहानी का ।
नेकों की नेक नामी और बदों की भी नादानी का ॥ स्थायी
थे भाई राम और लक्ष्मण. प्रेम दोनों प्राणी का ।
जमाना गौर कर देखा, मिला नहीं कोई शानी का ॥
पिता के ऋण को तारा था, जो था कैकयी महारानी का ।
आप बनवास को धाये, तजा सुख राजधानी का ॥
पर कारण ही तन मन धन, से था प्रयोग वाणी का ।
सार यह ही समझ रक्खा था, अपनी जिंदगानी का ॥

चौपाई

जम्बू द्वीप छोटा सब मांही। भरत क्षेत्र स्थानक सुखदायी।
चौथा आरा लम्बी आयु। उसका किंचित हाल सुनाऊं॥

दोहा

आप्त प्रणीत शास्त्रों में, गिनती का शुम्मार।
सख्या पल सागर, सभी लेवो गुरू से धार॥

बीस क्रोड़ा क्रोड़ सागर का, शुभ काल चक्र एक होता है।
जिसके आधे छः हिस्सों में, यह समय नाम शुभ चौथा है॥
बैतालीस सहस्र कम एक क्रोड़ा क्रोड़ का यह आरा होता है।
हो सर्वज्ञ जीव करनी कर, कर्म मैल को धोता है॥

दौड़

बड़ा होता सुखदाई, नहीं किसी को दुखदाई।
भेद इतना होता है वैसा ही फल मिले जीव को॥
जैसा कोई बोता है॥

दोहा

यथा काल के क्रम से होते हैं अवतार।
त्रिषष्ठि के पुरुष सब, पाते भव दधि पार॥

तीर्थंकर चौबीस चक्रवर्ती, बारा ही पहचानो।
नौ बलदेव नौ वासुदेव, नौ नौ प्रति नारद जानो॥
लब्धि धारक मनपर्यव ज्ञानी, और केवल ज्ञानी मानो।
विद्याधर सुविशाल शूरमा, बहत्र कला सुविधानो॥

दौड़

चौबीस धर्म देव हैं, बाकी कर्म देव हैं।
नहीं कुछ पुण्य मे खामी, आठों कर्म संहार सभी॥
होते हैं मोक्ष के गामी॥

चौपाई

मुनि सुव्रत जिन बीसवे स्वामी, लोका लोक के अंतरयामी।
नमस्कार कर कलम चलाई, निर्विघ्न ग्रन्थ होवे सुखदायी॥
अष्टम वासुदेव बलदेव, दिन दिन बढ़ता अधिक स्नेह।

दोहा

पुरी अयोध्या में हुए, दशरथ भूप उदार।
सूर्य वंश में आ लिया, राम लखन अवतार॥

रामचन्द्र लक्ष्मण सीता, रावण का हाल बताना है।
थे योद्धा बलवान बड़े, शक्ति का नहीं ठिकाना है॥
वानर वंशी सुग्रीवादिक, का भी सब हाल सुनाना है।
थे आधीन सब रावण के, पर सत्य पक्ष को जाना है॥

दौड़

तीन खंड के मांही, फैली हुई थी प्रभुताई।
अन्त क्या रहा हाथ में, अच्छे बुरे जो किये कर्म॥
वो ही ले गये साथ में॥

दोहा

अष्टम चक्र का हाल अब, सुनो लगाकर कान।
मुनि सुव्रत अरिहन्त का, शासन था विद्यमान॥

बीसवें तीर्थंकर के बाद। पैदा का हाल इन्हीं का है।
आदि अन्त तक जो चरित्र। बतलाना सभी जिन्हों का है।
घबरावे नहीं आपत्ति से। हो नाम प्रसिद्ध उन्हीं का है।
पर कारण सहे कष्ट मिला नहीं सुख कोई स्वल्प दिनों का है।

दौड़

सुनो जो मन चित लाके, ध्यान एकाग्र जमाके।
यदि होवे चित खिलारी। तो सुनने की अभिलाष मत
करो सुनो नर नारी॥

चौपाई

सच्चे मन से धारे सोई, शिक्षा मिले और सम्पति होई।
पावन महा नाम अभिराम, सिद्ध हुए सुख आठों याम॥

दोहा

जो शूरा कर्त्तव्य में वही धर्म में जान।
पाकर यहाँ विशेषता, अन्त गये निर्वाण॥

लक्ष्मण रावण जन्मान्तर में, तीर्थंकर पद पावेंगे।
अष्टकर्म दल को क्षय करके, मोक्ष धाम में जावेंगे॥
अभी देर तक कर्म बन्ध, फल बल द्वारे भुगतावेंगे।
फिर अनुक्रम से मनुष्य जन्म, में शुक्ल ध्यान ध्यावेंगे॥

दौड़

बारवें स्वर्ग मंझारी बैठी है जनक दुलारी।
हुकम सब के ऊपर है, सीतेन्द्र हुवा नाम करी॥
पूर्व करनी दुष्कर है॥

दोहा

राम कथा अभिराम है, तजो निद्रा घोर।
जो जो कुछ बीतक हुआ, सुनो सभी कर गौर॥
सुनो सभी कर गौर, यहा वृतान्त सभी है बतलाना।
अद्भुत रंग दमकता था, इतिहास सुनहरी है माना॥

शूरवीर वांके दुर्दन्ते, योद्धाओं का वाना है।
इस को यहाँ पर करूं समाप्त आगे हाल सुनाना है॥

दौड़

विपत्ति जो आई है, दृढ घन सभी सही है।
सुन सुन कर होवोगे गुम, आदि अन्त पर्यन्त।
सभी धर कर के ध्यान सुनो तुम॥

चौपाई

भरतक्षेत्र में देश पुरलंका, स्वर्ण मयी है कोट दुर्वक्का॥
अन्य नाम एक राक्षस द्वीप, अति अनुपम लंक समीप॥
वर्तमान थे अजितजिनेश, "घन वाहन" हुए आदि नरेश।

दोहा

राक्षस सुत को राजदे, अजित स्वामी पास।
संयम ले करणी करी, पहुँचे मोक्ष निवास॥

पहुँचे मोक्ष निवास जिन्होंने, दुख ने किया किनारा है।
तप जप दुष्कर करनी कर, किया आत्म ज्ञान उजारा है॥
मानिन्द मिश्री मक्खी के, जिन दोनों लोक सुधारा है॥
अवसर प्राप्त देख राक्षस, सुत ने संयम धारा है॥

दौड़

देव राक्षस अधिकारी, आप गये मोक्ष सिधारी।
असंख्य हुवे हैं राजा, दशवें जिनवर समय
कीर्ति धवल नरेन्द्र ताजा॥

—०※०—

❀ वालि-वंश ❀

दोहा

उसी समय उस काल में, में "धामिदापुर" नाम।
नगर अति रमणीक था, मानो है स्वधाम ॥

भूप "अतिन्द्र" विद्याधर, श्रीमती राणी अति सुन्दर।
"श्री कंठ" पुत्र सुखदाई, "गुण माला" एक सुता कहाई ॥

दोहा

रत्नपुरी नगरी भली, "पुष्पोत्तर" तहां राय।
पुष्पोत्तर सुत के लिये, गुणमाला की चाह ॥

गुणमाला की चाह, जिन्होंने मांगी थी खगराजा से।
बने परस्पर प्रेम हमारा, तेरा इस शुभ नाता से ॥
समझाया नृप ने अपनी, अति बुद्धि और वाचाला से।
सन्तोप जनक नहीं मिला, उत्तर कोई अतिन्द्र भूपाला से ॥

दौड़

समझ उसको नहीं आई, लंक पति को ब्याही।
मूल दुःख की यह दाता, "पुष्पोत्तर" खेचर को
सुनकर दिल में अमर्ष आता ॥

दोहा

पुष्पोत्तर की पुत्री, "पद्मावती" तसु नाम।
चली सैर करने लिये, हुई जिस समय श्याम ॥

अपनी मस्तानी चाली से, मानु अस्ताचल जाता था।
उदयाचल से चन्द्रमा भी, शुभ कदम बढाये आता था ॥
इस ओर मध्य भूमण्डल पर, चेरी जन से परिवरि हुई।

पद्मा मस्तानी जाती थी, जौहर गौहर से भरी हुई ॥
मुख पर लाली थी सह स्वभाव, कुछ सूर्य ने चौचन्दकरी।
कुछ शशी स्पर्धा के मारेने, अपनी किरण बुलन्दकरी ॥
पक्षी गण गायन करते थे, फूलों ने हंसना शुरू किया।
यह अवसर देख हवा ने भी, अपना वहना तनु किया ॥
पद्मा को स्पर्श करने को, तरुवर भी टान झुकाते थे।
वह पत्र फूल स्वागत करने को, अपना आप मिटाते थे ॥
एक दूसरे से पहले, वस मार्ग में विछ जाते थे।
यह सोच अंगना मैला हो, धूली समूह छिप जाते थे ॥
मोर नृत्य कर कूक शब्द से, मीठा वचन सुनाते थे।
जिसने देखा यह पुण्य तनु, सब शोक समूह मिट जाते हैं ॥
चाली गति हंस निराली सम, गिनगिदकर कदम उठातीथी।
यह चिन्ह कुदरती तनपर थे सुर ललना भी मुर्झाती थी ॥

दोहा

इसी मार्ग आरहा, था सन्मुख श्री कण्ठ।
ठहर बाग तटपर जरा, लगा लेन कुछ "ठण्ड" ॥

पुण्य रूप यह पद्मा का मुख, श्री कंठने जब देखा।
कुछ सहसा झलक दिखाकर के जा धसी बागमें वह रेखा ॥
यहाँ मोह कर्म के उदय भाव से, पराधीन हुआ चोला है।
फिर मन ही मन में श्री कण्ठ, अपने मुख से यों बोला है ॥

गाना नं० २

कहाँ गई यह कामिनी, दिल देख मतवाला हुआ।
मोहिनी मूर्त वदन, सांचे में था ढाला हुवा ॥
प्यासा इसी के दर्शका, सूर्य भी अस्ताचल खड़ा।
आ रहा इन्दु उधर से, करता उजियाला हुआ ॥

देख मुखपर दमकता, दिलमें हुआ ऐसा विचार।
इस पुण्य तनके सामने, दोनों का तन काला हुआ॥
शील लज्जा भोलापन, क्या गुण सर्व लक्षण अति।
चमन और संध्या से जिसका, रूप दो बाला हुआ॥
किस तरह सयोग अब, इस पुण्य तन से हो मेरा।
पूर्ण हो आशा तो मैं भी, शुभ कर्म वाला हुआ॥

दोहा

मन ही मन मे इस तरह, करता रहा विचार।
सेवक जन लख आकृति, बोले गिरा उचार॥
स्वामिन् क्यों सहसा हुआ, चेहरा आज उदास।
किस कारण लेने लगे, लम्बे लम्बे स्वांस॥

है प्रकृति अनुकूल सभी के, शोक मोचनी बनी हुई।
संध्या भी अपना गौरव लेकर, सभी ओर से तनी हुई॥
वायु कुमार ने मरुत की शोभा, शीतल कैसी रची हुई।
जिसको लेकर ना चलती पवन, व सुगन्ध कौनसी बची हुई॥

गाना नं ३

मेरे इस मर्ज की, तुम्हें क्या खबर है।
यह दौरा मुझे सहसा, आया जबर है॥
यदि घर चला तो, यह दूनी बढ़ेगी।
मुझे आता निश्चय ही, ऐसा नजर है॥
इसी राजधानी मे, ठहरेंगे कुछ दिन।
मेरे मर्ज की बस, मुझे ही फिकर है॥
सिवा एक के वाकी, "जावो" 'भिदापुर'।
मिटेगी यह कुछ दिन, मे जो भी कसर है॥

शुक्र सत्य जानो, कि दो तीन दिन में।
चिकित्सा का होवेगा, मुझ पर असर है॥

दोहा

श्रीकण्ठ ने इस तरह, किया वहाँ विश्राम।
ढंग वही करने लगा, बने जिस तरह काम॥
मन ही मन में सोच के, भिदापुर के नाथ।
कुशल पूछ दर्वान से, मिले प्रेम के साथ॥
प्रेम देख श्रीकण्ठ का, चकित हुआ दर्वान।
बोला श्री महाराज मैं, हूं निर्धन अनजान॥

श्रीमान करना क्षमा, मैंने श्रीमान को पहिचाना ही नहीं।
एक निर्धन ने ऐसे प्रेमी, धनवान को पहिचाना ही नहीं॥
जो राव रङ्क का मान करे, गुणवान को पहिचाना ही नहीं।
हैं कौन देश के आप रत्न, भगवान् को पहिचाना ही नहीं॥
बोले श्रीकण्ठ मैं परदेशी, यहाँ भूला भटका आया हूँ।
विश्राम के कारण ठहर गया, और भूखका अधिक सताया हूं॥
एक श्रमित बटोही परदेशी पर, इतना तुम उपकार करो।
भूखे की भूख मिटा कर तुम, एक अतिथि का सत्कार करो॥
कर भला भला होगा तेरा, मन में न जरा विचार करो।
उपकार के बदले में भाई, यह पुरस्कार स्वीकार करो॥

दोहा

मोहरें लेकर हाथ में, भूल गया सब ज्ञान।
शीश नवा कर चल दिया, खुशी खुशी दर्वान॥
मोहरें लेकर चल दिया, जब यह पहिरेदार।
प्रेम पत्र लिखने लगा, श्रीकंठ सुकुमार॥

गाना नं० ४

मन नहीं बस मे. रहा, जब सुन्दर सूरत देखली।
मोहिनी जादू भरी एक, चन्द्र मूरत देखली ॥
प्रेम की वीणा लिये, प्रेमी गुणों को गा रहा।
राग की झनकार ने भी, प्रेम की गत देख ली ॥
चूमते उपवन की चौखट, हैं खड़े दर्बान वन।
क्या क्या अनुचित कर्म, करवाती है चाहत देख ली ॥
वैद्य के आगे न रोगी, रोये तो रोये कहां।
प्रेम प्राणी मात्र की, करता है जो गत देखली ॥
प्रेम के सागर में, आशाओं की लहरें उठ रहीं।
प्रेम वस बुद्धि हुई, कैसी है मदमत्त देखली ॥
प्रेम वस अनुचित, उचित का ज्ञान कुछ रहता नहीं।
प्रेम के रंग मे रंगे, शब्दों की रंगत देखली ॥
देख तेरे दर्शनों की, भीख आये मांगने।
दिव्य दृष्टि से जभी, दाता की आदत देखली ॥

दोहा

जहां सम्पत्ति नहाँ पराहुणे. और याचक गण जाय।
मेघ वहाँ श्रावण जहां, बर्सन को तहां जाय ॥
साम जहा तक जीती है, तब तक सासरा कहाता है।
तीनों का जहां अभाव वहाँ पर, कौन कहाँ कोई जाता है ॥
विद्या वचन वपु वस्त्र, अरु विभव पांच वकार जहां।
शुक्र वहां जाना चाहिये, सुन्दर हों पांच, वकार जहां ॥
जल रसना दोनों मीठे, दुखियों का दुख जानते हों।
शुभ विद्या और मति शोभन, गुण अवगुण को पहिचानते हों ॥

अपने गौरव जैसा प्राणी, वस औरों का गौरव माने।
सब काम सरलता का अच्छा, चाहे कोई बुरा भला माने ॥
कल से यहाँ बाग तेरे की, आकर घूमन घेरी लाते हैं।
बस सौ बातों की बात यही, अतितर हम तुमको चाहते हैं॥
अनुकूल चाहे प्रतिकूल कहो, लिखना यह खास हमारा है।
इसका ना समझे दोष कोई, जो पहिरेदार तुम्हारा है ॥
यदि उत्तर हाँ में है तो फिर कहना सुनना कुछ और नहीं ।
गर उत्तर नामें होनी आगे, कुछ चलता जोर नहीं ॥

दोहा

पत्र ऐसा लिख दिया, कर चौतरफी बन्द ।
पद्मा का ऊपर लिखा, नाम आप सानन्द ॥

आगे बढ़ कर दिया फैंक, जहाँ पर वह आती जाती थी।
और संध्या भी अपना सौन्दर्य, लेकर सन्मुख आती थी ॥
धमकल पहिरेदार उधर से, खाद्यपदार्थ लाया है ।
आगे धर कर मिष्टान सभी, श्रीकंठ को वचन सुनाया है।

दोहा

पांच मोहर से अधिक, यह लीजे सब मिष्टान्न ।
बैठ आप यहां कीजिये, भोजन और जलपान ॥

मेरा शृङ्गार मुझे दीजे, अपने पहरे पर डटता हूं ।
सब कारण आप जानते हैं, संग खाने से जो नटता हूं ॥
राजकुमारी की संध्या अब, स्वागत करने आई है ।
फिर हमतो उनके सेवक हैं, आजीविका जिनसे पाई है ॥
पराधीन सपने सुख नाहीं, सत्य किसी ने कह डाला ।
कारण यह पूर्व जन्म में नहीं, हमने शुद्ध शुद्ध धर्म पाला ॥

ना किसी मित्र या सज्जन का, स्वागत पूरा कर सकते हैं।
यदि परतन्त्रता तजें कहीं, तो पेट नहीं भर सकते हैं॥

दोहा (श्रीकंठ)

मित्र क्या कहने लगे, भोली भोली बात।
कभी श्याम दिन रात्रि, कभी होय प्रभात॥

जो भेद नजर आता यहाँ, बेशक, कर्त्तव्य पूर्व जन्म कैसे।
स्वतन्त्र और परतन्त्र बने, जैसा कोई कर्म करे कैसे॥
स्वतन्त्र होकर भी तुमने, सेवा की है चित्त लाकर के।
परतन्त्र कौन कर सकता है, स्वार्थ में मन फंसा करके॥
यदि कर्म तेरे सीधे होंगे, कल स्वतन्त्र बन जावोगे।
क्यों पहिरेदार रहेगा यहाँ, निज घट में मौज उडावोगे॥
मित्र जो कह चुके तुम्हें, मित्र का अंग पुगावेंगे।
अपना चाहे काम बने ना बने, पर बना तुम्हारा जावेंगे॥
जो पांच मोहर वापिस ले लूं, क्या तुम पर अविश्वासी हूं।
विश्राम यहां करने से मैं, बना चुका मित्र संग वासी हूं॥
तुझमें मुझमें ना भेद कोई, यदि है तो मन से दूर करो।
स्वावलम्बी हो बस अपने पर, इस निर्बलता को दूर करो॥

दोहा

पद्मा के रथ का सुना, जब सुदूर झंकार।
'धमकल' झटपट जा, हुआ पहिरे पर अवसार॥

श्री कंठ ने भी पद्मा के, सन्मुख ही प्रस्थान किया।
और पैदल चलने की सीमा पर, पद्मा ने तज यान दिया।
आ मेल परस्पर हुआ यहां, कुछ संध्या ने रंग बर्साया।
कुछ बाग दुतर्फी फल फूलों, ने भी अपना रंग दर्शाया॥

कुछ श्रीकंठ के चेहरे का, पहिले ही रंग गुलाबी था ।
कुछ संध्या रंग से और खिल गया, सन्मुख अर्चिमाली था ॥
लक्षण व्यञ्जन गुण अवगुण, विद्या के दोनों ज्ञाता थे ।
संयोग मिलाने वन बैठे, मानो शुभ कर्म विधाता थे ॥

दोहा

आकार और आभ्यन्तर में, जैसी चेष्टा होय ।
भापा नेत्र विकार से, जाने बुद्धि जन कोय ॥

बस एक दूसरे के अन्तरगत, मन भावों को भाप गये ।
कुछ मेरा है अनुराग इसे, उसको मेरा यह जांच गये ॥
कुछ पूर्व जन्म का प्रेम, और आयु भी कुछ स्वीकारती है ।
कुछ लक्षण व्यंजन आकर्षण, शक्ति भी हाथ पसारती है ॥
चरित्र मोहनी कर्म उदय, जिस प्राणी का जब आता है ।
उस काम से लाख यतन करने पर, भी नहीं हटना चाहता है ॥
मन का मन साक्षी होता, यह उदाहरण भी जाहिर है ।
जो मर्ज थी श्रीकंठ को यहां, पद्मा ना उससे बाहिर है ॥

दोहा

दोनों निज रस्ते लगे, भाव हृदय में धार ।
राज कुमारी जा धसी, अपने बाग मंझार ॥

गाना नं० ५

मनोहर रूप पर मोहित ये, तबियत होई जाती है ।
अनोखी देखकर रचना को, उल्फत होई जाती है ॥
अगर आज्ञा बिना स्वामी के, वस्तु लेना चोरी है ।
मनोहर मूर्ति से यों. महोब्बत होई जाती है ॥
यदि मांगू मैं राजा से, नहीं मानेगा हठ धर्मा ।
हुआ अपमान जिसका उसको, नफरत होई जाती है ॥

दोहा

ऐसा लिखकर लेख बस, किया बन्द तत्काल।
'धमकल' को बुलवा लिया, समझाने को हाल॥
धमकल पहिरेदार शीघ्र, पद्मा के पास सिधाया है।
और विनय सहित अपना मस्तक, भूमि पर आन निमाया है॥
कुछ बनावटी मुख मंडल, पद्मा ने भी मुर्झाया है।
सब बात पूछने के कारण, यों मुख से वचन सुनाया है॥

दोहा

क्या कोई आया यहां, सच सच कहो बयान।
झूठ न कहना तनिक भी, समझ मुझे अनजान॥
सत्य कहने वाले की परीक्षा, सत्य के ही आधार पे है।
और मृषा भाषण वाले के लिये, दण्ड भी इस संसार पे है॥
कोई आता-जाता जैसा भी, देखा हो वैसा बतलाओ।
यह सत्य सभी को अच्छा है, तुम भय ना कोई मन में खावो॥

दोहा

जी हां आया था यहां, मनुष्य अपरिचित आज।
व्यंजन लक्षणों का जिसे, मिला सभी शुभ साज॥
सुन्दर सभी अवयव और तन था, सांचे में ढला हुआ।
मालूम मुझे होता था, जैसे राज भवन में पला हुआ॥
रसना में जिसके आकर्षण, शक्ति थी मानो भरी हुई।
और क्रोध लोभ मद माया की, थी शक्ति सारी जरी हुई॥
परिचित नहीं होने से भी वह, परिचित से ही बन जाते हैं।
अवकाश मिले नहीं पूछन का, बस प्रेम बीच सन जाते हैं॥
आते ही प्रसन्न बदन होकर, मुझको पागल सा कर डाला।
देखन में सौम्य मूर्ति उन्नत, मस्तक तनु कमर वाला॥

पहरे पर आप खड़े होकर. मुझसे कुछ खाद्य मंगाया था।
चल दिये यहां से आपके रथने, जब झंकार सुनाया था॥
कुछ और मुझे मालूम नहीं, था कहां कहां से आया था।
बस उसकी छाया का मुझ पर, वेशक जादू सा छाया था॥

गाना नं० ६

(तर्ज—म्हारी किस विध होसी पार नैया सागर से)

मैं कैसे कहूं, उचार शोभा नरतन की।
नल कुबेर सम छवि निराली, चाली गज सम थी मतवाली।
शशी बदन सुनहार ॥ शो० १ ॥
विद्वान् दानी सन्मानी, सब गुण लायक निरभिरामी।
आकर्षण सुखकार ॥ शो० २ ॥
समचौरस सु संस्थान था, परमार्थी और पुण्यवान् था।
रूप था अपरम्पार ॥ शो० ३ ॥
कान्ति छटक रही थी न्यारी, शुक्ल ध्यान आरति सब टारी।
दुखी जन का आधार ॥ शो० ४ ॥ इति ॥

दोहा (पद्मा)

यह लो पत्र शुभ ही, रखो अपने पास।
गर उनको यदि ना मिले, देना मुझको खास॥
इतना कह कर के गई, पद्मा निज आवास।
श्रीकंठ अगले दिवस, पहुँचा घमकल पास॥
श्रीकंठ आगे कल की, जो थी सो सारी बात कही।
पत्रिका राजकुमारी की, फिर राजकुमार के हाथ दई॥
यह पत्र पढ़ते ही सारा वस, हृदय कमल प्रकाश हुवा।
क्योंकि जिस काम की आशा थी, वह काम एकदम पास हुवा।
पुण्योदय घमकल को भी, मिल गया द्रव्य खुश हाल हुवा॥

मेरी शक्ति नहीं ऐसी, कि मैं बल से उसे जीतूं।
शुक्ल निर्बल पुरुष को, छल की आदत होई जाती है॥

दोहा

करता करता जा रहा, निज विचार श्रीकंठ।
इधर आईये बाग में, लगे जरा कुछ ठंड॥
पद्मा की दृष्टि पड़ी, उसी पत्र पर जाय।
आज्ञा पा चेटी दिया, उसी समय कर लाय॥

जब पढ़ा पत्र सहसा विचार, चक्कर मस्तक में घूम गया।
या यों कहिये कि श्रीकंठ के, सिर से बुरा मक्सूम गया॥
निवास गृह में जा बैठी, चेरी जन को निज काम लगा।
ले हाथ लेखनी कागज पर, उत्तर लिखने लगी ध्यान जमा॥

दोहा

स्वस्ति श्री सर्वोपमा, गुणिजन में प्रवीण।
आकर्षण गुण लेखने, लिया कलेजा छीन॥

सम्बन्ध सभी पीछे होगा, पहिले परिचय कराने से।
कोई कष्ट पड़े उसको सहने में, अपना साहस बढ़ाने से॥
कर्त्तव्य जो हो अपना उसपर भी, दृष्टि जमा लेनी चाहिये।
प्रकृति मिले परस्पर परीक्षा, लेनी और देनी चाहिये।
क्या नाम आपका धाम सहित, और किसके राज दुलारे हो।
अर्धाङ्गनी है कौन आपकी, या कि अभी कुंवारे हो॥
आसान सभी कर्त्तव्य कठिन, होता दिल लेना देना है।
मन मिले बिना क्या कहो आप, कब प्रेम का दरिया बहना है॥
अनमेल का मेल मिला लेना, बुद्धिमानी से बाहिर है।
बिगड़े पय कांजी की छींट पड़े, यह भी मिसाल जग जाहिर है॥

सिक्के से मेल मिला करके, सोना निज गौरव खोता है।
उस बीज का नाश निशंक बने, जो कि कल्लर में वोता है॥
बिन सोचे जो कोई काम करे, सो ही पीछे फिर रोता है।
जो द्रव्य काल अनुसार चले, सो ही जन विजयी होता है॥
आशा निश्चय पूरण होगी, अनुमान नजर यह आते हैं।
पर उद्यम सब का मूल यही, सर्वज्ञ देव बतलाते हैं॥
यह बात सोचने वाली है, स्वार्थ ना कोई निकल आवे।
सब रंग भंग हो जाय यदि, कोई समस्या निकल विकट आवे॥
जो भी कुछ करना बुद्धिमान को, प्रथम सोच लेना चाहिये।
आ स्वार्थ के अंकुरों को, हृदय से नोच देना चाहिये॥

दोहा

सज्जन ऐसे चाहिये, जैसे रेशम तन्द।
धागा धागा खंड हो, कभी न छोड़े बंध॥
ऐसे सज्जन परिहारो, जैसे अर्कज फूल।
ऊपर लाली चमकती, अन्दर विष का मूल॥

नीति और व्यवहार की दृष्टि, से कुछ लिखना पड़ता है॥
पर प्रेम संस्कारी सबको तज, निश्चय आन जकड़ता है॥
किन्तु फिर भी व्यवहार मुख्य, लिये सब के खास जरूरी है।
खाली निश्चय पर तुल जाना, यह भी तो एक गरूरी है॥
व्यवहार यदि दुनिया का साधा, जावे तो क्या हानि है।
क्यों कि फिर मात पिता की भी, इच्छा होवे मन मानी है॥
इस तरह परस्पर दोनों की, व्यवहारिक शादी हो जावे।
प्रतिकूल में ऐसा संशय है, कोई जान मान ना खो जावे॥
बस इत्यलं करके प्रतिज्ञा, एक आप के दर्शन की।
यह ख्याल ना करना इच्छा है, पद्मा को उत्तर प्रश्न की॥

दोहा

ऐसा लिखकर लेख बस, किया बन्ध तत्काल।
'धमकल' को बुलवा लिया, समझाने को हाल॥
धमकल पहिरेदार शीघ्र, पद्मा के पास सिधाया है।
और विनय सहित अपना मस्तक, भूमि पर आन निमाया है॥
कुछ बनावटी मुख मंडल, पद्मा ने भी मुर्झाया है।
सब बात पूछने के कारण, यों मुख से वचन सुनाया है॥

दोहा

क्या कोई आया यहां, सच सच कहो बयान।
झूठ न कहना तनिक भी, समझ मुझे अनजान॥
सत्य कहने वाले की परीक्षा, सत्य के ही आधार पे है।
और मृषा भाषण वाले के लिये, दण्ड भी इस संसार पै है॥
कोई आता-जाता जैसा भी, देखा हो वैसा बतलाओ।
यह सत्य सभी को अच्छा है, तुम भय ना कोई मन में लावो॥

दोहा

जी हा आया था यहां, मनुष्य अपरिचित आज।
व्यंजन लक्षणों का जिसे, मिला सभी शुभ साज॥
सुन्दर सभी अवयव और तन था, साचे में ढला हुआ।
मालूम मुझे होता था, जैसे राज भवन मे पला हुआ॥
रसना में जिसके आकर्षण, शक्ति थी मानो भरी हुई।
और क्रोध लोभ मद माया की, थी शक्ति सारी जरी हुई॥
परिचित नहीं होने से भी वह, परिचित से ही बन जाते हैं।
अवकाश मिले नहीं पूछन का, बस प्रेम बीच सन जावे हैं॥
आते ही प्रसन्न बदन होकर, मुझको पागल सा कर डाला।
देखन में सौम्य मूर्ति उन्नत, मस्तक तनु कमर वाला॥

पहरे पर आप खड़े होकर- मुझसे कुछ खाद्य मंगाया था।
चल दिये यहां से आपके रथने, जब झंकार सुनाया था॥
कुछ और मुझे मालूम नहीं, था कहां कहां से आया था।
बस उसकी छाया का मुझ पर, बेशक जादू सा छाया था॥

गाना नं० ६

(तर्ज—म्हारी किस विध होसी पार नैया सागर से)

मैं कैसे कहूं, उचार शोभा नरतन की।
नल कुबेर सम छवि निराली, चाली गज सम थी मतवाली।
शशी वदन सुनहार॥ शो० १॥
विद्वान् दानी सन्मानी, सब गुण लायक निरभिरामी।
आकर्षण सुखकार॥ शो० २॥
समचौरस सु संस्थान था, परमार्थी और पुण्यवान् था।
रूप था अपरम्पार॥ शो० ३॥
कान्ति छटक रही थी न्यारी, शुक्ल ध्यान आरति सब टारी।
दुखी जन का आधार॥ शो० ४॥ इति॥

दोहा (पद्मा)

यह लो पत्र गुप्त ही, रखो अपने पास।
गर उनको यदि ना मिले, देना मुझको खास॥
इतना कह कर के गई, पद्मा निज आवास।
श्रीकंठ अगले दिवस, पहुँचा घमकल पास॥
श्रीकंठ आगे चल की, जो थी सो सारी बात कही।
पत्रिका राजकुमारी की, फिर राजकुमार के हाथ दई॥
वह पत्र पढ़ते ही सारा बस, हृदय कमल प्रकाश हुवा।
क्योंकि जिस काम की आशा थी, वह काम एकदम पास हुवा।
पुण्योदय घमकल को भी, मिल गया द्रव्य खुश हाल हुवा॥

दोहा

अपना लिया सजा तुरन्त, शुभ श्रीकंठ विमान ।
पहुँची यहां निज बाग में, पद्मा साभिमान ॥
पूछ सन्तरी से बीतक, वाते अन्दर प्रवेश किया ।
मीठी रसना के बने दास, कुछ लालच दे उपदेश दिया ॥
प्रतिज्ञा करने के पहिले, श्रीकंठ बाग में आ पहुँचा ।
और बात परस्पर होने से, पहिले निज कर्त्तव्य को सोचा ॥

दोहा

देखी जब श्री कंठ ने, पुण्य श्री यह खान ।
उपमा मिलती ही नहीं, कैसे करे व्याख्यान ॥
पद्मा थी बेशक चन्द्रमा, श्रीकंठ न भानु से कम था ।
यदि वह थी सुवर्ण की मुंद्री, यह भी न नगीने से कम था ।
मानो थी सांचे में ढाली, पर यह भी नकशक में सम था ।
प्रेम मम्कारी दोनों का, एक दूजे से विषम न था ॥
जब महित वीर रस के महमा, उस काम देव तन को देखा ।
लज्जा मे ग्रीवा झुका लई, और तिरछे चितवन को देखा ॥
लक्षण व्यञ्जन देख फेर, ना पूछन की दरकार रही ।
स्वर व्यञ्जन लक्षण के ज्ञाता, कुछ कहते बारम्बार नहीं ॥

दोहा

जो मतलब की बात थी, बतलाई तत्[illegible] ।
पद्मा से कहने लगा [illegible] कारण का [illegible]
निश्चय अपना औ[illegible] रहा है [illegible]
इसका भी कारण [illegible]
मेघामिदापुर नगर [illegible]
[illegible] ाम नाम है

बहिन मेरी गुणमाला जो कि, पिता तेरे ने मांगी थी।
पर तात मेरे ने अति बहुत, कहने पर भी ना मानी थी॥
उसी दिवस से जनक तेरा, हमसे विरुद्ध है बना हुआ।
और शक्ति में भी अपने से, हमने तेजस्वी गिना हुआ॥
बस कारण केवल एक यही, तुमको ऐसे ले जाने का।
और ऐसा किये बिना निश्चय, दिल को सन्तोष न आने का॥
अब जान की साथन सच्ची होतो, जल्द विमान में चरण धरो।
कैसे होगा क्या बीतेगी, इसका ना रंज न भर्म करो॥
दे चुका तुम्हें दिल क्षत्री हूं, मुझसे ना संका शर्म करो।
क्षत्राणी होना तुम भी तो, निर्भय होकर निज कर्म करो॥
जब तक ना आपका दिल होगा, तब तक ना कभी ले जाऊँगा।
कर चुका संकल्प तन मन धन, अपना तुमको दे जाऊँगा॥
यदि अब ना तो पर भव में तुमको, अवश्य मानना होवेगा।
तुम पछताओगे बार बार, परिवार मुझे सब रोवेगा॥
कुछ जोर जफा ना तुम पर है, ना गिला हमें कुछ होवेगा।
पर नींद हमेशा की बन्दा भी, इसी बाग में सोवेगा॥

दोहा

बात पुराणी आगई, आज मुझे भी याद।
भंग न होनी चाहिये, सतियों की मरयाद॥

अष्टाग ज्योतिषी ने बतलाया, सो ही अक्षर मिलते हैं।
कर्म निकाचित भोगावली, उद्यम से भी नहीं टलते हैं॥
प्रतिज्ञा से विपरीत कहीं, सादी मैंने नहीं करनी है।
मात पिता परिजन क्या, चाहे उलट जाय यह धरनी है॥

दोहा

आदि श्री और अन्त ठ, मध्य फ कार उचार।
सम अक्षर व्यञ्जन सहित, नाता जग सुखकार॥

यदि मेल कोई मिल जावे तो, गौरव सुख का पार नहीं।
उस कुल मे रत्न अपूर्व हो, कोई कर्म को मेटन हार नहीं॥
यदि इसमें कुछ कसर रहे, तो ज्योतिष विद्या तर्क करूं।
और प्रतिज्ञा करता हूँ, जो कहो खुशी से दण्ड भरूं॥

दोहा

उसी समय मैने लई, निज प्रतिज्ञा धार।
यदि मिला सयोग तो, वही मेरा भरतार॥

अब मात पिता मजबूर मुझे, करते है शादी करने को।
यदि नहीं माने तो मैं तैयार थी बैठी मरने को॥
विरोध परस्पर है जिनमें, व्यवहार नहीं है सधने का।
आगे पीछे नजर आ रहा, झगड़ा एक दिन बढ़ने का॥

दोहा

कर्म प्रकृति जीव का, झगड़ा ही संसार।
भाव निवृति कठिन है, भाप गये अवतार॥

दोहा

पद्मा ने ऐसा लखा, श्रीकंठ का प्रेम।
और विशेष पिघल गई, ग्रीष्म में जिम हेम॥

गाना नं० ७

(तर्ज—पाप का परिणाम०।)

सयोग पूर्व जन्म का बेशक नजर आता मुझे,
इस सिवा नहीं रास्ता कोई नजर आता मुझे॥१॥
कौन से जादू से मेरे दिल को बेहवल कर दिया।
खाना पीना पहनना कुछ भी नहीं भाता मुझे॥२॥
कर्म है भोगावली संसार मे आता नजर,
क्या कहू जाऊं [illegible]न्तक न[illegible] आता मुझे॥३॥

मात-पितु की स्नेह दृष्टि शिक्षा गुरुजन की सभी,
कर्मोदय सब छिप गई कुकर्म भरमाता मुझे ॥४॥
शुक्र अब बस फैसला मैंने अटल यह कर लिया,
चारित्र मोहनी कर्म अब जकड़ना चाहता मुझे ॥५॥

वशीकरण के मन्त्र हैं, दुनिया में यह चार।
रूप, राग और नम्रता, सेवा भली प्रकार॥
पूर्व जन्म का था सम्बन्ध, कुछ रूप का पारावार नहीं।
कुछ रसना मीठी श्रीकंठ की नरमी का कोई पार नहीं॥
कुछ प्रेम तमाचे के समान, दुनिया में लगता सार नहीं।
बस समझो सभी नमूने से, ज्यादा करते विस्तार नहीं॥
सब कारण समझे पद्मा ने, व्यवहार नहीं अब सधने का।
जो दिल में प्रेम बढ़ा बैठी, अब प्रेम नहीं वह हटने का॥
बिना मुझे इस रस्ते से कोई, मार्ग आता नजर नहीं।
संयोग है पिछले जन्मों का निश्चय, है इसमें कसर नहीं॥

दोहा

ऊंच नीच सब सोच कर, बैठी तुरत विमान।
श्रीकंठ मन सोचता, बना सब तरह काम॥

दोहा

यह पुष्पोत्तर की सुता, पद्मा रूप अपार।
पुण्योदय से मिल गई, इन्द्राणी अवतार॥

इन्द्राणी अवतार कि जिसका, मिलना अति कठिन है।
याचन से देता नहीं भूप का, हमसे उल्टा मन है॥
किन्तु मन्मथ के आगे, यह कौन क्रिया दुष्कर है।
होगा जो देखा जावेगा, अब करो काम जो दिल है॥

दौड़

आज अवसर यह पाया, पुण्य सब मेल मिलाया।
चलूं अब देरी क्या है, पहुँचूं निज स्थान बजेगी रण भेरी तो क्या है॥

दोहा

लात धम्मुके जो सहे, सो पावे जागीर।
कायर कर सकते ना कुछ, क्षण में होंय अधीर॥
दाबी कला विमान की, सहसा गये आकाश।
तिरछी कला मरोड़ के, आये निज आवास॥

दोहा

पुष्पोत्तर को जब हुआ, सुता हरण का ज्ञान।
आज्ञा पाते ही सजे, जंगी महा विमान॥
जंगी महा विमान व्योम मे बादल से छाये हैं।
गिरफ्तार वहां शंका मे हुये, नौकर घबराये हैं॥
गुप्तचरों से भेद सभी पा, इष्ट दिशा धाये हैं।
श्रीकंठ था सावधान, यहां भेद सभी पाये हैं॥

दौड़

तजी रियासत सुखदानी, चली संग पद्मा रानी।
शरण कोई सोच रहा है, कौन बचावे आज हमें बस ये ही खोज रहा है॥

दोहा

क्रोधातुर लख भूप को, श्रीकंठ सोचता धाम।
शरण दिल में धार के, लंका किया मुकाम॥

लंका किया मुकाम, बहनोई को निज बात सुनाई।
पड़ा कष्ट मुझ पर आकर, अब कीजे आप सहाई॥
इतनी शक्ति कहां मुझमें, जो नृप से करूं लड़ाई।
उभय पक्ष की लंक पति ने, शुभ सम्मति कराई॥

दौड़

पक्ष के होय अधीना, विवाह पुत्री का कीन्हा।
किन्तु मन में दुख पाया, और लाठी जिसकी भैंस
समझ अपना जामात बनाया॥

दोहा

लंकपति कहने लगा, सुन श्रीकंठ सुजान।
वास यहां पर ही करो, जाना ठीक न जान॥
जाना ठीक ना जान, वहां पर शत्रु रहते भारी।
यह शतरंज का खेल, चूक जाते हैं बड़े खिलाड़ी॥
बच्चा तू नादान अभी, कच्ची है उमर तुम्हारी॥
शत्रु नीति निपुण वेरी, मिलकर सब करें ख्वारी॥

दौड़

हृदय विश्वास ना धरना, ध्यान गौरव का करना।
मुझे हैं प्रेम तुम्हारा, हितकारी शिक्षा उर धारो
मानो वचन हमारा॥

दोहा

वानर द्वीप सुहावना, योजन शत तीन प्रमाण।
राज वहां पर कीजिये, वर्तावो निज आन॥

चौपाई

भगिनी पति । कहना माना। किष्किंधा शुभ नगर बसाना॥
निर्मल स्थान अति सुखदाई। महल कोट छवि वरनी ना जाई॥

बाग बगीचे नदी तालाव । भ्रमण करे मन अति सुख पाव ॥
धर्म कर्म करते सुख पाते । सबके अधिपति अधिक सुहाते ॥
देव गुरु और धर्म से प्यार । सम्यक् धार मिथ्यात्व निवार ॥

दौड़

वानर द्वीप वानर अति, देखे जब भूपाल ।
खुशी हुआ मारो मति, मत फेंको कोई जाल ॥
अपनी जैसी जान है, सबके अन्दर जान ।
भोजन पान भंडार से, देवो खुला दान ॥

देयो खुला दान, सब जगह वानर चिह्न कराये ।
इस कारण वहां के वासिन्दे, वानर नाम कहाये ॥
थे नीति में निपुण, और विद्याधर अधिक सुहाये ।
जंगी चोला शूरवीर, कानों में कुण्डल पाये ॥

दौड़

नृप घर पद्मारानी, पुत्र हुआ अति सुखदानी ।
दान दुखियों को दीना, वज्रसुकंठ दिया नाम
रातदिन रहे सुखों में लीना ॥

दोहा

सिंहासन पर एक दिन, बैठा भूपति आन ।
ऊपर को दृष्टि गई, देखा देव विमान ॥
अष्ट नंदीश्वर द्वीपसुर, महिमा करते जाय ।
पीछे ही भूपाल ने, दिया विमान चलाय ॥

चौपाई

चलत चलत पर्वत पर आया, अटका विमान न चले चलाया ।
चारों ओर फिर ध्यान लगाया, साधु देख चरण चित्त लाया ॥

समझा यह संसार असारा, बंध मोक्ष का हाल विचारा।
रजो हरण मुखपती धारी, पुनजन्म की गति निवारी ॥

दोहा

चन्द्र सुकंठादिक हुए, अनुक्रम से राजान।
बीसवें जिनवर के समय, घन वाहन बलवान ॥

चौपाई

वानर द्वीप घन वाहन नरेश, लंका में हुवा तडित केश ॥
आपस में है प्रेम घनेरा, शत्रु कोई आवे नहीं नेरा ॥

दोहा

लंकपति गया भ्रमण को, निज नंदन वन मांह।
थीं संग में महारानियां, खेले अति उत्साह ॥
खेले अति उत्साह उधर एक, वानर चलकर आया।
चपल जात चालाक, झपट कर महारानी पर आया।
सहसा झपट पछाड़ तुरत, हृदय पर हाथ चलाया ॥
रानी का लिया कुच पकड़, नाखूनी घाव लगाया ॥

दौड़

घबरा रानी चिल्लाई, दौड़ दासी सब आई।
मचा कोलाहल भारा, सुन राजा ने भेद कपि के
बाण खैंच कर मारा ॥

दोहा

कपि बाण खाकर भागा, गिरा मुनि के पास।
शरण दिया नमोकार का, मर्द्ध हुआ सुरवास ॥
उदधि कुमार हुआ देव, जिस समय अवधि ज्ञान में देखा।
किस कारण हुआ देव आन के, चढी पुण्य की रेखा ॥

देखा पिछला हाल स्वर्ग के, छोड़े सुख अनेका ।
उपकारी मुनि समझ आन कर, साधी सेवा विशेषा ।।

दौड़

नृप के दिल रोष अपारा, मारो कपि हुकम करारा ।
देव दिल गुस्सा आया, वानर सेना विस्तार वैक्रिय
चारों ओर फैलाया ।।

दोहा

वानर सेना देखकर, घबराया भूपाल ।
शूर मगा कर युद्ध किया, वानर दल विकाल ।।
वानर दल विकाल देख, राजा की सामर्थ्य हारी ।
मन में किया विचार, कपि दलने सब फौज विदारी ।।
क्या आपत्ति वानर दल, चहुं ओर अति भयकारी ।
मारे मरते नहीं शस्त्र, आदि सब विद्या हारी ।।

दौड़

देव कारण दिल धारा, भाव भक्ति सत्कारा ।
और करी नम्रता भारी, देव नरेन्द्र ने आकर मुनि
आगे अर्ज गुजारी ।।

चौपाई

कर वन्दना पूछे भूपाल, करुणा निधि कहो पूर्व हाल ।
पूर्व कृत्य नृप वानर जो जो, ज्ञान बले मुनि भाषे सो सो ।।

दोहा

मंत्रीश्वर का पुत्र तू, सावत्थी मंझार ।
दत्त नाम तेरा हुआ, धर्मी चित्त उदार ।।
धर्मी चित्त उदार, एकदा विरक्त हुआ भोगों से ।
अनादि काल से पाया दुख में जन्म मरण रोगों से ।।

श्री जिन धर्म अमूल्य मनुष्य तन, वचूं सभी धोखों से।
दीक्षा लेकर हुए मुनि, सहे कटुक वचन लोगों से॥

दौड़

रहे सुमति ही ध्यान में, आ निकले तप मैदान में।
जंग कर्मों से लाया, करते उग्र विहार चला चल नगर
वनारस आया॥

दोहा

देव कपि काशी हुआ, लुब्धक अति पापिष्ठ।
आ रस्ते मुनिवर हना, अधर्म लगता इष्ट॥
अधर्म लगता इष्ट, समझ मुनि रोष नहीं कुछ कीना।
समता दिल में धार, माहेन्द्र सुर पद मुनिवर लीना॥
भोगे सुख अनेक स्वर्ग के, अमृत रस को पीना।
जैन धर्म का यही सार रहे, दोनों लोक आधीना॥

दौड़

लुब्धक गया नरक में, आप सुख भोग स्वर्ग में।
यहाँ पर हुवा नरेन्द्र, नरक गति के भोग अतुल दुःख
जन्मा आकर बन्दर॥

दोहा

वैर वधाने वास्ते. घाव लगाया आन।
वदला लेने वास्ते, तूने मारा वाण॥
तूने मारा वाण मृत्यु पा, देव हुआ वानर है।
इस कारण संसार महा दुःख, उथल-पुथल का घर है॥
कभी नरक तिर्यञ्च, चहुँ गति चौरासी चक्कर है।
सम दम खम जिन धर्म विना, खाता फिरता टक्कर है॥

गाना नं० ८

(तर्ज—नर तेरा चोला रत्न अमोला)

पाया मनुष्य जन्म अनमोल, वृथा खोवे मतीना ॥टेक॥

सीखो नित्य प्रति धर्म कमाना, ये ही काम अन्त में आना ।
सावन फिर मुश्किल से पाना, विषै में जावे मतीना ॥१॥

सुपना दौलत राज खजाना, तज गये इन्द्रचन्द्र महाराणा ।
सभी को पड़ा अन्त पछताना, नींद में सोवे मतीना ॥२॥

जिसने त्याग धर्म को धारा, उसने पाया मोक्ष द्वारा ।
तप जप करके कर्म विडारा, निज गुण खोवे मतीना ॥३॥

ध्यावो धर्म शुक्ल दो ध्यान ये ही सर्वज्ञ का फरमान ।
लाऊर कर्मो से मैदान पांव हटावे मतीना ॥४॥

दौड़

सुना दुख आवागमन का,वमन किया अनित्य चमन का ।
ताज सुकेशी को दिना, संयम ले तडित केश ने
अक्षय मोक्ष सुख लीना ॥

चौपाई

वानर द्वीप धनो दधि राजा । संयम ले सारा निज काजा ॥
किष्किन्धी किष्किन्धा नायक । लंक सुकेशी अति सुखदायक ॥

दोहा

क्षीर नीर सम प्रेम है । दोनों का शुभ ध्यान ।
राज ऋद्धि सुख भोगते । मानो स्वर्ग समान ॥
मानो स्वर्ग समान, किसी का भय न कोई दिल में है ।
दिन दिन बढ़ता प्रेम एकता हित, सब ही जन में है ॥

भय खाते हैं आस पास वाले, राजे जितने हैं।
चहुँ ओर रहा तेज फैल, जैसे सूर्य किरणें हैं॥

दौड़

किन्तु नित्य तेज एकसा, रहा नहीं किसी नरेश का।
जो होनहार की मर्जी, जीर्ण वस्तर फटे तो फिर क्या॥
करे विचारा दर्जी॥

॥ इति प्रथमाधिकार॥

—:०-०:—

इन्द्र-वंश

दोहा

पुष्पोत्तर नृप के हुवे, कुल में भूप अनेक।
यहां सुकेशी के समय, नृप था अश्वनीवेग॥

राजा अश्वनी वेग सुरथनु। पुरी राजधानी थी।
पुण्य सितारा लगा चमकने, शिक्षा सुख दानी थी॥
तलवार इन्हों की आस पास के राजों ने मानी थी।
मध्य खंड के उत्तर में, शुभ दिशा भी सुख दानी थी॥

दौड़

शुभमति चम्पारानी, शर्म खाती इन्द्रानी
पुण्य कुछ चढ़ा निराला, थे विद्याधर इस कारण।
दबते थे सब भूपाला॥

चौपाई

पुत्र दोय महा बलवान्। सोहे नृप फल वृक्ष समान॥
साम दान आदिक के ज्ञाता। पूर्ण कृत्य कर्म सुखदाता॥
विजयसिंह और विद्युतवेग। दोय भुजा राजा की यह॥

अन्य नगर आदित्य पुरनाम मन्दिर माली नृप गिरिधाम ॥
तिसके सुता वनमाला नाम। चौंसठ कला सुगुण अभिराम ॥

दोहा

स्वयम्वर एक मण्डप रचा, मन्दिर माली भूप ।
सुता विवाहने के लिए, रचना करी अनूप ॥
लिए भूप बुलवाय उपस्थित, हुए स्वयम्वर घर में ।
भूषित हो वनमाला आई, वर माला ले कर में ॥
दासी चेटी संग सहेली, शोभा लाल अधर मे ।
देख रूप विस्मित सब ही, जैसे दामिनी अम्बर में ॥

दौड़

अतिक्रम सब का करके, चित किष्किन्धा धरके ।
गले वरमाला डाली, तब विजयसिंह ने क्रोधातुर हो
म्यान से तेग निकाली ॥

दोहा

दगेबाज कुल मे हुवा, दगेबाज ही साथ ।
शक्ति न अब तेरी चले, देख हमारे हाथ ॥
देख हमारे हाथ यदि तू शूरवीर योद्धा है ।
बदला सब लेने का मुझको, मिला आन मौका है ॥
पहुँचा दूंगा पर भव में । क्या इधर उधर जोहता है ।
यह वरमाला रखो यहां, कहूं साफ नहीं धोखा है ॥

दौड़

चूक लड़की ने खाई, चोर गल माला पाई ।
न्याय तलवार करेगी, शक्ति ही दुनिया में वरमाला
को आज वरेगी ॥

दोहा

एकत्रित हो सभी ने, किष्किन्धी लिया घेर।
गर्ज तर्ज हो सामने बोला ऐसे शेर॥

दोहा

हां मुझको भी आ गई, बात पुरानी याद।
बनते ही आये सदा, आपके हम दामाद॥
दामाद हमेशा आपके, सब हम बनते ही आये हैं।
खैंच खडग अब तक तुमने, गीदड़ ही धमकाये हैं॥
शस्त्र दिखाते जामतों को, जरा ना शर्माये हैं।
सहर्ष करेंगे स्वागत रण का, क्षत्री के जाये हैं॥

दौड़

जान की साथन माला, मैं हूँ इसका रखवाला।
सन्मुख क्यों नहीं आता, पीठ दिखा या रण में कायर खाली गाल बजाता॥

दोहा

बात बात में बढ़ गई, आपस में तकरार।
रण भूमि में उस समय, बजन लगी तलवार॥

दोहा

(किष्किन्धी का)

मैंढक सा क्या उछलता, मारूं उदर में लात।
पूछ बड़ों को जायके, हम तुमरे जामात॥

दोहा

मित्र घेरा देखकर, लंकपति भूपाल।
जंगी वस्त्र पहिन कर, नेत्र कीने लाल॥

नेत्र करके लाल भूप ने, फौजी बिगुल बजाई ।
वनमाला भी उसी समय, झट किष्किन्धा पहुँचाई ॥
लगा घोर संग्राम होन अति, शूरवीर बलदाई ।
नभ में लड़े विमान महा, घन घोर घटा सब छाई ॥

दौड़

लड़े दिल खुशी अपारा, शूरमा योद्धा भारा ।
किष्किन्धी नृप के भाई, क्रोधातुर हो विजयसिंह के हृदय सांग चलाई ॥

दोहा

विजयसिंह धरती गिरा, देखा तुरत नरेश ।
दृग मशाल तुल्य करे, दिल में रोष विशेष ॥

अश्वनी वेग ने क्रोधातुर हो, बाण खैंच कर मारा ।
लगा उरस्थल अन्धक के, परभव को किया किनारा ।।
आकाश धरन पर चले, सरासर मानो रक्त फुवारा ।
अग्नि बाण और नाग फांस तम, धुन्द बाण विस्तारा ॥

दौड़

दोनों ओर शूरमे, हुए खाक धूल में ।
लक किष्किन्धाराई, पराजय होकर दौड़ भाग दोनों ने जान बचाई ॥

दोहा

अश्वनी वेग ने अरि पर, दल बल दिया चढ़ाय ।
किष्किन्धा और लंक पर, लिया अधिकार जमाय ॥

निरघातज योधा बुलवाया, राजस्थान पर उसे बैठाया ।।
देश नगर पुर पाटन सारे, यथा योग्य दिए प्रेम अपारे ॥

लंका किष्किन्धा पति राई, लंका पाताल स्थिति बजाई।
यही विचारा समय वितावें, प्राप्त अवसर बदला पावें।

दोहा

अश्वनी वेग सहसार को, दिया राज्य का ताज।
दुनिया से दिल विरक्तकर, सारा आत्म काज॥

———

रावण-वंश

*** पाताल लंका वर्णन ***

दोहा

सुकेशी नृप के शिरोमणि, इन्दु मालिनी प्रवीण।
माली सुमाली मालवान्, पुत्र जाये तीन॥

दोहा

किष्किन्धा नृप दूसरा, श्री माला शुभ नार।
ऋक्षरज आदित्यरज, पुत्र दो सुखकार॥

पुत्र दो सुखकार, मधु पर्वत पर वास बसाया।
किष्किन्धा नाम दिया जिसका, नीति से राज चलाया॥
शक्ति का अवलोकन कर, जंगी सामान बनाया।
बहत्तर कला के जानकार दो पुत्र भूप हर्षाया॥

दौड़

उधर सहसार नृप भारी, चित्त सुन्दरी पटनारी।
अनुपम सुत जाया है, इन्द्र दिया तसु नाम तेज
इन्द्रवत् कहलाया है॥

दोहा

सुकेशी के सुतों के दिल में रोष अपार।
राज लिए बिना अपना, जीना है धिक्कार॥

जीना है धिक्कार जिन्हों का, राज करे शत्रु होते।
मनुष्य नहीं वह है, मृतक जो देख दुःख दिल में रोते॥
मानिंद स्यान के राना है, जो डण्डे खा छिप जा सोते।
परशूर वीर रण क्षेत्रों में, अपनी यह जान सफल खोते॥

दौड़

सहसा करी चढ़ाई, अति उत्साह मन मांहीं।
निरघातज नृप घबराया, पराजय करके भगा दिया
अपना अधिकार जमाया॥

दोहा

माली लंका अधिपति, किष्किन्धा सुर राज।
बदला लेकर खुश हुए, धरा शीश पर ताज॥

धरा शीश पर ताज खबर यह, इन्दर भूप सुन पाई है।
दल बल सबल विमान, सजाकर जंगी बिगुल बजाई है॥
घेरा लाया चहुँ ओर से, मेघ घटा सम छाई है।
वैश्रवण को दिया राज, माली की करी सफाई है॥

दौड़

प्रसन्न मन में अति भारा, आज शत्रु को मारा।
राज लिया अपना सारा, पाताल लंक में उधर सुमाली
के मन में दुःख भारा।

चौपाई

भूप सुमाली पाले लंका, रत्नश्रवा योधा सुत बंका ॥
साधे विद्यावन खण्ड जाई, शक्ति हो फिर करें चढ़ाई ॥

दोहा

जय विद्या साधन लिए, पुष्पोद्याने जाय।
लगीं यहां पर साधने, निश्चल ध्यान लगाय ॥

निश्चल ध्यान लगाय उधर हुवा, हेतु अद्भुत भारी ।
कौतुकमंगल व्योमविन्दु, नृप जिसके दो सुकुमारी ॥
कौशिका विवाही वैस्रवा, को पूर्व जात दुलारी ।
कैकसी पूछा वर अपना, तव ज्योतिषी कहे उचारी ॥

दौड़

महाकुसुमोद्यान में, कुमर एक बैठा ध्यान में ।
पति होगा यह तेरा, यदि लगाई देर फेर में
फेर दोष नहीं मेरा ॥

दोहा

इतना सुन कैकसी ने, कहा मात को आन ।
समझाकर आज्ञा लई, पहुँची बैठ विमान ।।
इधर उधर को भ्रमण कर, देखा एक स्थान ।
नल कुबेर सम शूरमा, बैठा लाकर ध्यान ॥

जब पुण्य रूप तन को देखा, तो प्रसन्नता का पार नहीं
देख देख मन भरा किन्तु, अभी आंखें हुई दो चार नहीं ॥
क्या सांचे में ढला जिस्म, इन्द्र भी देख शर्माता है ।
तब ही यह जन्म सफल जानू, हो इससे मेरा नाता है ॥

दोहा

निश्चय मेरा पुण्य भी, है वृद्धि की ओर।
रूप रंग शुभ वर्णने, लिया चित्त मम चोर॥
है आशा मुझको आज, मनोरथ मन चिन्ते पाऊँगी।
बिना किये अब बात, यहां से मैं ना कभी जाऊँगी॥
निकल गया यदि तीर हाथ से, पीछे पछताऊँगी।
राजी से नाराजी से, स्वीकार मैं करवाऊँगी॥

दौड़

समाधि जब खोलेगें, तभी मुख से बोलेंगे।
चाहे जितनी हो देरी, अब तो दिल मे ठान लई
बस बनूं चरण की चेरी॥
(तर्ज—ऋषभ कन्हैया लाला आगने में रिम झिम डोले)
देखो अनुपम आज सूरत मोहन गारी।
यौवन की कैसी बहार, खिली केसर क्यारी॥टेर॥
ऋतु अनुकूल वे बसंत मैं फूलों की डाली।
इष्ट भवर सुखकार, मकरंद का अधिकारी॥१॥
कब खोलेगे मानी ध्यान, मुझको क्षण क्षण भारी।
निश्चय पूर्व संयोग ने, विह्वल कर डारी॥२॥
ये ही मेरे सरताज, इस तन के अधिकारी॥
बाकी भाई पिता तुल्य प्रतिज्ञा हमारी॥३॥
धर्म शुक्ल दो ध्यान प्राणी को हितकारी।
बाकी शुभाशुभ कर्म भोगे नर क्या नारी॥४॥

दोहा

विद्या सिद्धि जब हुई, मानव सुन्दरी आन।
राजकुमार प्रसन्न चित्त खोला अपना ध्यान॥

खोला अपना ध्यान, सामने बैठी राजदुलारी ।
अद्‌भुत भोलापन मुखपर है, नल कुवेर बलिहारी ॥
चंद्रवदन पर गोल शुक्र, चौदस की भी उज्याली ।
सदाचार की रेखा भी, मस्तक पर पड़ी निराली ॥

दौड़

अंक में नहीं कसर है, लाल मुख बिम्ब अधर है ।
ढला सांचे में तन है, मींच खोल कर आँख कुमर ने सोचा मन ही मन है ॥

दोहा

क्या देवी ने आन के, धारा दर्शक रूप ।
या कोई नृप कन्यका, अद्‌भुत रूप अनूप ॥
क्या मेरी परीक्षा लेने, कोई देवी सन्मुख आई है ।
या कोई राजकुमारी जिसने, मुझपर नजर टिकाई है ॥
या कारण वश वन में आकर, दुखिया शरणा चाहती है ।
क्योंकि यह अबला इस उद्यान में, साथ रहित दिखलाती है ।।
कर्त्तव्य यही मेरा पहिला, इससे कुछ हाल मालूम करूं ।
यदि निराधार दुखिया कोई, तो सुख इसके अनुकूल करूं ॥
परीक्षा का कुछ कारण है, तो भी मुझको कुछ फिकर नहीं ।
क्योंकि अनुकूल है मन मेरा, प्रतिकूल का कोई जिकर नहीं ।
यदि है चोला पराधीन तो, आपत्ति कुछ आवेगी ।
पर यहाँ से तो अब चलना है, होगी सो देखी जावेगी ॥

दोहा

गुप्त दृष्टि से जिस समय, देखा अबला ओर ।
कैकसी अति खुश हुई, देख मेघ जिम मोर ॥

दोहा

कैसे यहाँ पर आगमन, कौन कहाँ पर धाम।
रूपराशि गुण आगरी, क्या है तेरा नाम॥
क्या है तेरा नाम भूप, किसकी हो राजदुलारी।
कारण क्या वन मे आने का, कहो सत्य सुकुमारी॥
साथ रहित हैं आप, या कोई आते और पिछाड़ी॥
सेवा हो मेरे लायक कुछ, सो भी कहो उचारी॥

दोहा

सिद्ध सभी मेरा हुआ, आई थी जिस काम।
कृपा और इतनी करें, बता दीजिये नाम॥
रत्न श्रवा मम नाम है, पिता सुमाली भूप।
विद्या साधन के लिए, सही वनों की धूप॥
सही वनों की धूप, कार्य सिद्ध हुआ मम सारा है।
चलने को तैयार शेष, यहाँ काम ना और हमारा है॥
जल्द उचारण करो मेरे लायक जो काम तुम्हारा है।
आती नजर कुमारी हो ऐसा अनुमान हमारा है॥

दौड़

काम मेरे लायक हो, आप को सुख दायक हो।
किन्तु अनुचित ना कहना, एकान्त अन्य कुमारी के
संग कर्म ना मेरा रहना॥

दोहा

अन्य नहीं समझे मुझे तुम निश्चय मम कंत।
चरण चंचरी वन चुकी हूं आयु पर्यन्त॥
मंगल पुरवर नगर व्योम, विन्दु की राज दुलारी हूँ।
आशा एक आप की पर हो, अब तक रही कुंवारी हूँ॥

बड़ी कौशिका बहिन मेरी, वैश्रवण भूप को ब्याही है।
और नाम कैकसी मैंने, तुम चरणों की सेवा चाही है।'

दोहा

हाथ जोड़ यह विनती, हो जावे स्वीकार।
आशा मम दिल को बंधे, आपका हो उपकार॥
आपका हो उपकार चाह है, वाग्दान पाने की।
इच्छा मेरी प्रबल, आपके चरणों में आने की॥
अर्धाङ्गिनी लो बना मुझे. बस और न कुछ चाहने की।
करवाये बिन स्वीकार विनती, मैं न कहीं जाने की॥

कैकसी गाना नं० ९

सेवा करने की मुझे, आज्ञा तो सुना देना।
वचन देकर के मेरी, आशा को बंधा देना॥ स्थायी॥
रुग्ण बन करके मैं, आई हूँ द्वारे तेरे।
करे जो कष्ट निवारण, वही दवा देना॥
आशा करके आई हूँ, मैं शरणा लेने।
निराश करके मेरी आशा न गंवा देना॥
उत्कण्ठा है मुझे, आशाजनक शब्दों की।
नाव मझधार पड़ी, पार तो लङ्घा देना॥
आयु पर्यन्त नहीं, आप विना लक्ष्य कोई।
शुक्ल है ध्यान मेरा, धर्म तुम बचा देना॥

दोहा

सुन सुकुमारी के वचन, सोच रहा सुकुमार।
मन ही मन में मौन हो, करने लगा विचार॥

क्या इसको कुछ हो रहा, जाति स्मरण ज्ञान ।
या यह रागान्धी हुई, बनी फिरे दुर्ध्यान ॥
कुछ भी हो किन्तु इसका, रङ्ग रूप ही अति निराला है ।
अवकाश समय सुकर्म, कारीगर ने सांचे में ढाला है ॥
और मात-पिता ने भी इसको क्या लाड-प्यार से पाला है ।
वर्तमान में आज अद्वितीय स्त्री रत्न निराला है ॥

रत्नस्रवा बहिर शिकस्त गाना नं० १०

यात्रा करके भारत की मैंने, चाहे कामिनी हजार देखी ।
तो गौरव चातुर्य रूप लावण्य, मे इसकी शोभा अपार देखी ॥
भंवर से बालों की गूंथी चोटी, गजब की पटियें झुका रही है ।
हेम तारों से गूंथी मोतिनसे मांग, दिल को चुरा रही है ॥
हस्तरेखा क्या अंगुली सूक्ष्म हैं,
शोभत लक्षण स्वभावे तनपर ।
गजब का गौहर करे है जौहर है, राज शान्ति का इसके मनपर ॥
मत्स्योदरी बिम्ब अधरी, शशी के सदृश गोल वदना ।
चम्पक डाली सी बाहों को लख, शर्म खाती है देव अंगना ॥
है मुख पे लाली दमक निराली, जुलफ नागिन सी काली काली ।
निढाल बिजली सी चमक आगे, फीकी लगती है सब उजाली ॥
कटीले नेत्रों के तेज बेशक, हिरण के चित्त मे खटकते होंगे ।
इस पुण्य तन को देख-देख कई, अपने सिर को पटकते होंगे ॥

शेर

पुण्य इसने पूर्व भव में, है अतुल कोई किया ।
जन्म इसमें आनकर, शोभन यह फल इसने लिया ॥
अनेकों दर्शक इसको, चाहना मे भटकते हैं ।
समय पूर्व ही मार्ग में हुए, बेयल शटकते हैं ॥

मिलान

जैसी पद्मा ये वैसी हमने, ना घर किसी के है नार देखी।
तो शान शौकत व रूप, लावण्य में इसकी शोभा अपार देखी॥

दोहा

अब उत्तर दूं मैं इसे, हां ना में से कौन।
या कुछ और विचार लूं, जरा धार कर मौन॥
बड़ी कौशिका बहिन इसी की, वैस्रवा को वियाही है।
यह शत्रु परम हमारे की, जो माली यहाँ पर आई है॥
विद्या सिद्धि वाद मुख्य, आई लक्ष्मी कैसे छोड़ूँ।
कोई विघ्न न डाल देवे शत्रु, सहसा नाता कैसे जोड़ूँ॥
समय सोच कर बात करो, बुद्धिमानों का कहना है।
यदि हुई देर तो भेद समझ, शत्रु ने कब यह सहना है॥
व्योम बिन्दु पर भी निश्चय, प्रभाव उन्हीं का होना है।
इसलिये करेंगे धूमधाम, तो मानो सर्वस्व खोना है॥
है निश्चय प्रेम कैकसी का, मम साथ कभी ना छोड़ेगी
यदि मात-पिता ना माने तो, उनका भी कहना मोड़ेगी॥
पर अस्थान मित्रता के नृप से, शत्रु का नाता करना है।
जो होना चाहिये रस ही नहीं, तो फिर क्या साथ पकड़ना है॥
दो दिन में ही सहमत होकर, यदि सब ही कारज कर लेवें।
तो निश्चय इष्ट हमें होगा, नहीं क्यों आपत्ति सिर लेवें॥
अनुराग इसे यदि पूरा है, तो फिर देरी का काम नहीं।
नहीं पता सभी लग जावेगा कि, प्रेम का नाम निशान नहीं॥

दोहा (रत्नस्रवा)

क्या वह दूँ मैं अब तुम्हें, अपने मुख से भाप।
हां मुश्किल यदि ना कहूं, तो होंगे आप उदास॥

किन्तु जो भी कुछ कहना है, सो तो कुछ कह ही देते हैं ।
और शक्ति के अनुसार बात, स्वीकार भी हम कर लेते हैं ॥
यह सर्व कार्य करने में, केवल दो दिन स्वतन्त्र हूं ।
घर गया तो मात-पिता जानें, क्योंकि मैं फिर परतन्त्र हूं ॥
वचन बद्ध हो चुका मुझे जल्दी उत्तर मिलना चाहिये ।
क्योंकि अब मैंने जाना है, और आप भी निज मार्ग जाइये ॥

दोहा (पद्मा)

प्रथम कहा जो आपने, हमें वही स्वीकार ।
मीन मेप आदि कोई, होगा नहीं विचार ॥
पहर एक बस और आपको, यहां बैठे रहना चाहिये ।
अरु लिये हमारे अनुग्रह कर, यह कष्ट उठा लेना चाहिये ॥
आज्ञा मुझको देवें अब, कार्य सफल बनाने की ।
सब मात-पिता से कहूँ बात, व्यावहारिक ढंग रचाने की ॥

दोहा

आज्ञा ले कैकसी गई मात-पिता के पास ।
जो जो इसको इष्ट था, कहा सभी कुछ भाप ॥
कुछ पूर्वले सयोग, ज्योतिषी ने कुछ दृढ़ बनाया था ।
कुछ कैकसी मे अनुराग मात क्या व्योम बिन्दु हर्षाया था ।
उसी समय सहप कुमर को, राज महल ले आये हैं ।
और अति उत्सव से उसी रात को, पाणि ग्रहण कराये हैं ॥
दिल खोल के राजकुमारी का, अति धूमधाम से विवाह किया ।
अपना जामात बना करके, फिर यथा योग्य धन माल दिया ॥
कुसुमोत्तर नगर बसाके नया, अब खुशी से वहां पर रहन लगे ।
पुण्य रति अब चढ़ती है, अपने मुख से यों कहन लगे ॥

दोहा

एक समय महारानी जी, पहिन गले फूलमाल।
दृश्य देखती स्वप्न में सुनलो उसका हाल॥
प्रबल सिंह नभ से उतरा, गज कुम्भस्थल को दलता हुआ।
अद्भुत लहरें चिंहाड़ शब्द, प्रवेश मेरे मुख करता हुआ॥
जब खुली आंख महारानी की, स्वप्ने पर ध्यान जमाया है।
करके निश्चय महाराजा पे, आकर सब हाल बताया है॥

दोहा

हाल स्वप्न का नृप कहे, सुन रानी मम बात।
पुत्र जन्मेगा तेरे, कटें सभी सन्ताप॥
स्वप्न अर्थ धारण किया, रानी चतुर सुजान।
शत्रु के सिर पग धरूं, गर्भ प्रभावे ध्यान॥
तलवार काढ देखे मुख को, अंग तोड़ मरोड़ दिखाती है।
सम्पूर्ण शत्रु नाश करूं, कभी ऐसा शब्द सुनाती है॥
कभी ऐसा दिल में चाहती है, इन्द्र भूप का ताज हरूँ।
तीन खण्ड में आन मनाकर, अखिल भूमि का राज करूँ॥

दोहा

पुत्र जब पैदा हुआ, बरती खुशी अपार।
नाच रंग शोभा अधिक, खुले दान भण्डार॥
गिरि बेल मानिन्द पुत्र निर्भय, नित्य वृद्धि पाता है।
सर्व सुलक्षण देख देख कर, जन समूह हर्षाता है॥
पूर्व देव भूपेन्द्र ने था, नौ माणिक्य का हार दिया।
वह हार उठाकर राजकुंवर ने, अपने गल में डाल दिया॥

दोहा

देख तमाशा पुत्र का, रानी खुशी अपार।
पकड़ भूप पर ले गई, दिखलाने को हार॥
स्वामी आभूषण गृह, खोला था इस बार।
स्वयम् कुंवर ने हार यह लिया गले में डार॥
है देवाधिष्ठित हार आज तक, किसे नहीं पहना गल में।
अविनय इसकी करने पर भी, भय खाते थे सब मन में॥
मानिन्द पूजन के रक्खा था, यह पहिन खेल रहा लीला में।
और नौ प्रतिबिम्ब पड़े ऐसे, जैसे कि दमक अरीसा में॥

दोहा

छवि देख कर पुत्र की, मन में खुशी विशेष।
दान पुण्य उत्सव करो, यह मेरा आदेश॥
इधर कान लगा करके, अब सुनले बात कहूं रानी।
सुमाली गया था दर्शनार्थ, मुनि ज्ञानवन्त भाषी वाणी॥
नौ माणिक्य का हार खुशी से, स्वयम् जो बालक पहिनेगा।
शत्रु होवें आधीन सभी, और तीन खण्ड में फैलेगा॥

दोहा

नव प्रतिबिम्ब नौ माणिक्य, दशमा सहज सुभाय।
पिता नाम दशमुख दिया, दशकन्धर कहलाय॥
अबके रानी स्वप्न में देखा, देव विमान
सुत जाया तेजेश्वरी, भानुकर्ण तसु नाम॥
अपर नाम था कुम्भ करण, दिनदिन प्रति कला सवाई है।
अब बार तीसरा पुत्री का जो, शूर्पनखा कहलाई है।
शुक्ल जरा देखें आगे, यह कैसा रंग खिलायेगी।
ससुर गृह और पितृ कुल, इन दोनों का नाश करायेगी॥

दोहा

देखा चौथे स्वप्न मे, सोलह कला निधान।
ज्योतिपियों का शिरोमणि, ऐसा चन्द्र विमान ॥
जब पैदा हुआ तब देख सुलक्षण, यह राजा सुनले रानी।
शुभ नाम विभीपण देते हैं, सत्यवादी है उत्तम प्राणी ॥
यह ऐसा सरल स्वभावी है, हित सर्व मात्र का चाहेगा।
निज पर की गणना नहीं इसके, सत्यपक्ष चित्त लायेगा ॥

दोहा

एक समय दशकन्धर की, दृष्टि गगन में जात।
आता देख विमान एक, लगा पूछने वात ॥
वृतान्त कहो इसका माता, जो आज सामने आता है।
मेरे आगे कोई चीज नहीं क्यों, इतनी दमक दिखाता है ॥
और मेरे मन में आता है, विमान तोड़ चकचूर करुं।
निज वक्षस्थल के तले दवा, इसका धड़ से सिर दूर करूं ॥

दोहा

प्रभाविक सुनकर-वचन, रानी दिल हर्षाय।
पूर्ववार्त्ता याद कर, हृदय गया मुर्झाय ॥
झट नेत्रों मे जल भर लाई, गद् गद् स्वर से वतलानेलगी।
मुझ भगिनी पति वैश्रवण भूप, दशकन्धर को समझानेलगी
यह स्वाधीन है इन्द्र के, और पुण्य अतिशय छाया है।
तुम पितामह को मार लंक गृही, राजा इसे वनाया है ॥

दोहा

घनवाहन भूपाल से, तुम पितामह पर्यन्त।
अखंड राज्य था लंक का, अब न रहा कुछ तन्त ॥

मान माहात्म्य कहां जिन्हों की, जीते घुस जावे धरती ।
आरम्भ कहो किस गणना में, उलटी दुनिया निन्दा करती ॥
अब शुभ दिन वही धन्य होगा, शत्रु की शक्ति तोड़ेगा ।
तब पुत्रवती हूँ समझूंगी, सम्बन्ध लंक से जोड़ेगा ॥

दोहा

देखूंगी जब अरि को, मुझ कारागर मांह ।
तब ही आत्म प्रसन्न मम, इस दुनिया के मांह ॥
कुसुम व्योमवत् सब आशायें, हृदय मेरा जलाती हैं ।
जैसे बागड़ की प्रजाएं, सब घटा देख रह जाती हैं ॥
क्योंकि शत्रु शक्तिशाली, और पीठ भी जिसकी भारी है ।
जो तुमने पूछी बात मेरे, हृदय में लगी कटारी है ॥

दोहा

माता की जब यह सुनी, हृदय विदारक बात ।
जननी के यह भाव सब, समझे तीनों भ्रात ॥
तीनों राजकुमार परस्पर, ऐसे जोश दिखाते हैं ।
और उछल गर्ज करके सब ही, माता को धीर बन्धाते हैं ।
होनहार बाल अपने, भावी कर्त्तव्य बताने लगे ।
क्षत्राणी का दूध पिया था, उसका असर दिखाने लगे ॥

दोहा

विभीषण कहे मात जी, हैं, क्षत्री के पूत ।
आशा तब पूर्ण करें, तो ही जान सपूत ॥
तोही जान सपूत भ्रात दशकन्धर योधा भारा ।
प्रगट होत ही भानु के, तारागण करें किनारा ॥
और साथ में कुम्भकर्ण हैं, वीर महा बलधारा ।
अष्टापद को देख केसरी, झट ही करे किनारा ॥

दौड़

मात मैं पुत्र तुम्हारा, जन्म इस कुल में धारा।
गर्ज मैं जब लाऊंगा, मानिन्द बिजली के कड़क
पड़ कुम्भस्थल दल जाऊंगा ॥

दोहा

दशकन्धर कहने लगा, दे माता आदेश।
विद्या आवें साध के, शक्ति बढ़े विशेष ॥
आज्ञा ले निज मात की, पहुंचे वन मंझार।
शुद्ध तन मन कर साधली, विद्या एक हजार ॥
भानुकर्ण ने पांच लई, और चार विभीषण पाई है।
षष्ठोपवास कर शस्त्र साधा, चन्द्रहास वरदाई है ॥
क्षेम कुशल से घर आये, सब दिन २ कला सवाई है।
एक शेर दूजे काठी अब, देख मात हुलसाई है ॥

दोहा

विद्या साधन की विधि, ग्रन्थों से पहिचान।
कथन यहां पर ना किया, समझो चतुर सुजान ॥
गिरि वैताड दक्षिण श्रेणी, सुर संगीत पुर जान।
मय नरेश केतुमती, रानी कला निधान ॥
मंदोदरी कन्या थी जिसके, जैसे नल कुबेर कुमरी।
रत्नश्रवा दशकंधर सुत से, नृप ने उसकी शादी करी ॥
अब लगा पुण्य भी बढ़ने को, कोयल सम मीठी वाणी है।
शक्रेन्द्र के घर इन्द्राणी ऐसे मंदोदरी रानी है ॥

दोहा

एक दिवस गये भ्रमण को, दम्पति बैठ विमान।
फिरती राजकुमारियां, एक बाग में आन ॥

दोहा

रण में जुट गये शूरमा, पड़ी लंक में त्रास।
हाहाकार करने लगे, तज जीने की आस॥
पैदल से पैदल लड़ते हैं, दारू गोलों का पार नहीं।
कहीं रक्त फुवारे चले सरासर, दल बल का शुम्मार नहीं॥
शक्ति देख दशकंधर की, शस्त्र योद्धों ने डाल दिये।
जीत लंक स्वाधीन करी, सब मात मनोरथ सार दिये।

गाना नं० ११

(तर्ज—इस हवन कुण्ड पे रे सिया॥)

देश अपने को हम ने रे पूर्ण स्वतन्त्र बनाया है।
हुई पूर्ण कामना रे, हर्ष हृदय न समाया है॥ टेक॥
बाल पने में जो माता ने शिक्षा हमें दई थी,
देश धर्म गुरु जन भगति शुभ हृदय समा गई थी।
चरितार्थ हुई सवरे, खुशी का बादल छाया है॥ १॥
प्रेम एकता ही दुनिया में जीवन कहलाता,
खेद नर खर श्वान पशु तुल्य वृथा मर जाता।
है नाम उन्हीं का रे, धर्म हित सर्वस्व लाया है॥ २॥
धर्म न्याय लिये जीना मरना भगवन बतलाया,
स्वर्ग अपवर्ग निर्मल होकर उसने ही पाया।
सचिदानन्द पद रे सदा वीरों ने पाया है॥ ३॥
शान्त वीर रस धारण कर, कर्तव्य को पहिचानो।
शुक्ल शुद्ध व्यवहार सहित अध्यात्म को जानो।
यह रंग विरंगी रे सभी पुद्गल की माया है॥ ४॥ इति॥

च

चर्म शरीरी धनदत्त राया। सम्यक् चारित्र चित लाया॥
शत्रु मित्र पर सम परिणाम। तप जप कर पाया सुख धाम॥

दोहा

दशकन्धर लंका लई, पुष्पक लिया विमान।
मात मनोरथ सिद्ध किया, पुरुषा यह प्रमाण॥
भुवनालंकृत गज मिला, नग वैताड के मूल।
यह भी होता रत्न इक, मन इच्छा अनुकूल॥
अब सुनो जिक्र किष्किन्धा का, जहाँ पर हो रही लड़ाई है।
सूर्य्यरज और ऋक्ष सुरज, किष्किन्धी सुत बलदाई है॥
यमराज उधर था महावली, जहाँ युद्ध अति घनघोर हुआ।
सूर्य ऋक्ष को यमराजा ने, कारागार में ठोस दिया॥

दोहा

लिये सहायता के तुरत, खेचर बैठ विमान।
रावण से आकर कहा, पहिले कर प्रणाम॥
महाराज तुम्हारे होते हुए, किष्किन्धी नृप सुत कैद पड़े।
अब आप सहाय करो जल्दी, मैदान में शूरे अड़े खड़े॥
प्रेम बड़ों में ऐसा था, वह इनका हुक्म बजाते थे।
और यह भी उनके लिये, कष्ट में अपना खून बहाते थे॥

गाना नं १२

(तर्ज—सिद्मते धर्म पर)

मनुष्य ही मनुष्य के काम आवे सदा,
फर्ज अपना हो दुनिया में तब ही अदा ॥टेक॥
किसी प्राणी पै विपदा कोई आ पड़े,
होवे शक्ति के अन्दर खबर फिर पड़े।
अपना कर देवो उसके लिये सब फिदा ॥१॥

जब पड़ी नजर दशकंधर की, विमान उधर को झोंक दिया।
फिर उनर पास दो नैन मिला, कर प्रेम भाव सब पूछ लिया॥
गिरि मेचरथ भूपालों की, पुत्री सभी कहाती थीं।
और भ्रमण करन को सभी सहेली इसी बाग में आती थीं॥

दोहा

काम बाण जब लगत हैं, सुध बुध दे बिसराय।
इज्जत डाले धूल में, यह है काम स्वभाव॥
यह मान बिना का सभी प्रेम, शीशे की लीक बना डारे।
और शर्म धर्म को फेंक कूप में, चित्त आवे सो कर डारे॥
आपस में सहमत होकर, सबने वहां गन्धर्व विवाह किया।
फिर बैठ विमान में जल्दी से, विमान का चक्कर घुमा दिया॥

दोहा

पद्मावती के पिता को, लगी खबर जब जाय।
क्रोधातुर राजा हुआ, दल बदल दिया चढ़ाय॥

दोहा

यह दृश्य भयानक देख महा, पद्मावती मन में घबराई।
तब रत्न श्रवा सुत ने सन्मुख, हो अपनी शक्ति बतलाई॥
पिंगल राजा तब सबामी, तब शूरवीर ने गर्ज किया।
शत्रु के दल में भगी पड़ी, नृप नाग फांस में जकड़ लिया॥

दोहा

ज्योतिपुर पति वीर नरेश्वर, नन्दवती की जाई जो।
पंकजश्री कमलवर नयनी, विभीषण को व्याही वो ॥

दोहा

मंदोदरी के सुत हुआ, महाबली सुख धाम।
लक्षण व्यंजन देख, शुभ मेघ ाद दिया नाम ॥
मेघवर्ण सम नयन हैं, दूजा सुत अभिराम।
मेघवाहन वारु कुमर, मात-पिता दिया नाम ॥
जब देखा शक्ति पूर्ण है, तब छेड़ छाड़ करवाने लगे।
श्री कुम्भकर्ण और भ्रात विभीषण, लूट लंक में पाने लगे।
फिर वैश्रमण ने भेजा दूत, सुमाली के समझाने को।
जो चाहिये मुख से माग लेवो यदि नहीं तुम्हारे खाने व

दोहा

राजदूत ने जा कहा, नमस्कार महाराज।
अब आज्ञा उनकी सुनो, जो मेरे सिर ताज ॥
महाराजा ने फरमाया है, यह क्षत्री कुल का धर्म नहीं।
जो लूट मार कर ले जाना, क्या आती तुमको शर्म नहीं ॥
जिस जिस वस्तु की चाहना है, ले जावो यहां कुछ कमी नहीं।
कल्याण आप का तभी तलक, जब तक रणभूमि जमी नहीं ॥

दोहा

सुनी दूत की जिस समय, रसना कटुक गम्भीर।
अर्ध चन्द्र धक्का दिया, दशकंधर बलवीर ॥
जा कायर धनदत्त को कह दे, किसको तलवार दिखाता है।
अब सावधान हो जल्दी से दशकंधर लंका आता है ॥
रणभेरी जिस समय बजी, सब शूर वीर हर्षाये हैं।
झट उसी समय जा लंका पै, अपने विमान अड़ाये हैं ॥

दोहा

रण में जुट गये शूरमा, पड़ी लंक में त्रास।
हाहाकार करने लगे, तज जीने की आस॥
पैदल से पैदल लड़ते हैं, दारू गोलों का पार नहीं।
कहीं रक्त फुवारे चले सरारर, दल बल का शुम्मार नहीं॥
शक्ति देख दशकंधर की, शस्त्र योद्धों ने डाल दिये।
जीत लंक स्वाधीन करी, सब मात मनोरथ सार दिये।

गाना नं० ११

(तर्ज—इस हवन कुण्ड पे रे सिया॥)

देश अपने को हम ने रे पूर्ण स्वतन्त्र बनाया है।
हुई पूर्ण कामना रे, हर्ष हृदय न समाया है॥ टेक॥
बाल पने में जो माता ने शिक्षा हमे दई थी,
देश धर्म गुरु जन भगति शुभ हृदय समा गई थी।
चरितार्थ हुई सबरे, खुशी का बादल छाया है॥ १॥
प्रेम एकता ही दुनिया में जीवन कहलाता,
खेद नर खर श्वान पशु तुल्य वृथा मर जाता।
है नाम उन्हीं का रे, धर्म हित सर्वस्व लाया है॥ २॥
धर्म न्याय लिये जीना मरना भगवन बतलाया,
स्वर्ग अपवर्ग निर्मल होकर उसने ही पाया।
सचिदानन्द पद रे सदा वीरों ने पाया है॥ ३॥
शान्त वीर रस धारण कर, कर्तव्य को पहिचानो।
शुक्ल शुद्ध व्यवहार सहित अध्यात्म को जानो।
यह रंग विरंगी रे सभी पुद्गल की माया है॥ ४॥ इति॥

च

चर्म शरीरी धनदत्त राया। सम्यक् चारित्र चित लाया॥
शत्रु मित्र पर सम परिणाम। तप जप कर पाया सुख धाम॥

दोहा

दशकन्धर लंका लई, पुष्पक लिया विमान ।
मात मनोरथ सिद्ध किया, पुरुषा यह प्रमाण ॥
भुवनालंकृत गज मिला, नग वैताड के मूल ।
यह भी होता रत्न इक, मन इच्छा अनुकूल ॥
अब सुनो जिक्र किष्किन्धा का, जहाँ पर हो रही लड़ाई है ।
सूर्यरज और ऋक्ष रज, किष्किन्धी सुत बलदाई है ॥
यमराज उधर था महाबली, जहाँ युद्ध अति घनघोर हुआ ।
सूर्य ऋक्ष को यमराजा ने, कारागार में ठोस दिया ॥

दोहा

लिये सहायता के तुरत, खेचर बैठ विमान ।
रावण से आकर कहा, पहिले कर प्रणाम ॥
महाराज तुम्हारे होते हुए, किष्किन्धी नृप सुत कैद पड़े ।
अब आप सहाय करो जल्दी, मैदान में शूरे अड़े खड़े ॥
प्रेम बड़ों में ऐसा था, वह इनका हुक्म बजाते थे ।
और यह भी उनके लिये, कष्ट में अपना खून बहाते थे ॥

गाना नं १२

(तर्ज—खिदमते धर्म पर)

मनुष्य ही मनुष्य के काम आवे सदा,
फर्ज अपना हो दुनिया में तब ही अदा ॥टेक॥
किसी प्राणी पे विपदा कोई आ पड़े,
होवे शक्ति पे अन्दर खबर फिर पड़े ।
अपना कर देवो उसके लिये सब फिदा ॥२॥

देश धर्म गुरु संघ सेवा करे,
यो ही दुनिया की क्या मोक्ष लक्ष्मी वरे।
पाप अष्टादशों से बचे सर्वदा ॥३॥
शुक्ल निवृत्ति की तरफ ही बढ़ो, और भावों से सर्वज्ञ वाणी पढ़ो।
हो मही बदय अपना ये ही मुद्आ ॥४॥

दोहा

सुनते ही दशकन्धर ने, दी सेना पहुंचाय।
फिर ललकारे आप जा, छक्के दिये छुड़ाय॥
जब सुनी वात दशकन्धर है, तो रंग सभी के विगड़ गये।
लगे भागने जान बचा कर, योद्धे रण में विछड़ गये॥
यह दृश्य देख यम घबराया, बस अन्त पीठ दिखलाई है।
सूर्य रक्ष के बन्ध छुड़ा, रावण ने प्रीति बढ़ाई है॥

दोहा

इन्द्र को झट दी खबर, विद्याधर ने आन।
किष्किन्धा लंका लई, दशकन्धर ने आन॥
रूप अति विकराल बना, मानो आपत्ति आई है।
अनुमान नजर ये आते हैं, कि सबकी आज सफाई है॥
पराजय हो यम भी आ पहुँचा, जो-जो बीता बतलाया है।
सब इन्द्र भूप को सुनते ही झट क्रोध बदन में छाया है॥

दोहा

सुनते ही सब वार्ता, लगी हृदय में आग।
कोप गर्ज ऐसे करे, जैसे जहरी नाग॥
तोड़ दिये दो लोकपाल, मम इन्द्रपन में कसर पड़ी।
जा पीलू शक्ति रावण की, जैसे घानी अन्दर ककड़ी॥

जब देखा तेज मन्त्रियों ने, सब इन्द्र को समझाने लगे।
कुछ सोच समझकर काम करो, सब द्रव्य काल बतलाने लगे॥

दोहा

सुर सुन्दर संग्राम में, जिसने दिया हराय।
लंका किष्किन्धा लई, शक्ति बड़ी कहाय॥
जिस कारण जा करें जग, वह काम नहीं अब बनना है।
जलती ज्वाला बीच, पतंगों के समान जा जलना है॥
आपस में सहमत होकर, अन्तिम यह सबने पास किया।
सुर संगीत प्रान्त यम को देकर, वहीं बात को दाब दिया॥

दोहा

ऋक्ष नगर ऋक्ष राज को, किष्किन्धासुर राज।
दे आधीन अपने किये, दिन दिन बढ़े समाज॥
फिर गायन रंग अति होने लगे, जय जय शब्द ध्वनि न्यारी।
चतुरंगी सेना सजी गगन में, धूम विमानों की न्यारी॥
अब लंका में प्रवेश किया, दशकंधर दान किया भारी।
दई जागीर योद्धों को, घर घर मंगल गावें नारी॥

दोहा

सूर रज के शिरोमणि, इन्दुमालिनी नार।
बाली सुत जिसके हुआ, शूर वीर बलधार॥
पुनरपि सुत दूजा हुआ, सुग्रीव दिया तसु नाम।
सुप्रभा हुई कन्या का, तीजे शुभ अभिराम॥
ऋक्ष रज घर भामिनी, हरिकन्ता शुभ नाम।
नील और नल सुत हुए, सुन्दर कला निधान॥
सुर रज ने किष्किन्धा का, बाली सुत को राज दिया।
और मन्त्री पद पर योग्य समझ, सुग्रीव कुमर को नियत किया॥

विरक्त हुआ मन भोगों से, संयम व्रत नृप ने धारा है।
तप जप संयम आराधन कर, बस आत्म कार्य सारा है॥

दोहा

एक दिवस गया भ्रमण को, दशरुंधर भूपाल।
पीछे जो भी कुछ हुवा, सुनो सभी वह हाल॥

शूर्पनखा का चाल चलन, प्रतिकूल था शुभ अबलाओं से।
और काई पैदा होती है, जैसे कि श्रेष्ठ तालावों से॥
अन्य एक छोटी रियासत का, राजकुमर था खर दूषण।
प्रिय विलासिता को ही जिसने, समझा था अपना भूषण॥
हुवा परस्पर मेल इन्हों का एक मर्ज के रोगी थे।
दश अन्धों में अन्धे यह भी अशुभ कर्म के भोगी थे॥
या ले भागी या ले भागा कुछ समझे दोनों भाग गये।
या यों समझें कि एक दूसरे का करके अनुराग गये॥

दोहा

पाताल लंक मे गिरि एक देख किया स्थान।
मोह एक पैदा किया, और जङ्गी सामान।

एक दिन लंक पाताल के, भूपति चन्द्रोदर को मार दिया।
छल बल करके खर दूषण ने, फिर राज ताज संभाल लिया॥
अनुराधा श्री महारानी जो, सभी गुणों की ज्ञाता थी।
थी धर्मरत गौरव वाली, पतिव्रता जग विख्याता थी॥

वीर त्राध

दोहा

रानी पे आपत्ति का आकर गिरा पहाड़।
इससे वचने के लिये करने लगी विचार॥
यह दृश्य भयानक ऐसा था, योधे भी धीरज खोते थे।
प्रलय काल भी आ पहुंचा. अनुमान ये जाहिर होते थे॥
अनुराधा ने समझ लिया, अब यहां पर रहना गलती है।
क्योंकि इस शक्ति के आगे, ना पेश हमारी चलती है॥

दोहा

बुद्धिमान् करते सदा, काम समय अनुसार।
अनुराधा ने भी किया, हितकर निजी विचार॥
नयनों से नीर वरसता था, महारानी के जो हितैपी थे।
मिल गये वहुत खर दूपण से, जो कृतघ्नी और द्वेपी थे॥
लिये सदा के पति परमेश्वर, छत्राणी से दूर हुआ।
और विना गर्भ ना पुत्र कोई, होनी का ध्यान क्रूर हुवा॥
जो भी कुछ हाथ लगा रानी के, हीरे पन्ने आभूपण।
कर साहस वहां से निकल चली, निज कर्मों को देती दूपण॥

गाना नं १३

कर्मों के देखो सारे, कैसे हैं जाल जी।
कोई फिरे वन वन में, कोई निहाल जी॥
कल क्या दृश्य था सामने, और आज मेरे क्या है।
आगे पता क्या आयेगा, मुझ पर ववाल जी॥
शरणागत आते थे, जिन्हों का आसरा करके।
हम निराधार क्या कर्मों ने, कीये पैमाल जी॥

जिस दिन मैं आई थी, बजे थे बाजे शाहाने ।
यह दिन दिखलाये कर्मों ने, किया कमाल जी ॥
कहां ठाठ राजधानी का, कहां आज वन खंड है ।
मैं स्वामी सेवक ही न हूँ, जीना मुहाल जी ॥
हृदय की अग्नि शान्त अब, नहीं होगी रोने से ।
पुरुपार्थ अब करना होगा, मुझको विशाल जी ॥
पुरुपार्थ द्वारा जीव हो, कर्मों से स्वतन्त्र ।
होता है सिद्ध बुद्ध अजर जहां पहुँचे ना काल जी ॥
पुरुपार्थ हीनों का नहीं अधिकार जीने का ।
और पराधीन यह जिंदगानी, होगी जजाल जी ॥
पालन करूं इस बच्चे को, जो होने वाला है ।
दिलवाएं हक इसका, इसे ये ही ख्याल जी ॥
ऐसी विपत्ति मनुष्य पर, आया ही करती है ।
इस कर्म गति से बचा रहे, किसकी मजाल जी ॥
क्षत्री धर्म कहता सदा, गौरव पर मरना सीखें ।
यश लेने की कोई शुक्ल युक्ति निकाल जी ॥

दोहा

क्षत्राणी ने हृदय में की अंकित यह बात ।
बन में जैसे सिंहनी दिन नहीं गिनती रात ॥
घनघोर घटा मानिन्द निश्चय, विपदा रानी पै छाई थी ।
या यो समझें चीलों की न्याईं, आपत्ति मण्डलाई थी ॥
पतिव्रता देवी इस कारण, नयनो से नीर बहाती थी।
अवलम्बित थी निज आशा पर, और ऐसे कहती जाती थी ॥

दोहा

अशुभ कर्म का ही हुआ, निश्चय में कोई जोर ।
किन्तु यहा व्यवहार भी, कहता है कुछ और ॥

कर्त्तव्य किया खर दूपण जो, नीति व्यवहार से वाहिर है ।
अन्याय का सिर होता नीचे, यह उदाहरण जग जाहिर है ॥
अन्याइयों से जो डरता है, वह भी संसार में कायर है ।
अन्याय के आगे दव जाऊं, मेरी जमीर से वाहिर है ॥

आनन्द पति के साथ गया, और ठाठ-वाट सव रहने का ।
कर्त्तव्य है अव इस दुःख को भी, सन्तोप के द्वारा सहने का ॥
जो काल के सन्मुख लड़ता है, उसको नहीं काल भी गहने का ।
यदि गह भी ले तो डर क्या है, जव धर्म है तन के वहने का ॥
क्षत्री पैदा करने वाली, ना दुनिया में भय खाती है ।
लिये धर्म के और शुभ नीति के, वह खेल जान पर जाती है ।
अन्यायी क्रूर अधर्मी सव, मेंढक होते वरसाती हैं ।
या यों समझो कुछ समय लिये तारे होते प्रभाती हैं ॥
न्याय तोड़ कर अन्यायी, जो पद अन्याय का पाते हैं ।
ऐसे ही जो अन्याय को तोड़ें सो न्यायी कहलाते हैं ॥
अपना-अपना मौका है, यहाँ द्वेप की कोई वात नहीं ।
दृष्टिगोचर दो शक्ति हैं, पर एक एक के साथ नहीं ॥

दोहा

प्रतिपक्षी है पुण्य का, पाप प्रत्यक्ष कहाय ।
जो मार्ग सत्य धर्म का, अधर्म का मग नाय ॥

दिवस किस तरह शुभ परमाणु लेकर सन्मुख आता है ।
प्रतिकूल अंधेरा रजनी का, कैसा प्रभाव जमाता है ॥
दुर्जन सज्जन का फर्क यही धनी और निर्धनी में है ।
जो अन्तर साता असाता में वही गुणी और निर्गुणी में है ॥
जड़ चेतन कोई चीज नहीं जिसका कोई प्रतिपक्षी ना हो ।
यह काम ठीक वनता ही नहीं, जिस काम में दिलचस्पी ना हो ॥

इस गिरितुङ्ग पर चढ़कर मैं निज नगरी ओर निहार तो लूं ।
कुछ पवन व्योम की सेवन कर थोड़ा सा और विचार तो लूं ॥

दोहा

महारानी ने जब लखा अपनी नगरी ओर ।
घाव नमकवत् और भी, बढ़ा महा दुख घोर ॥

पतिव्रता ध्यान पति का कर, हो निश्चय हाल बिहाल गई ।
किन्तु अपने आत्मबल से इस मन को तुरंत संभाल गई ॥
अरुणा वर्त की लहरों के सम, मोह ममता को टाल गई ।
थी आशा वादिन आशा कर, प्रतिज्ञा और कमाल गई ॥

गाना नं० १४

(फंसे जो पाप में प्राणी वही ना)

प्रतिज्ञा आज करती हूँ यही करके दिखाऊंगी ।
राज का ताज अपने उदर के सुत को दिलाऊंगी ॥१॥
तरक्की धर्म की व देश की नहीं होती है रोने से ।
धैर्य दिल को दे करके किसी जंगल में जाऊंगी ॥२॥
सदा अन्याय को तोड़े वही न्यायी कहाते हैं ।
करूं उद्यम वही शोभन सभी साधन जुटाऊंगी ॥३॥
यह प्राणी मोक्ष लेता है तो फिर दुनिया की वस्तु क्या ।
शुक्ल मैं आशा वादिन हूं तो फल आशा के पाऊंगी ॥४॥

दोहा

त्याग गये मुझको, मेरे प्राण पति आधार ।
अब निरर्थ मेरे लिये यह सोलह शृङ्गार ॥
कर्त्तव्य सभी अपना मुझको, पालन अवश्य करना होगा ।
व्यवहार यही है दुनिया का, निश्चय एक दिन मरना होगा ॥

था वास एक दिन वस्ती का, अब जंगल में रहना होगा।
प्रतिकूल विपत्ति का समूह, अपने सिर पर सहना होगा॥
सदाचार सादापन ही, यह अब से मेरा भूपण है।
समयानुसार पुरुपार्थ, करने में ना कोई दूपण है॥
आशा वादिन हूँ निश्चय, आशा मेरी फल लायेगी।
पाप उदय खुस गई सम्पत्ति, पुराय उदय मिल जायेगी॥
जो नाव भँवर में पड़ी हुई, पुरुपार्थ से तिर जायेगी।
सर्वस्व लगा कर पति संपत्ति, हरी भरी लहरायेगी॥

दोहा

ससुर भूमि गृह नगर को, करती हूँ प्रणाम।
अवसर पाकर हर्प से, फेर मिलूंगी आन॥

है पास पति का रत्न मेरे, वाकी सम्पत्ति का फिकर नहीं।
इस पौदे की रक्षा के विन, इस समय जयां पर जिकर नहीं॥
क्षत्री की हूँ सुता वीर योद्धा, वर की मैं रानी हूँ।
और चण्डी हूं शत्रु के लिये, निज सुत के लिये भवानी हूँ॥
पुत्र को राज दिलाऊंगी, तब ही माता कहलाऊंगी।
अथवा समझूंगी बाँझ, या यों कहिये निज कूख लजाऊंगी॥

दोहा

तज अन्यों का आसरा, निज पर हो स्वालम्ब।
दुखित हुई देती कभी, कर्मों को उपालम्भ॥

किन्तु कभी निराश होकर, भी उत्साह नहीं छोड़ा।
आपत्ति हजारों आने पर भी, लक्ष्य से मुख को नहीं मोड़ा॥
जिसकी दिल में आशा थी, वह आशा एक दिन फल आई।
मास सवा नौ के होते ही, सुत की सूरत नजर आई॥

गाना नं० १५

तर्ज—(कौन कहता है कि जालिम को मजा)

पुण्यशाली का सदा गौरव बढ़े संसार में ।
उल्टा भी सीधा काम हो, सरकार में दरबार में ॥१॥
जहाँ कहीं भी हाथ डालें, सिद्ध कार्य हो सभी ।
देव भी आकर झुकें सिद्धहस्त राज व्यापार में ॥२॥
पुण्य चिन्तामणि बिना, चिन्तामणि मिलता नहीं ।
अशेष गुण सब ही समाते हैं सुखी दरबार में ॥३॥
धर्म ध्यानी शुक्ल ध्यानी, हो शुक्ल परमारथी ।
तल्लीन आत्म में सदा हो लख सिद्ध निराकार में ॥४॥इति॥

बस फिर क्या अनुराधा मन में, फूली नहीं समाती थी ।
मुख रूप चन्द्रमा देख पुत्र का, दृष्टि नहीं हटाती थी ॥
कुछ पूर्व वार्ता स्मरण कर, नयनों से जल भर लाई है ।
फिर देख सुकर्मा दासी को, यों कोमल गिरा सुनाई है ॥

दोहा

आज सुकर्मा होगये, उदय कर्म सुखकार ।
किन्तु एक मेरे हुआ, दिल में दुःख अपार ॥

यदि आज महल में सुत होता, तो तेरी आशा फल जाती ।
राजा को देती सन्देशा, तू अतुल द्रव्य यहां से पाती ॥
होता मस्तक पर तिलक तेरे, दासीपन से छुट्टी होती ।
उत्सव में दे दे दान बीज मैं, क्या-क्या सुकृत का बोती ॥
रोना आता मुझे लाभ से, वंचित है सेवक मेरे ।
अय कर्म मुझे कुछ पता नहीं, अब कौन इरादे हैं तेरे ॥
इस समय तो जो कुछ कर सकती, सो ही मैंने करना है ।
कम से कम अब तीन युगों तक, इसी ढंग से फिरना है ॥

बाकी मेरे तन के गहने जो हैं डिब्बे में भरे हुए।
वह सभी आज से हैं तेरे, हीरे पन्नों से जड़े हुए॥
दासीपन का शब्द आज से, कहना सदा भुलाऊंगी।
अब समय समय पर कारणवस, सम्मान से तुम्हें बुलाऊंगी॥
कुल का यही दीपक है, और यही एक निशानी है।
प्रतीत हुआ लक्षणों से भी, लम्बी इसकी जिन्दगानी है॥
पालन इसका करें फेर, निश्चय आशा पूरी होगी।
पुत्रवती कहाऊंगी, जिस दिन चिन्ता चूर्ण होगी॥
उस दिन की मुझे प्रतीक्षा है, जिस दिनको यह दिल चाहता है।
उत्साहियों के उत्साहों को, लख शंक काल भी खाता है॥
तुझ पर ही विश्वास मुझे, तू ही मेरी सहकारण है।
तेरा मेरा देश का होगा, इस से दुःख निवारण है॥

दोहा (सुकर्मा)

ग्रहण किया नित्य आपका, अन्न नमक सब चीज।
जिस के कारण आपके, अर्पण है यह कनीज॥

शावास तुझे अय क्षत्राणी, अभ्यास यही होना चाहिये।
मरना तो सबने एक दिन है पर गौरव ना खोना चाहिये॥
और जहां तक हो सुकृत का, बीज सदा बोना चाहिये।
अज्ञान रूप मल को जिनवाणी, वारी से धोना चाहिये॥

गाना नं० १६

(तर्ज—आज इनकी दुर्दशा हा)

यहां दान किसको देके निज हृदय खिलाऊं किसतरह।
निग्रन्थ गुरु मिलना नहीं, तब व्रत फलाऊं किस तरह॥
सम्यक्त्वी यहाँ पर नहीं, भूखा न कोई अनाथ है।
उपकार कुछ कर से किये बिन, आज खाऊं किस तरह।

धार्मिक संस्थाओं की सेवा मैं कैसे कर सकूं ।
साधन नहीं अनुकूल फिर, सेवा बजाऊं किस तरह ॥
शुक्ल बस एक भावना के, और कर सकते हैं क्या ?
भोगे बिन कृत कर्म से, छुटकारा पाऊं किस तरह ॥

दोहा

एक जान हो परस्पर, लगे सभी निज काम ।
सिंहनी वत् निश्चित किया, पर्वत को निज धाम ॥
नाम ब्राध रख दिया और, लगी निशदिन पोषण पालन को ॥
या यों कहिये लगी शूर, वीरता के सांचे में ढालन को ।
देश धर्म सेवा रूपी शिक्षा, जल नित्य सींचती है ।
और क्षत्रापन की चतुराईसे, शत्रु का दिल भी खेंचती है ॥

दोहा

दिन प्रतिदिन बढ़ने लगा, होनहार सुकुमार ।
देख पुत्र के तेज को, माता है बलिहार ॥
मह गणपति के समान, यह भी है चन्द्रमा चढ़ा हुआ ।
शत्रु की हानि राज ताज ले, चिह्न तेज यह पड़ा हुवा ॥
आशा मेरी पूर्ण होती यदि, राज महल अन्दर होती ।
कह नहीं सकती जिह्वा से, मैं क्या-क्या सुकृत यश बोती ॥

दोहा (दासी)

आशा यादिन आशा रख, दिल में समता धार ।
कभी महा प्रकाश हो, कभी कभी अन्धकार ॥
कभी रंक और कभी राव, यह दशा कर्म दिखलाते हैं ।
अशुभ कर्म के उदय होत ही, राज पाट खुस जाते हैं ॥
शुभ कर्मों के आने से, सब ही आकर मिल जाते हैं ।
करें मूल उद्यम दूसरा, जो जरा नहीं घबराते हैं ॥

दोहा

ठीक बहिन निज कर्म से, है सुख दुःख संयोग।
कर्त्तव्य वही करना मुझे, जो होता है योग्य॥

सम्पत्ति पति की पास पुत्र को, नीतिकला सिखाऊंगी।
पाताल लंक का राज्य करे, यह देख देख सुख पाऊंगी॥
अन्याय को नीचा दिखलावे, ऐसे साँचे में ढालूंगी।
कर्त्तव्य जो होता जननी का, सम्पूर्ण इसको पालूंगी॥
माता द्वारा वीर व्राध की, दिन दिन कला सवाई है।
अब शूर्पनखा की खबर, उधर दशकन्धर ने सुन पाई है॥

दोहा

इधर उधर को चलदिये, योद्धा करन तलाश।
आखिर मुद्दा मिल गया, खर दूषण के पास॥
क्रोधातुर हो भूप ने, दीना बिगुल बजाय।
अस्त्र शस्त्र सज खड़े, योद्धा सन्मुख आय॥
दिव्य दृष्टि मन्दोदरी थी लाखों में एक।
रावण को कहने लगी, करने को सुविवेक॥

दोहा (मन्दोदरी)

बुद्धिमत्ता है इसीमें, करे सोच कर काम।
सोच से मुख लाली रहे, सोच बिना मुखश्याम॥

प्राणनाथ यह तो बतलावो, किस पर कटक चढ़ाने लगे।
जिसको जानें कुछ ही जने, तुम दुनियां बतलाने लगे॥
बात जो होवे निन्दा की, बस उसे दबा देना चाहिये।
अपने कर्त्तव्यों पर भी, कुछ ध्यान लगा लेना चाहिये॥

गान नं० १७

(तर्ज—पाप का परिणाम प्राणी)

कर्म करने से प्रथम कुछ सोच करना चाहिये।
लाभ हानि देख कर के, पांव भरना चाहिये ॥१॥
अपनी कमजोरी व बदनामी, छिपाना ही श्रेय।
राजनीति पर भी तो, कुछ ध्यान धरना चाहिये ॥२॥
खुदकी जांघ उघाड़ने मे, शर्म खुद को आयेगी।
गौरव हीनों को सदा फिर, डूब मरना चाहिये ॥३॥
जिस को चाहती है वह खुद, संयोग उससे ही करो।
गम्भीरता का शुक्ल शरणा, सबको लेना चाहिये ॥४॥

दोहा

काम स्वयम् राजा करे, वही प्रजामन भाय।
आप ही रीत चला दई, अब क्यों मन घबराय ॥
कहो क्या कटक चढ़ा कर के, भगिनी को रांड बनावोगे।
या और पति बनवा करके, काला मुंह आप करावोगे ॥
जहाँ परणावोगे वहाँ पर वह, तानों के दुख उठायेगी।
जो भाग गई थी वही बहिन, रावण की यह कहलायेगी ॥

दोहा

रहस्य भरी जब यह सुनी, बात अति सुखकार।
ठीक सभी बुद्धि हुई, सत्य कहा यह नार ॥
प्रेम भाव मे खर दूषण संग, व्यावहारिक फिर विवाह किया।
स्वाधीन बना करके अपने, पाताल लंक का राज दिया ॥
अब हाल सुनो किष्किन्धा का, जहां बाली नृप बल धारी है।
दशकन्धर को दुख राज देन को, साफ हुआ इन्कारी है ॥

— —

५—बालि-रावण विग्रह

दोहा

इस कारण से दशकन्धर ने, किया एक दर्बार।
मन्त्री संग मिल बैठकर, करने लगा विचार॥

किस कारण बाली हुआ, हमसे आज विरुद्ध।
क्या उससे अब चाहिये, हमको करना युद्ध॥
अब कहो सोच करके सबही, बाली से क्या चाहिये करना।
सब नियम उप नियम तोड़ दिये, और छोड़ दई मेरी शरणा॥
क्या दूत पठा करके पहले, राजी से समझाना चाहिये।
रण तूर बजा या मूर्खता का। स्वाद चखा देना चाहिये॥

दोहा (भानुकर्ण)

कृतघ्नता की बात है, उसकी सब महाराज।
चरणी गिरते थे बड़े, बाली अकड़ा आज॥
वह दिन भूल गया बाली, जब बड़े कैद में सड़ते थे।
जहां गिरा पसीना उनका कुद वहां खून हमारे पड़ते थे॥
आपने बन्ध छुड़ाये थे, और किष्किन्धा का राज्य दिया।
ऐसे का मान करो मर्दन, और जिसने उसका साथ किया॥

दोहा

विभीषण कहने लगा, सुनो जरा कर ध्यान।
बाली कोई हलवा नहीं, शूर वीर बलवान॥
मामूली कोई चीज नहीं, और विचार अपना रखता है।
रही बात बड़ों तक की, कोई जाकर समझा सकता है॥
पहिले दूत भेज करके, इस बात का रहस्य प्रतीत करो।
फिर बाद में जैसा हो विचार, वैसा सब कार्य नियत करो॥

गाना नं० १८

(तर्ज—कौन कहता है कि जालिम को सजा मिलती नहीं)

काल चक्कर के सदा अनुकूल रहना चाहिये ।
जैसी अवस्था हो उसे, धैर्य से सहना चाहिये ।१।
चांद पर देखो अवस्था, तीस दिन में तीस है ।
या वेल सागर की तरह, हमको भी वहना चाहिये ।२।
देखले प्रत्यक्ष सूर्य की अवस्था तीन हैं ।
वर्ष की ऋतु तीन या छह, होती कहना चाहिये ।३।
कोई चढ़ता हटता ढलता, नियम है संसार का ।
बुद्धिमत्ता यही शुक्ल किसमत का लहना चाहिये ।४।

दोहा

विभीषण की बात में मिल गई सबकी बात ।
दूत गया बाली निकट, अगले दिन प्रभात ॥
नमस्कार मम लीजिए, खड़ा सामने दास ।
आगे श्री दशकन्धर का, सुनो हुकम जो खास ॥
महाराजा ने प्रेम भाव से खबर यही पहुंचाई है ।
कीर्ति धवल और श्रीकंठ से, परम्परा चली आई है ॥
ध्यान लगा कर देखोगे तो, सभी पता लग जायेगा ।
यह वानर द्वीप तीन सौ जोजन, सभी हमारा पायेगा ॥

दोहा

मान नहीं अब कीजिये, यही बात का सार ।
या भक्ति हृदय धरो, या रण हो तैयार ॥
सुनकर सारी वार्ता, बोले बाली फेर ।
दशकन्धर से जा कहो, क्यों करते हो देर ॥
क्यों करते हो देर यहां, नंगा है तेग दुधारा
रण भूमि में हाथ रंगूंगा, कर कर ढेर तुम्हारा ॥

देव गुरु को छोड़ नहीं, नमने का शीश हमारा ।
तुम्हें आज तक मिला नहीं, कोई शूर वीर बलवारा ॥

दौड़

बड़ों का काम बड़ों के, साथ में गया उन्हीं के ।
किस लिये घबराता है, आ रण भूमि में निकल यदि परभव जाना चाहता है ।

दोहा

सुनी बात जब दूत से, जल बल हो गया ढेर ।
जंगी बिगुल बजा दई, तनिक न लाई देर ॥
तैयार हुए सब शूरमा, बड़े बड़े बलवीर ।
धावा बोल के चल दिये, गर्ज रहे रणधीर ॥
दोनों ओर सजी सेना, आ धूल गगन में छाई है ।
आकाश में रहे विमान घूम, जब अनी से अनी मिलाई है ॥
मारु बाजा बजा रहे, धौंसे पर चोट जमाई है ।
ब्रह्माण्ड लगा जब फटने को, तो मानो प्रलय आई है ॥

दोहा

उभय केसरी जब चढ़े, काँपन लगी जमीन ।
लगे सभी जन तड़फने, जैसे जल बिन मीन ॥
दोनों पक्षों के वीर बैठ, लगे सोचन मौका जाता है ।
लाखों वर्षों का मेल जोल, अब छिन्न भिन्न हुआ चाहता है ॥
कोई कारण नजर नहीं आता, जिस पर यह इतना रगड़ा है ।
नमस्कार या भेंट जरा सी, बस मामूली झगड़ा है ॥

दोहा

सुग्रीव कहे निज सभा को, रहस्य बताऊं एक ।
लंका वाले यदि मानलें, रहे हमारी टेक ॥

रहे हमारी टेक उन्हे, तुम इस नीति पर लाओ।
बाकी सेना हटा वाली, रावण का युद्ध करावो ॥
बाली भंग करे शक्ति रावण की निश्चय लावो।
सभी सभासद् मेल परस्पर, यही नियत करवावो ॥

दौड़

क्योंकि सेना रावण की, नहीं काबू आवन की।
यही एक ढंग निराला, अपना सब कुछ बचे करो शत्रु का ही मुख काला ॥

गाना नं० १६

(तर्ज—मुसाफिर क्यों पड़ा सोता)

विग्रह में शोभन फल कहो कब किसने पाया है।
खोलकर देखलो इतिहास, सबने सिर धुनाया है।१।
भरत बाहुबली का जंग, ठना था भाई भाई में।
वही झगड़ा यहां पर है. कर्म चक्कर से आया है।२।
फैसला जो हुआ था वहां, वही करना यहां चाहिये।
बचावो देश जन धन को, समझ में ऐसा आया है।३।
नमे ना एक जब तक ये नहीं झगड़ा खतम होगा।
शुक्ल पीछे जो करना, करना वह पहले बताया है।४।

दोहा

सभी के मन में बस गये, रहस्य भरे यह भाव।
सभा मनय करने लगे, कभी उतार चढ़ाव ॥
प्रति पालक हैं सभी के, दोनों ये सिरताज।
किसके हम सहायक बने, किससे होवे नाराज ॥
झगडा आपस में दोनों का, हम निष्कारण क्यों पक्ष करें।
अन्त में एक ने नमना है, फिर लाखों जन क्यों फंस के मरें ॥

दोनों ही को लड़ने दो, जो हारेगा नम जावेगा।
देश प्रेम और राजमान, क्या सब ही कुछ बच जावेगा॥

दोहा

सर्व सम्मति से लिया, यही नियत कराय।
रण भूमि में भूपति, दोनों दिये जुटाय॥

उतर पड़े रणधीर शूरमा, दोनों ही थे निडर बड़े।
गर्ज ध्वनि घनघोर घटा से, जैसे बिजली कड़क पड़े॥
लगे मेदिनी थर्राने, अमोघ शस्त्र जब आन पड़े।
अग्नि बाण कहीं धुन्ध बाण, विमान गगन में आय अड़े॥

दोहा

दशकन्धर घबरा गया, देख शक्ति तत्काल।
समझ गया बाली नहीं, है मेरा यह काल॥

गिरा देख मन रावण का, बाली ने अति कमाल किया।
पकड़ हाथ चहूं ओर घुमाकर, धरती ऊपर पटक दिया॥
सुग्रीवादिक ने बाली से, रावण का पीछा छुड़वाया।
हो शर्म सार शर्मिन्दा सा, झट लंका को वापिस आया॥

दोहा

नीचे ग्रीवा हो गई, मलते रह गये हाथ
सोचा था कुछ और ही, और हो गई बात॥
बाली नृप का तेज बल, रावण पर गया छाय।
रावण का जो घमण्ड था, पल में दिया गमाय॥

गाना नं० २०

(तर्ज—फंसे दुनिया में जो प्राणी, सदा नाशाद होता है।)
औरों के दमने से विजय कब किसने पाई है।

कर्म मल के वसमें ये आत्मा, भ्रम ने सताई है ॥ १ ॥
नर्क तिर्यंच और मानव, स्वर्ग इन चारों गतियों में—
मिले पुण्य पाप से ऊंची गति या नीचताई है ॥ २ ॥
कभी चक्री व वासुदेव—इन्द्र पदवी है पाता—
चौरासी चक्कर मे फिरता, मिलें साधन दुखदाई है ॥ ३ ॥
कभी ये रंक से बन राव, अन्धा मान में भूले।
सताकर और को गरदन कभी अपनी कटाई है ॥ ४ ॥
राग और द्वेष क्यों करना ये शत्रु आत्मा के है—
श्री सर्वज्ञ की वाणी सदा सबको सुखदाई है ॥ ५ ॥
क्या हुवा मैंने सभी दुनिया विजय करली—
वही योधा शुक्ल जिसने, विजय कर्मों से पाई है ॥ ६ ॥

—***—

विरक्त वाली

चौपाई

वाली का दिल हुवा वैरागी। तप जप करने की लव लागी ॥
दुनियां सब धुन्द पसारा। फंसे जीव मकड़ी जिम जाला ॥
राज ताज सुग्रीव को दीना। ध्यान शुक्ल संयम रस लीना ॥
लब्धि धार हुए मुनि राई। चरणी गिरें देवन पति आई ॥
अष्टापद पर्वत पर आये। ध्यान अडिग खड़े मुनि लाए ॥
दुनिया समझी कूड कहानी। आत्म सम समझे सब प्राणी ॥

गाना नं० २ १

(तर्ज—दुनियां में बाबा क्या है भरोसा इस दम का।)
दुनिया में प्राणी क्या है भरोसा वैभव का। टेक।
आज कहां है काल कहां है। रहना नहीं तो राज कहां हैं—
महल खजाना साज कहा है। बने भस्म तन सब का रे ॥१॥

पर्याप्त अपर्याप्त चौंहु गति आठ का फेरा
अस्थिर चौरासी का डेरा। मोक्ष अंक थिर नवका रे ॥२॥
दुनिया शहर सराय पंथ है, आवागमन बसेरा—
त्यागो मिथ्या भ्रम अंधेरा। फिकर करो नर भवका रे ॥३॥
धर्म शुक्ल निवृत्ति भाव तप, भोजन है आत्म का—
बाकी भाड़ा पुद्‌गल तन का, खाना गेहूं जव का रे ॥४॥

दोहा

राज ताज सुग्रीव ले दीर्घ विचारे ताम।
शुभ विचार सुख रूप है, उलट सोच मुख श्याम ॥
अब यह शक्ति कहां मुझ में, जो वाली वीर नरेश में थी।
अपमान किया रावण का, फिर भी इज्जत रही देश में थी ॥
सुप्रभा शुभ पुत्री का, दशकन्धर से विवाह किया।
प्रेम भाव सब पूर्ववत्, सुग्रीव नरेश ने जोड़ लिया ॥

दोहा

नित्या लोकज पुर भला, नित्या लोक नरेश ॥
रत्नावली कन्या अति, रूप कला सुविशेष ॥
पुष्पक बैठ विमान में, लगा उधर को जान।
नग अष्टापद आयके, अटका तुरत विमान ॥
जब दृष्टि पसारी नीचे को, तो मुनि ध्यान में खड़ा हुवा।
मुख पर मुख पति शोभरही, जैसे चन्द्रमा चढ़ा हुवा।
दो भुजा लटक रही नीचे को, निर्भय वनमें जिम शेर खड़ा।
देख मुनि को दशकन्धर, झट क्रोधानल में भवक पड़ा।

दोहा

दशकन्धर नृप सोचता, यह वाली मुनिराय।
शत्रु से अपना अभी, बदला लेऊँ चुकाय ॥

तप जप से निर्बल है शरीर, यह सोच सामने आया है।
तेज प्रताप देख मुनिवर का, मन में अति घबराया है॥
फिर सोचा शिला उखाड़ूँ मैं, और इसको नीचे दे मारूं।
परभव यह स्वयं सिधारेगा, मैं अपना बदला ले डारूं॥

दोहा

दशकन्धर निज शीश से, शिला उठाई आन।
कपन सुन मुनिराज ने, देखा लाकर ध्यान॥

उपयोग लगा देखा दशकन्धर, मुझको मारने आया है।
तब पांव से जोर शिला पर दे, भूपाल का शीश दबाया है॥
जब रोया और चिल्लाया तो, बाली ने चरण हटाय लिया॥
आ गिरा शरण माफी मांगी, तब मुनिवर ने यों कथन किया।
क्षत्री होकर के रोया तू, एक दाव जरासी आने पर।
इस कारण रोवण नाम तेरा. है दिया आजसे हमने धर॥
नृप बार बार चरण गिरता, बाली मुनि का गुण ग्राम किया।
इतने में देव धरणेन्द्र ने आ मुनिवर को प्रणाम किया॥

दोहा

सेवा करता मुनि की, जब देखा रावण वीर।
अमोघ विजय शक्ति दई, तोफा इक अक्सीर॥

अमोघ विजय शक्ति पाकर, रावण खुश हो उठ धाया है।
कहे तीन खण्ड के साधन को, यह शस्त्र अद्भूत पाया है॥
इन्द्र निज स्थान गया, मुनि निर्मल ध्यान लगाय लिया।
दस विध का धर्म आराधन करके, अक्षय मोक्ष पद पाय लिया॥

———

तारा

दोहा

गिरी वैताड विशेष ये, ज्योयिपुर वर नाम ।
विद्याधर था ज्वलनसिंह, वहां राजा अभिराम ॥
रानी जिसके श्रीमती तारा सुता प्रधान ।
चौसठ कला प्रवीण थी, रूपवती गुण खान ॥
चित्रांग नाम एक अन्य नरेश्वर, सहसगति सुत जिसका था ।
विमान चढ़ी तारा को देखकर, मोहित चित्त हुवा उसका था ॥
चारित्र मोहिनी कर्म उदय, ना अपना आप संभाल सका ।
प्रमत्त हुवा लगा कहन मित्र से, ना मौके को टाल सका ॥

गाना नं० २२

(तर्ज—पहिले ना स्वार्थी का इतवार किया होता)
मुझ बे गुनाह के हृदय किसने कटार मारा—
हुये टुकड़े टुकड़े तन के । और जिगर पारा पारा ॥१॥
ऐसा नसा पिलाया शुद्ध बुद्ध सभी भुलाई—
किस वैद्य को दिखाऊं । मेटे जो दुख सारा ॥२॥
माला रटूंगा तेरी तल्लीन होके अब मैं—
दुनियाँ में जिन्दगी का, तू ही मेरा सहारा ॥३॥
सब हेच तेरे सन्मुख, ये राज क्या खजाना ।
शिक्षा शुक्ल किसी की मुझ को नहीं गवांरा ॥४॥
सर्वस्व करूं न्यौछावर ! जैसे भी तेरी खातिर—
कैसे भी करके तुझ को मैं पाऊंगा मह्पारा ॥५॥

दोहा

मित्र सुमन ये कौन थी, मुझे मार गई तीर ।
नस नस में होने लगी, अति असह्य पीर ॥

क्या बिजली का टुकड़ा था, वह या रवि किरण गई आकरके।
ना जाने कहां वह लोप हुई, एक चोट हृदय पर ला करके ॥
वह रूपवती चित्त चोर मेरी, सुध बुध सारी बिसराय गई।
कोई यत्न करो मिलने का उसे, वह मन को मेरे चुराय गई।
दुखिया का दर्दी तेरे सिवा, अब मित्र नजर आता ही नहीं।
दिल खोल दिखाऊं जिसे अपना, वह चंद्र नजर आता ही नहीं॥

दोहा

हाल मित्र ने सब कहा, जो था पता निशान।
करीं याचना भूप से, वही ध्वनि वही तान॥

टेवा मगवा कर ज्वलनसिंह ने, ज्योतिषी को दिखलाया है।
स्वल्पायु है सहस गति की, गणितानुसार बतलाया है॥
तब ज्वलनसिंह ने पुत्री का, सुग्रीव से नाता जोड़ दिया।
और दान दिया दिल खोल, भूपको हाथ जोड़कर विदा किया॥
पता लगा जब सहस गति को, दुख सागर में लीन हुआ।
सोच विचार अनेक किये, पर आर्तध्यानी दीन हुवा।

दोहा

तारा के पैदा हुए, शूर वीर सुत दोय।
जयानन्द अङ्गद भला, बेली सम फल जोय॥

सहस गति ने उधर रातदिन, सोच के बहुत उपाय किया।
रूप परिवर्तन विद्या के साधन में झट ध्यान दिया॥
इधर लगा वह साधन में, अब दशकंधर क्या चाहता है।
सर्व देश साधन कारण, दल बल विमान सजाता है॥

—०—०—

रावण दिग्विजय

दोहा

समय देख सुग्रीव ने, रावण के हितकार।
अपनी सेना को किया, कूच के लिये तैयार॥

रावण और सुग्रीव सहित, सेना ले मज धज हुए रवां।
पाताल लंक जाने का दिल में, पूरा कर लिया इतमिनां॥
पता लगा जब खर दूषण को, जिये स्वागत के पहुंच गये।
भेंट हुई आपस में जिस दम, प्रेम के बादल भूम रहे।

दोहा

नदी नर्मदा के निकट, जाकर किया पड़ाव।
सभासदों के बीच में, बैठा रावण राव॥

तत्काल चढ़ा जल ऊपर को, जा सेतु से टकराया है।
निष्कारण क्यों चढ़ा आज, जल इसका भेद न पाया है॥
फिर दिया हुक्म दशकन्धर ने, इसका कारण मालूम करो।
यदि छोड़ा है किसी शत्रु ने तो, उस दुर्जन का मान हरो॥

दोहा

बैठ विमान में चल दिये, देखा जाकर हाल।
दशकन्धर को आनकर, बतलाया तत्काल॥
अद्‌भुत है रचना बनी, हुवा अनुपम काम।
या यों कहिये भूमि पर, उतरा है सुर धाम॥

महाराज यहाँ से बड़ी दूर, एक देश बड़ा लासानी है।
सहस्रांशु नृप तेज रविवत्, महिष्मती रजधानी है॥
बहुत भूप सेवा करते हैं, सहस्र एक सुन्दर नारी।
प्रेम हेतु जल क्रीड़ा के, उसने रोका था यह पानी॥

करें कहां तक वर्णन वहां का, समझ नहीं कुछ आता है।
क्या वही स्वर्ग प्रत्येक कवि, दे उदाहरण कथ गाता है॥
वहां नदी सरोवर के मानिन्द, है चारों ओर बना रक्खी।
लम्बी और चौड़ी शोभनीक, नौका है उस पर ला रक्खी॥
दोनो ओर बने सेतु, कोई खम्भा जिनके मध्य नहीं।
जिस दम कपाट भिड़ जाते हैं, तो समझो और संबंध नहीं॥
मध्योदक भवन बने अद्भुत, सुख पुण्य योग से पाया है।
अभी थोड़े फट्टे खोल दिये, जिस कारण यह जल आया है॥

गाना नं० २३

तर्ज—(पहिले न स्वार्थी का इतबार किया होता)

दुनिया में एक पानी है स्वर्ग की निशानी।
करते किलोल आके सहस्रांशु राजा रानी ॥१॥
पानी जहां नहीं है किस काम की वह भूमि।
किन्तु ये सर्व गुण की है खान राजधानी ॥२॥
वहां की कला व कौशल वर्णन करें तो कैसे।
एक एक से है बढ़ कर दीखें वहां विज्ञानी ॥३॥
वास्तव में देखा जावे तो बात भी सही है।
संसार उनके सम्मुख लगता पशु अज्ञानी ॥४॥
अप-अपने इष्ट में हैं तल्लीन रात दिन वह।
कैसे शुक्ल बतावें गौरव की सब कहानी ॥५॥

दोहा

सुनते ही दशकन्धर ने, रणभेरी बजवाय।
दल बल सबल विमान से, घेरा डाला जाय॥
पहिले दूत पठा रावण, [illegible] ख[illegible]चाई झट।
या भक्ति स्वीकार कर [illegible] झट॥

चढ़ी फौज लड़ने के लिये, आपस में शस्त्र चलाने लगे।
और कई हुए रण भेट शूरमा, पीठ दिखाकर कई भगे॥
लिया बांध रावण ने नृप को, उल्टा बन्ध चढ़ाया है।
तब जंघाचारी महा मुनि ने, आकर के छुड़वाया है॥
यह पिता सहस्रांशु नृप का, सतबाहु नाम मुनीश्वर था।
जिन नाशवान दुनिया को, तजकर पकड़ा मारग संयम का॥

दोहा

सहस्रांशु महाराजा ने, दिल में किया विचार।
तज झमट संसार का, लेवें संयम धार॥

सत्यशरण लिया जिनवर का, आधीन न जो किसी ताज का है।
दुनियां का सुख अनित्य सभी, नित्य परम पद राज का है॥
है याद मुझे वह समय, मेरे एक मित्र ने था वचन दिया।
अनरण नरेश ने उसी दीक्षा का, इकरार मेरे था साथ किया।

दोहा

अनरण नरेश को उसी दम, दीनी खबर पहुंचाय।
समझ लिया कि हेच है, दुनिया का उत्साह॥
अनरण नृप भी सोचता है मेरा सकेत।
इससे बढ़ करके नहीं, दुनिया में कोई हेत॥

अनरण भूपने उसी समय, दशरथ को राज्य संभाल दिया।
दई पुरी अयोध्या छोड़, संग मित्र के संयम धार लिया॥
उधर सहस्रांशु सुत के, सिर ताज दिया दशकन्धर ने।
और उसी समय उसको, अपने आधीन किया दशकन्धर ने॥

दोहा

नारद घबराया हुवा, आया रावण पास।
आदर पा भूपाल से, कहा मुनि ने भाष॥

आपके होते अनर्थ हो, फिर यही तो है दुख बड़ा ।
रहे यज्ञ में फूंक पशु, कई दुष्ट अनार्य खोद गढा ॥
सद् उपदेश दिया तो, अग्निहोत्रों ने मारा मुझको ।
चल रक्षा करो अनाथों की, संग ले जाने आया तुमको ॥

चौपाई

राज नगर और मरुत नरेश, मिथ्या दृष्टि अधर्म विशेष ।
कुगुरु जन का अति भरमाया, पशुवध महा यज्ञ रचाया ॥
इतनी सुन दशकन्धर धाये, पशुओं के जा प्राण बचाये ॥
यज्ञ विध्वंस किया तब सारा, याज्ञिकों के मन रोष अपारा ।
आत्मरूपी यज्ञ रचाओ, द्वादश तप विधि अग्नि जलावो ।
अशुभ कर्म सब दग्ध बनाओ, यों कहे नारद परम पद पावो ॥

दोहा

मरुत भूप की पुत्री थी, कनकप्रभागुण खान ।
रावण संग विवाह दई, साथ मान सन्मान ॥
पा करके सन्मान अधिक मथुरा को हुवे रवाना ।
था मधु वहां का भूप ठाठ, जिसका था अधिक सुहाना ॥
मिले प्रेम से रावण को, कुछ भेंट किया नजराना ।
देख हाथ त्रिशूल, मधु से पूछे रावण दाना ॥

दौड़

पूछता गुण नृप रावण, मधु तब लगा सुनावन ।
चमरेन्द्र ने मुझे दई है, पूर्व भवका मित्र मेरा
जिन सभी कथा कही है ॥

दोहा

ऐरावत क्षेत्र भला, शतद्वारा पुरी नाम ।
सुमित्र भूप का मित्र है, प्रभव चतुर सुनाम ॥

प्रभव चतुर सुनाम, मित्र दोनों रहते मंगल में ।
एक दिवस ले गया, उड़ा घोड़ा नृप को जंगल में ॥
पल्ली पति की सुता नाम, वन माला मिली उपवन से ।
नृप से करके विवाह, खुशी से, आई राज भवन में ॥

दौड़

प्रभव आ मिला चाव से, पूछता कुशल भाव में ।
जब रानी को देखा है, लगा काम का बाण तुरत
पागल सा बन बैठा है ॥

दोहा

सुमित्र ने पूछा प्रभव से, कैसा आर्तध्यान ।
साफ प्रभव ने कह दिया, जो था दिली अरमान ॥
जो था दिली अरमान, सुमित्र सुन खुशी हुवा अति मन में ।
मांगो देवे प्राण मित्र यह, कौन चीज चीजन में ॥
दई आज्ञा जावो रानी, मम मित्र के महलन में ।
रानी दई संभाल, आप छिप सुने शब्द कानन में ॥

दौड़

प्रभव से कहे उचारी, कौन नाचीज मैं नारी ।
मेरा पति देव है ऐसा, मांगे पर देवे जान तलक
क्या चीज नार और पैसा ।

दोहा

गौरव की यह बात सुन, गिरा चरण में आन ।
धन्य धन्य मम मित्र है, धन्य तू मात समान ॥
महापापी चाण्डाल दुष्ट मैं धर्म वृक्ष का कातिल हूं ।
खुद पै कटार से वार करूं, मैं मर जाने के काबिल हूं ॥

गाना नं० २५

अयफूट देवी तूने, सब को रुला दिया है ।
अज्ञानियों के दिल पे, अड्डा जमा दिया है ॥
अटूट प्रेम में जो, लवलीन हो रहे थे ।
उनके भी सुख का, कारण तूने भुला दिया है ॥
मिल बैठ प्रेम से जो, निज लाभ सोचते थे ।
विपरीत इसके तूने, बिल्कुल बना दिया है ॥
उन्नत थे सब समझते, मानो सुमेरु चोटी ।
गौरव गिराके उनका, धूलि मिला दिया है ॥
सब प्रेम की तरंग में, आनन्द ले रहे थे ।
लहरें सुखा के तूने, बालू उड़ा दिया है ॥
अब प्रेम के स्वपन की भी, हो रही निराशा ।
भर विरोध विष को, उर में हृदय हिला दिया है ॥
हैं धर्म शुक्ल दोनो, यह ध्यान नाम मात्र ।
अरती विरोध का तू , दरिया बहा दिया है ॥

दोहा

पूर्व पुण्य से यदि मिले, सुख साधन का अंश ।
अन्यों का अज्ञान वश, करने लगे विध्वंस ॥

अय मित्रगणों कुछ सोच करो, किस बात पे आप अकड़ते हो।
जिस फूट ने सबका नाश किया, क्यों उसका हाथ पकड़ते हो ॥
मानिन्द नरक वह घर बनता, जिसमें यह चरण टिकाती है ।
मित्रों का दिल फट जाता है, जब अपना कदम जमाती है ॥
वह अधोलोकवत् देश बने, जब यह महारानी आती है ।
स्वपन मात्र ना सुख शान्ति, उस देश में रहने पाती है ॥

इस रोग की मात्र औषधी यह, जिन भाषित ज्ञानामृत पीना।
मैत्री भाव की ओर बढ़ो, व्यवहार सहित जब तक जीना॥
अब करुणा भाव के अकुंरे, हृदय में पैदा होने दो।
शान्ति प्रेम से राग द्वेष, दुखदायी जड़ को खोने दो॥
चेतन और अचेतन क्या, सब में गुण है गुण ग्रहण करो।
त्रियोग शुद्ध सब का हितकारी, सादा रहन और सहन करो॥
कायरता तज कर शूर बनो, प्रमाद नहीं करना चाहिये।
तुम उद्यमशील बनो सारे, अन्याय पक्ष तजना चाहिये॥
श्री वीतराग की वाणी से, जो सज्जन बेमुख रहते हैं।
यह जन्म मरण संसार चक्र में, पड़े सदा दुख सहते हैं॥
सम्प सुमति का साथ छोड़, सवस्व अपना खोते हैं।
तो जान बूझकर वह नर, अपने राह में कांटे बोते हैं॥

दोहा

यथा नाम कुबेर का, गुण थे तदनुसार।
किन्तु घर की फूट ने, किया सर्व सुख छार॥
दिवानाथ यदि भानु है, वह भी जगन्नाथ कहाता था।
मानिन्द रजनी के शत्रुदल, मुंह देखत ही भाग जाता था॥
मानिन्द रवि की किरणों के, आधीन हजारों राजा थे।
नि.सन्देह थे भिन्न भिन्न, पर सदा हुक्म के ताबा थे॥
वह ज्योतिषियों का इन्द्र है, तो यह नरेन्द्र कहलाता था।
उसका भ्रमण व्योम, सरोवर में यह दिल बहलाता था॥
वर्णादिक स्वाधीनभोग, उपभोग किसी की कमी नहीं।
स्वास्थ्यादि दश विध सुख पूर्ण, था समान कोई धनी नहीं॥
और एक अनोखी विद्या जो, आशाली कहलाती थी।
चहुं ओर कोट था ज्वाला का, शत्रु की पेश न जाती थी॥

इसके सुदर्शन चक्र का, कभी वार रिक्त नहीं जाता था।
इन्द्र भूप भी नल कुबेर से, इस कारण भय खाता था॥
चढ़े हुवे थे गौरव पै, जब फूट का आ साम्राज्य हुआ।
उफ पश्चात्ताप बिना सब कुछ, खो महाराजा बेताव हुआ॥

दोहा

वैमनस्यता ने लिया, रूप भयानक धार।
नृप रानी का परस्पर, बढ़ गया द्वेष अपार॥

जहां राग वहां द्वेष की सीमा, निश्चय पाई जाती है।
द्वेष वहां पर प्रीति आ, विकल्प से असर जमाती है॥
सम विभाग का नाम नहीं, वहां स्वार्थता छा जाती है।
तब फूट महारानी भी आकर, आसन वहां बिछाती है॥
उपरम्भा ने कुमुदा दासी को, घर का भेद बताया है।
कहे प्राणों का संदेह हमें, सौकनों ने जाल बिछाया है।
किन्तु सुख सार की निद्रा से, मैं भी ना इन्हें सोने दूंगी।
और मुझे रुलाया तो इनको, फिर कैसे सुख होने दूंगी॥
ऐ कुमुदा अब देर ना कर, झट रावण पास चली जा तू।
यहां जाल बिछाया इन्होंने, अब वहां पर जा जाल बिछाया तू॥
यदि बने सहायक वह मेरे, मैं उनको अकसीर दवा दूंगी।
चक्र सुदर्शन देकर मैं, आशाली भेद बता दूंगी॥
कह देना यदि अब चूके तो, फिर पीछे से पछताओगे।
पराजय कुबेर न होवेगा, तुम अपने प्राण गमाओगे॥
सन्तोष जनक दिया उत्तर मुझे, तो आयु भर सुख पावोगे।
नहीं लाभ के बदले हानि होगी, कर मलते रह जावोगे॥

दोहा

आज्ञा पा दासी चली, पहुँची कटक मंझार।
इधर खड़े थे गुप्तचर, पहले ही तैयार॥

पुण्य प्रवल महा रावण का, सभी तरह पौवारे हैं।
उल्टा दैव कुवेर से समझो, कर्मों के फल न्यारे हैं॥
अय आजकल के पामर प्राणियो, क्यों आपस में लड़ते हो।
क्रोध परस्पर करके क्यों, महादुःख कूप में पड़ते हो॥

दोहा

अर्ज उभय कर जोड़कर, करती हूँ सरकार।
उपरम्भा की विनती पर, कुछ करे विचार॥
नृप से कुछ अनबन होने पर, महारानी आपको चाहती है।
आशाली विद्या सहित, लिये चक्र वह रानी आती है॥
मीन मेख आदि विचार, करने का कोई काम नहीं।
यदि अब चूके तो, समझ लेना इस फेल का खुश अंजाम नहीं।

दोहा

रावण ने कहा बोल मत रसना करले बन्द।
क्यों हम पर गेरन लगी, प्रेम जाल के फन्द॥
प्रेम जाल के फन्द सभी क्या अनुचित बात सुनाई।
ऐसा भाषण करने पर, क्या तुझे शर्म ना आई॥
साथ हमारे चत्रापन पर, धूल डालनी चाही।
आज हमारे उज्ज्वल, मुख पर स्याही मलने आई॥

दौड़

प्रथम तो सभी फरेब हैं, राग से हमें परहेज है।
सहायता हमें ना चाहिये, डाकू चोर उचक्कों की
गणना में हमें ना लाइये॥

गाना न २६

ऐयाशी करते हैं इसरत में. पड़ गौरव को खोते हैं।
नतीजा निकलता अन्तिम ये, सिर धुन धुन के रोते हैं॥

यह भी एक कुव्यसन भारी, पराई नार हर लेना।
अवश्य सर्वस्व खोकर, बीज वे दुर्गति का बोते हैं॥
धनी ना जिनकी अपनों से, परायों से बनेगी क्या।
घरेलू झगड़ों से यह, नीचता के ख्याल होते हैं॥
यही कर्तव्य मानव का, सदा नीति करे पालन।
वही दुनिया के गौरव की, शिखर चोटी पे सोते हैं॥
गिरावट का यह मारग है, शुक्ल बचने से इसके तो।
नीति अरिहन्त वाली से, कर्म मल तक को धोते हैं॥

दोहा

तके आसरा नीच सब, कायर क्रूर अधीर।
रखे भरोसा आप पर, शूर वीर रणधीर॥
शूरवीर रणधीर भरोसा, भुज बल पर रखते हैं।
चक्र भूप आशाली क्या, नहीं अन्तक से झुकते हैं।
दुनिया भर के शूर सामने, हों न कभी हटते हैं।
गौरव की रक्षा के कारण, सत्य पुरुष मरते हैं॥

दौड़

हमें कुछ भी ना चाहिये, आप बस यहां से जाइये।
लगी क्या जाल बिछाने, मारु चाबुक तान सभी बुद्धि आ जाय ठिकाने॥

दोहा

धिक्कार शब्द खाकर चली, कुमुदा हो लाचार।
स्वागत विभीषण ने किया, उसका समय विचार॥
कुमुदा आप ना हो कभी, रंचक मात्र उदास।
रानी की और आपकी, पूरण होगी आस॥
पहिले दशकन्धर पे जाके, भूल आपने खाई है।

कुछ ऐसे होते हैं स्वभाव, कुछ होती बेपरवाही है ॥
यह काम सदा ऐसे वैसे, बनते हैं औरों के द्वारा।
निर्भय अब यहां पर आजावो, और समझो अपना पौबारा ॥

दोहा

विभीषण की जब सुनी, रावण ने यह बात।
मानो स्वकुल के हुवा, गौरव का आघात ॥

रावण—स्वावलम्बी होते सदा, शूरवीर अवतार।
फिर योग्य अयोग्य का चाहिये जरा विचार ॥
चाहिये जरा विचार लिया, क्यों तैंने नीच सहारा।
क्षत्रापन के गौरव को, यह है एक धब्बा भारा ॥
यदि वह सचमुच आही गई, तो कट जाय नाक हमारा।
शक्ति होवे हुए धूर्त, जन की संख्या में डारा ॥

दोहा (विभीषण)

ना हमें नीच विचार है, ना कुछ गौरव हार।
एक लाभ दूजे मिले, करना पर उपकार ॥
शरणागत को शरणा देकर, कष्ट सदा हरना चाहिये।
जो स्वयं मिले लक्ष्मी आकर, तो उसे नहीं तजना चाहिये ॥
इसके प्राणों की रक्षा के, रक्षक हम कहलायेंगे।
फिर करवा देंगे मेल परस्पर, दम्पति हिल मिल जायेंगे ॥
चक्र सुदर्शन आशाली, विद्या की हमको चाहना है।
यदि चूक गये तो लाभ, अपूरब फेर हाथ नहीं आना है ॥
मरते विष के खाने वाले, व्यापारी कभी ना मरते हैं।
द्रव्य काल अनुसार सदा, वह सभी कार्य करते हैं ॥
इक लक्ष्य को सन्मुख रखते हुए, यहां हुआ हमारा आना है।
अब साम दाम और दण्ड भेद, युक्ति से काम बनाना है ॥

क्या छत्रापन रह जावेगा, ऐसे वापिस हो जाने से।
क्या विघ्न ना सन्मुख आवेगा, कुछ आगे कदम बढ़ाने से॥
यह भी शक्ति इक इन्द्र की जो दाहिनी, भुजा कहलाती है।
यदि यही हाथ से निकल गई, तो पछताना रहे बाकी है॥
साधारण कोई चीज नहीं, यह आशाली एक विद्या है।
यहां घबरा गये सभी योद्धे, अब पीछे हटे तो निन्दा है॥
ये पुण्योदय है समझ सभी, कुदरत ने मेल मिलाया है।
अब इसे नहीं तजना चाहिये, यह भी एक अद्भुत माया है॥

दोहा

दशकन्धर ने जब सुनी, रहस्य भरी यह बात।
मौन धार बैठा रहा खुशी से फूला गात॥

गाना नं० २७

जिधर भी देखो जहाँ-तहाँ, यह सभी पसारा प्रेम का है।
नर सुर इस और परलोक, क्या बस सभी नजारा प्रेम का है॥
मह गणो का भी मेल होता, शशि की शोभा बढ़ाने वाला।
गिरी द्वीप और समुद्र रचना यह खेल सारा प्रेम का है॥
बसन्त ऋतु जलवायु सबजी का, प्रेम अनुकूल गूढ़ होता।
फल फूल पक्षी व मीठे स्वर क्या, सभी इशारा प्रेम का है॥
मात-पितु की स्नेह दृष्टि, यार मित्र व बन्धु गण क्या।
स्वामी भ्राता व भगिनी पत्नी, यह नाता सारा प्रेम का है॥
किन्तु होते अनित्य सब यह, धर्म कर्म निज ध्यान भक्ति।
श्रद्धा चारित्र सेवा सतगुरु की, मोक्ष द्वारा प्रेम का है॥
विपरीत होती है इसके सृष्टि, विरोध जहां पर के मापता है।
शुक्ल उन्नति वहां पर होती, आगमन प्यारा प्रेम का है॥

दोहा

एक ने दूजे की लई, मान परस्पर श्रात ।
पुण्य खड़ा आ सामने, जैसे शुभ प्रभात ॥
रानी से विद्या लई, आशाली और भेद ।
विधि सहित साधन करीं, मिट गया जो था खेद ॥
चक्र सुदर्शन लिया हाथ, जो महा अनोखी शक्ति है ।
जिसने शस्त्रदिये उन्हीं पर ही आ बनी आपत्ति है ॥
बस प्रेम ही है बलवान अति, और फूट महा निर्बलता है ।
यह है प्रसिद्ध के विरोध जिन्हों में काम ना उनका चलता है॥
रावण और विभीषण का सब प्रेम से भय काफूर हुआ ।
जहां खुशी हरस्यायत थी, वहां से सुख आनन्द दूर हुआ ॥
रावण ने धावा बोलते ही, दुर्लंघ नरेश को घेर लिया ।
और होनी ने अपना चक्र, सीधे से उल्टा फेर दिया ॥
स्वाधीन कुबेर किया अपने, और उपरम्भा संग विदा किया ।
या यों कहिये कि तौक गले, परतन्त्रता का पहिन लिया ॥

गाना नं० २८

तर्ज—(पाप का परिणाम प्राणी भोगते संसार में)
सच कहा क्षण-क्षण में ये किस्मत बदल जाने को है,
जीव बणजारे का यह टांडा भी लद जाने को है ।१।
आयु साज समाज किसी का एक रस रहता नहीं,
चोट कर्मों की पड़े तब सब बिखर जाने को है ।२।
बादल की छाया काया माया राज जर क्या महल है,
सुरपति का राज सिंहासन भी डुल जाने को है ।३।
संपदा विपदा मनुष्य पर, कर्म वस पड़ती सदा,
शुक्ल ज्ञानी ध्यानी जन, भव सिन्धु तर जाने को है ।४।

सर्व सिद्धि के लिये पुरुषार्थ साधन मुख्य है,
धर्म ही सब के लिये, आनन्द वर्पाने को है॥५॥

दोहा

कैसी ही हो पण्डिता, कैसी ही प्रवीण।
झूठ दगा उल्टी मति, त्रिया अवगुण तीन॥

चौपाई

अब रथनुपुर की करी चढ़ाई, जो थी रंडक हृदय दुखदायी।
सीमा पर जा कटक जमाया, इसी समय एक दूत पठाया॥

दोहा

सहस्रार नृप इन्द्र को कहता बारम्बार।
बेटा अब ना मान कर अपना समय विचार॥
अपना समय विचार, है इससे सहस्रांशु नृप हारा।
नल कुबेर सुर सुन्दर आदि, मान सभी का मारा॥
आज्ञा में भूप अनेक, मुख्य सुग्रीव बड़ा बलवारा।
चढा पुण्य प्रचण्ड तेज, सूर्य सम आज उजारा॥

दौड़

प्रथम ही प्रेम बढ़ावो, रावण से भागिनी विवाहो।
ध्यान गौरव का करना, यदि छिड़ा संग्राम पुत्र तो पड़ेगा संकट जरना॥

दोहा

सुनी बात जब इन्द्र ने, जल बल हो गया ढेर॥
प्रबल सिंह सम उछल कर, खैंच लई शमशेर।
बोला ले तलवार तुम्हीं, ने तो कांटे बोये हैं।
लंका किष्किन्धा, आदि देश सभी खोए हैं॥

कायर अति बल हीन, अपौरुष तुम्हारे मन होए हैं।
प्रथम ही देता मसल, दिया मुझे रोक आज रोये हैं॥

दौड़

अरि की करे बड़ाई, मेरे मन को नहीं भाई।
भय क्या दिखलाते हैं, उदय होत ही भानु के
सब तारे छिप जाते हैं॥

दोहा

निर्लज्जता की बात है, जो तुम किया विचार।
शत्रु को दे बहन मैं, करूं सांप से प्यार॥
इतने में दशकंधर का दूत भी पहुँचा आय।
इन्द्र कहने लगा, पहले माथ नमाय॥

दोहा

नमस्कार मम लीजिये, धीर वीर महाराज।
दो अक्षरी एक बात मैं कहने आया आज॥
कहने आया आज आपका, भला सदा चाहता हूँ।
शक्ति भक्ति दो जीव के, रक्षक बतलाता हूं॥
करो जो हो स्वाधीन आपके, मैं वापिस जाता हूं।
देश्रो भेंट संग्राम करो या, अन्तिम समझता हूं॥

दोहा

दूत वचन सुन इन्द्र को, छाया रोष अपार।
बेइज्जती से दूत को, धक्का दे किया बाहर॥
रण तूर बजाया उसी समय, सुन शूर सभी हर्षाये हैं।
अब वीर परस्पर रण भूमि को, तेजी से उठ धाए हैं॥
अति घोर संग्राम हुवा जहाँ रक्त फुवारे चलते हैं।
आते हैं अग्नि बाण उन्हें जल बाण से शीघ्र मसलते हैं॥

दोहा

शक्ति को सब देखते, पुण्य ओर नहीं ध्यान।
पुण्य बिना शक्ति सभी, होती तृण समान॥
मेघनाथ ने इन्द्र की, मुश्कें ली चढ़ाय।
मान भंजने के लिये, लंका दिया पहुँचाय॥
रावण सुत ने इन्द्र को, लिया युद्ध में जीत।
प्रसिद्ध नाम तब से, हुआ जग में इन्द्रजीत॥

ऐश्वर्य अपना जमा वहां, फिर लंक पाताल में जाने लगे।
त्रिखण्डी रावण को सब जन, जय जय के शब्द सुनाने लगे॥
उत्सव की यह महा धूम, सब तीन खंड में छाई है।
अब लंका में प्रवेश किया, घर घर में बंटी बधाई है॥

दोहा

भयानक कारागृह में दिया इन्द्र को ठोंस।
प्रबल से दुर्बल किया, सम्पदा ली सब खोस॥
सहस्रार ने विनती, की रावण से आन।
पुत्र भिक्षा आप से, मांगत हूँ मैं दान॥

बोला रावण दूं छोड़ किन्तु, यह ध्यान अवश्य धरना होगा।
अब कुछ दिन लिये, राज्य मार्ग को रोज साफ करना होगा॥
कर दिया क्षमा हमने इसको, बस एक आपके कहने पर।
वरना यह सजा के लायक था, अपराध का पुंज जमाने भर॥

दोहा

कर प्रतिज्ञा भूप ने, इन्द्र लिया छुड़ाय।
नीच काम करना पड़ा, मन में अति पछताय॥

गाना नं० २६

(तर्ज—है दूर देश उस रंग का । कोई रंगते हैं ब्रह्म ज्ञानी)

कर्मों ने नाच नचाया, क्या से क्या मुझे बनाया
सुर पुर के सम मैं इन्द्र था, सुधर्म सभा सम घर था ।
सब राज साज सुन्दर था, बन गई स्वप्ने की माया
कर्मों ने मान गलाया । १ ।

कोई संग न साथी अङ्गी, सामान कहां वह साधन जंगी
हुआ आज नीच एक भंगी, परतन्त्र महा दुख पाया
हो गई स्वप्ने की माया । २ ।

उदय पूर्व कर्म दुखदाई, जिसने यह दुर्गति बनाई
जिन्दगी सब वृथा गमाई, कुछ भी ना धर्म कमाया
है ढलती फिरती छाया । ३ ।

अब शुक्ल मुनि कोई आवे, मन का सब भ्रम मिटावे ।
शान्ति का पाठ पढ़ावे, तोड़े कर्मों की माया—
आगे कुछ नहीं कमाया । ४ ।

चौपाई

ज्ञानवान् मुनि एक पधारे । तब इन्द्र विनती उचारे ॥
कौन कर्म प्रभु किया अति भारी । जिसने करी दुर्गति हमारी ।

दोहा

पूर्व भव का जो सम्बन्ध, कहे मुनि समझाय ।
जिसका फल तुमको मिला, सुनलो कान लगाय ॥
अरिंज नगर में ज्वलनसिंह, नृप वेगवती रानी तिसके ।
अहिल्या नामक सुता अनुपम, रूपवती जन्मी जिसके ॥
रचा स्वयंवर राजा ने, नृप आये शोभा मतवाली ।
आनन्द माली नृप के गले में, कन्या ने वर माला डाली ॥

दोहा

नाम तड़ित प्रभ तुम, तभी कोपे मन मंझार।
आनन्द माली से, रहा तेरा द्वेष अपार॥

अनित्य समझ आनन्द माली ने, दुनिया तज चारित्र लिया।
ध्यानारूढ़ देख मुनिवर को, तैने दारुण दुःख दिया॥
आनन्द माली का भ्राता, कल्याण मुनि गुण आगर था।
तेजू लेश्या लगा छोड़ने, तप जप का जो सागर था॥

दोहा

सत्यवती तव नार ने, मुनि शान्त किया आय।
लेश्या तुरन्त सहार ली, तुझको दिया बचाय॥

कई जन्म बाद सहस्रार के घर, आ जन्मा इन्द्र नाम से तू।
पुण्य भुगत के हुवा लज्जित, मन्द कर्मों के परिणाम से तू॥
दुःख दिया था जो मुनिराजों को, यह उसका ही फल पाया है।
फल कर्म गति का समझ इन्द्र ने, संयम में चित्त लाया है॥

दोहा

तीन खंड का अधिपति, दशकंधर नृप राय।
बड़े बड़े भूपाल सब, गिरे चरण पर आय॥

चौपाई

एक दिवस दशकंधर राई। नग सुवर्ण पर पहुँचा जाई॥
अनन्त वीर्य वहां केवल ज्ञानी। तीन काल के अन्तर्यामी॥
मुन उपदेश धर्म सुखदाई। दशकंधर दिया प्रश्न सुनाई॥
ऐसा कौन कहो नृप राई। मेरी घात करे जो आई॥

दोहा

मुनिवर ने तब यों कहा, सुनो त्रिखंडी नाथ।
पड़ेगा पाला आपको, वासुदेव के हाथ॥

परनारी सम्बन्ध से, होगा तेरा नाश ।
पुण्य आपका है अभी, कुछ समय तलक प्रकाश ॥
उसी समय रावण ने, दिल में यह प्रतिज्ञा धार लई ।
परनारी ना चाहे जो मुझको, उससे करूंगा प्यार नहीं ॥
करके नियम चला लंका को, मुनिवर को प्रणाम किया ।
मन वचन कर्मसे नियम, निभाने का दिल निश्चय धार लिया ॥

(इति रावणोत्पत्यधिकार)

हनुमानुत्पत्ति

दोहा

उत्पत्ति उस वीर की, सुनो लगा कर कान ।
नाम अमर जिन यहां किया, फिर पहुंचे निर्वाण ॥

गाना नं ३०

पवनसुत अंजनी के जाए, धर्म के अवतार थे ।
सत्य के प्रतिपाल योद्धा, देश के शृंगार थे ॥

वीरता के पुंज तेजस्वी, गदाधारी यति ।
लंकपति आदि भी जिनकी, शक्ति पे बलिहारी थे ॥
फांद के सागर को खलदल, दल सिया सुध लाये जब ।
राम सेना सहित उनपै, हो रहे बलिहारी थे ॥
तेज तप संयम का पालन, भक्ति शक्ति थी अटल ।
देश व्रतधारी थे योद्धा, सर्व शद्धाचार थे ॥

क्या लिखें महिमा शुक्ल, उपमा कोई मिलती नहीं।
दीनबन्धु थे यह, दुःखियों के प्राणाधार थे।

(तर्ज—वहरे शिकस्त गाना)

गुण वर्णन मैं करूं कहां तक न इतनी शक्ति जबान में है।
शूर वीरता तेज निराला वीर्य सामर्थ्य हनुमान में है॥
सच्चे पक्ष के थे प्रतिपालक, उत्पात बुद्धि हर आन में है।
कष्ट निवारा था माता का प्रगट नाम किया जहान में है॥
उपकार तेरा नहीं दे सकता यह शब्द राम की जबान में है।
बड़े-बड़े योद्धा किये पसण, शक्ति अद्भुत कमान में है॥
तप संयम की क्या करूं बड़ाई, शक्ति नहीं प्रमाण में है।
शुक्ल विराजे जा शिवपुर में, यह लज्जत पद निर्वाण में है॥

दोहा

रूपाचल पर्वत भला, शोभनीक स्थान।
बाग बगीचे महल का, गौरव अधिक महान॥
आदित्य नगर प्रहलाद भूप, गृह केतुमती रानी दानी।
उदयाचल पे भानु प्रकाश, स्वपने में देखा पटरानी॥
वृत्तान्त सुनाया राजा को, नृप ने फल स्वप्न का बतलाया।
शुभ जन्म हुवा जब पुत्र का, राष्ट्र भर में आनन्द छाया॥

दोहा

दान बहुत नृप ने दिया, निर्धन किये धनवान्।
नाम धरा फिर कुमर का, पवन जय गुणवान्॥
शुभ लक्षण थे बत्तीस अंग में, सर्व कला के ज्ञाता थे।
प्रण वीर कुंवर रणवीर पवन, बलवीर ये जग विख्याता थे॥
महेन्द्रपुर इक अन्य नगर था, भूप महेन्द्र यहाँ का था।
थे सौ पुत्र बलवान्, और पुत्री का नाम अंजना था॥

दोहा

पुत्री के वर के लिये, देखे राजकुमार।
पवन कुमर विद्यु त प्रभ, थे कुबेर अवतार ॥
प्रथम टेवा विद्यु त का, महाराजा ने मंगवाया है।
शुभ लग्न स्पष्ट करने के हेतु, पण्डित को दिखलाया है ॥
अष्टांग ज्योतिषी बतलाया, तप संयम चित्त लगायेगा।
वर्ष अठारह की आयु में, प्राणान्त हो जायेगा ॥

दोहा

पवन जय निश्चय किया, छोड़ विद्यु त उसी आन।
तीन दिवस में कर दिया, शादी का सामान ॥
पवन जय तब कहे मित्र से, क्या तुमने देखी बाला।
पहिले मुझको दिखला दो, जिससे विवाह होने वाला ॥
एक घडी का चैन नहीं, विन देखे राजकुंवारी के।
कैसे हैं विलक्षण लक्षण, देखूं जाकर देश दुलारी के ॥

दोहा

प्रहसित मित्र कहे कुमर से, धीर धरो मन मांह।
सूर्य अस्त हो जाय तो, फिर विचार कुछ नांह ॥
जब हुआ शाम का समय, विमान में बैठ महेन्द्रपुर आये।
जा खड़ा किया विमान, महल पै अंजना के दर्शन पाये ॥
बैठी हुई संग सहेलियों के, शोभायमान सुकुमारी थी।
मानों तारा मण्डल में प्रगटी, चन्द्रमुखी उजियारी थी ॥

दोहा

पुण्य रूप तन देख कर, पाई खुशी अपार।
स्नेह दृष्टि से देखते, थके न पवन कुमार ॥

नव युवकायें थीं इधर, गा रहीं मंगलाचार।
होनहार के हृदय में, था कुछ और विचार॥

(गाना सहेलियों का-कव्वाली)

गोरी मुख पर है काली लटा छा रही
चन्द्रमा पर है मानो छटा छा रही।
उमड़ आई दरिया बरसने लगी,
चांदनी चन्द्रमा को तरसने लगी।
है जटा शंकरी पर जटा छा रही,
चन्द्रमा पर है मानो घटा छा रही।
तेरी उलझी लटा कौन सुलझायगी,
हम संवारें तो मंहदी उतर जायगी।
है शुक्ल पक्ष में क्या छटा छा रही,
चन्द्रमा पर है मानो घटा छा रही।

दोहा

सब सखियां थी गा रही प्रेम भरा यह गान।
तब आरम्भ किया हास्य यों एक सखी ने आन॥
देखो री सखी अंजना देवी, धर्मात्मा पुण्य निशानी है।
सुर नल कुबेर सम पति, पवन वर मिला अनुपम दानी है॥
है राजदुलारी चन्द्रमुखी, सूरज मुख पवनकुमार सखी।
अंजना है शीलवती पवन भी, वीरता का अवतार सखी॥
चिर जिए युगल जोड़ी बांकी, सौंदर्य के भण्डार सखी।
जग में यश कीर्ति पाये शुक्ल, भारत के प्राणाधार सखी॥

दोहा

मिश्रकेशी कहे सखी, गुण भी देखो बीच।
विद्युत प्रभ कहां केशरी, पवन जय कहां रीछ॥

वसन्त तिलका ने कहा तुम नहीं जानो भेद ।
विद्युत प्रभ स्वल्प आयु है, सरती नहीं उम्मेद ॥
चौथी बोली सोच समझ कर, बात नहीं तू करती है ।
कहाँ अमृत कहाँ जहर सभी को, एक भाव से धरती है ॥
अपना ही तान अलाप रही, गौरव ना जरा पिछानती है ।
यह संस्कार पिछले जन्मों के, तू बावली क्या जानती है ॥

दोहा

वसन्त तिलका से सखी, बोली कुछ झुंझलाय ।
सुन मेरी तू बात को, वृथा ना यों घबराय ॥
स्फटिक रत्न सुकांच कहां, और कहां मुलम्मा कहां मणि ।
राढा मणि स्वर्ण मेल कहां, कहां हेम कहां लोहिताक्ष मणि ॥
कहां विद्युत प्रभ चर्म शरीरी, कहां पवन जय भवधारी ।
कहां गुलाब और फूल सेवती, केसूफूल लसन क्यारी ॥

दोहा

सुनते ही व्याख्यान यह, हुवा पवन जय लाल ।
तलवार खैंच कर में लई, बोला आँख निकाल ॥
बोला आंख निकाल मेरा यह प्रेम नहीं रखती है ।
अपमान मेरा सुन खुश होती, मन ही मन में हंसती है ॥
है इसके आधीन सभी, फिर मना नहीं करती है ।
क्या मित्र ये शून्य चित्त, मम अर्धाङ्गिनी बनती है ॥

दौड़

मार कर आज दुधारा, करूं इसका सिर न्यारा ।
प्रहसित तब बात सुनाई, नारी अवध्य कहाए बता
शूरमता कहां चलाई ॥

दोहा

राजकुमारी सब तरह, है मित्र निर्दोप।
निन्दा कुछ करती नहीं, ना मन में कुछ रोप॥
विवाहों के यह कार्य हैं, इनका यही स्वभाव।
गाली हंसी अपमान सब, होते हैं रंग चार॥

अभी तो कुछ भी नहीं हुवा, फिर ब्याह में तुम्हें दिखायेंगे।
बर्ताव यही हमसे होगा, देखें क्या आप बनावेंगे॥
इसी समय वापस आये, दिल गुस्से में था भरा हुवा।
पर शादी से इन्कार किया, अपमान का भूत था चढ़ा हुवा॥

दोहा

फिर समझाया मित्र ने, प्रेम भाव से आन।
मांग ब्याहे बिन छोड़ना, यह भी है अपमान॥

क्षत्री नहीं वह मुर्दा जिसकी मांग दूसरा ले जावे।
अपमान है अपने कुल का, और निज मान नहीं परसे जावे।
प्रहसित मित्र ने समझाकर, कंकना तथा मुकुट बंधाया है।
अति सजी जंज गाजे बाजे, हस्ती पर पवन चढ़ाया है।

दोहा

शोभा अधिक विमान की, वर्णी नहीं कुछ जाय।
मान सरोवर जाय के, डेरा दिया लगाय॥

महेन्द्र नृप ने लड़की का, मान सरोवर विवाह किया।
हस्ती रथ विमान दहेज में, माणिक्य मोती हार दिया॥
चौंसठ कला प्रवीण, अंजना पहिले ही गुण आगर थी।
फिर भी विदा समय माता ने, शिक्षा दई सुधाकर थी॥

गाना नं० ३१

सिधारो लाड़ली मेरी, यह शिक्षा भूल ना जाना।
यह शिक्षाप्रद वचन मेरे हैं, भोली भूल ना जाना॥
पति पूजा पति भक्ति है सच्चा धर्म नारी का।
धर्म सम्बन्धी सब ग्रन्थों का, पढ़ना भूल ना जाना॥
न रखना खेद मन में प्रेम, करना ननंद देवर से।
सकल सम्बन्धियों का, मान करना भूल ना जाना॥
ससुर सासु से लड़ना, झगड़ना कुढ़ना नहीं होगा।
सदा मिल बैठ करना धर्म, चर्चा भूल ना जाना॥
पति की चरण धूली का, तिलक मस्तक चढ़ा लेना।
पति पग पे सदा सिर को, निमाना भूल ना जाना॥
आये गृह पे अतिथियों को, खिलाना प्रेम से भोजन।
सती साधु को देना दान, प्रेम से भूल ना जाना॥
कभी भूतों व प्रेतों से, न डरना भूल कर भी तुम।
सदा छलियों के छलछिद्र से, बचना भूल ना जाना॥
नहीं ता.वीज गन्डों को, भटकना दर पे पोपों के।
किसी धूर्त के फन्दे ना, फंसना भूल ना जाना॥
किसी यन्त्र या मन्त्र तन्त्र को, करना नहीं सेवन।
यह जादू टूणे हैं सब, पोप लीला भूल ना जाना॥
कभी संकट सताये तो, पढ़ो नमोकार मंत्र को।
सदा अरिहन्त का शरणा, तू जपना भूल ना जाना॥
शुक्ल आनन्द की वर्षा, सदा वर्षे तेरे गृह में।
है करता धर्म ही प्राणी की, रक्षा भूल ना जाना॥

दोहा

प्रेम भाव से विदा हो, आये निजस्थान।
सुनो विचित्रता कर्म की, जरा लगाकर कान॥

आदित्य नगर मे आते ही, रानी महलों पहुँचाई है।
और पवन जय नृप के दिल में, बस वही रंजगी छाई है॥
कर्म किसी के सगे नहीं, यह भंग रंग में करते हैं।
इस कर्म जाल मे फंसे हुवे, संसारी नित्य दुख भरते हैं॥

दोहा

बोली गोली से बुरी, तीखा आरा जान।
आरा से बोली बुरी, कर देती घमसान॥
बोल कुबोल न बिसरे, शूल समा सालन्त।
रति कभी ना उपजे, प्रतिदिन आर्तवन्त॥

ना कभी पास जाये रानी के, ना उसको देखना चाहता है।
अंजना को दिन रात निरन्तर, यही रंजोगम खाता है॥
निश दिन पड़ी झुरे महलों में, भेद ससु ने जब पाया।
समझाया बहु विधि कुमर, पर ख्याल तलक भी नहीं लाया।

दोहा

प्रहसित सब कहने लगा, तुम हो चतुर सुजान।
किन्तु उचित तुमको नहीं, अंजना का अपमान।

निन्दा उसकी होती है, जो शूरवीर रण से भागे।
दृढ धर्मी वह कहलाता है, जो बुरा काम मन से त्यागे॥
वह मित्र दुष्ट जो छल करता, ब्रह्मचारी दुष्ट शील त्यागे।
बुरा काम वह दुनिया मे, जिसके करने से यश भागे॥
वह नार दुष्ट जो तजे पति, है दुष्ट पति त्यागे नारी।
वह दुष्ट जो न त्यागे वैर, बदकार कार न तजता बदकारी।
वह भी दुष्ट कहलाता है, जो निरपराधी को दुःख दे॥
तथा वह भी होता दुष्ट मित्र को, संकट में ना जो सुख दे।

दोहा

समझाया सब तरह से, दे उपदेश विशाल।
एक नहीं हृदय धरी, पत्थर बूंद मिशाल॥
रावण का एक दूत तब, आ पहुँचा तत्काल।
जो आज्ञा महाराज की, सभी बताया हाल॥

दश कन्धर की यह आज्ञा है, दल बल लेकर जल्दी आओ।
वरुण भूप नहीं माने आन, तुम जल्द सहायक बन जावो।
संग्राम महा नित्य होता है, और वरुण अति गर्वाया है।
सुग्रीवादिक सब आ पहुँचे, अब आपको शीघ्र बुलाया है॥

दोहा

वरुण भूप के पुत्रों में, शक्ति ला मदकार।
खर दूषण को जिन्होंने, डाला कारागार॥

है शक्ति में गम्भीर वरुण की, फौज का पार ना आता है।
नहीं हलवे का खैर, वैरना दिल मे जरा भुलाता है॥
सैना है कूच को तैयार सिर्फ एक देर तुम्हारे जाने की।
अब मवने ही दिल ठानी है, शत्रु को स्वाद चखाने की॥

दोहा

जंगी वस्त्र पहन कर, हुए भूप तैयार।
झट रण तूर बजा दिया, हाथ लई तलवार॥
तैयार पिता को देखकर, आये पवनकुमार।
पिता लड़े संग्राम में, सुत को है धिक्कार॥

अज्ञानी वह पुत्र रहे घर, पिता जाय संग्राम लड़े।
अविनयी वह शिष्य, गुरु की आज्ञा के जो विरुद्ध पड़े॥

पिता नहीं वह शत्रु जो, बच्चों को नहीं पढ़ाता है।
नहीं शूरमा है कायर, जो रण में पीठ दिखाता है॥
नालायक वह बहू सदा, जो सास से टहल कराती है।
विनय रहित जो पुरुष, कीर्ति उसकी भी छिप जाती है॥
मैं रहूं पिता संग्राम जाय, यह बात न मुझको भाती है।
है कायरता का कर्म मुझे, इस कर्म से लज्जा आती है॥

दोहा

हय गय रथ पायक सभी, हुए विमान तैयार।
जंगी वस्त्र पहिन कर, मन में खुशी अपार॥
पता लगा जब नार को, आई दर्शन काज।
हाथ जोड़ कहने लगी, सुनो अर्ज महाराज॥

ना कभी आज्ञा भंग करी, ना तन मन से अपराध किया।
केवल शरणा एक आपका, क्यों उससे भी धिक्कार दिया॥
आप तो हैं रक्षक मेरे, फिर कसर कोई मुझमें होगी।
जिस अपराध से आपके, मन में नाराजगी बैठी होगी॥

दोहा

पवन जय जब देखता, तिरछी दृष्टि डाल।
बिन पानी सम फूल के, महारानी का हाल॥

चमक दमक सब मुर्झाई, शृंगार नहीं कोई अंग में।
शुभ लक्षण जो पड़े हुए, वह कैसे छिप सकते तन में॥
ताम्बूल न कोई मिस्सी है, ना अंजन आँख में लाती है।
फिर भी तो यह सुन्दर पुतली, हीरे की चमक दिखाती है॥

दोहा

आगे बढ़ रानी झुकी, गिरी चरण में आन।
आप मेरे भर्तार हैं, आप ही प्राण समान॥

एक आसरा चरणों का है, दोष क्षमा सब कर देना।
विजय आपकी हो रण में, फिर दासी को दर्शन देना॥
आप क्षमा के हैं सागर, और नारी मूढ़ अज्ञान हूं मैं।
वार-वार तुम चरणों में, इक माँग रही क्षमादान हूँ मैं॥

दोहा

पवन कुमर ने रोष में, धक्का दे किया वाद।
उस अपराध का अब, तुम्हें आने लगा स्वाद॥

उस समय क्या रसना गहने थी, अब चपर २ जो चलती है।
बेइज्जती सुन खुश होती थीं, अब धरणी शीश मसलती है॥
ये क्या चरित्र फैलाया है, ऊपर से प्रेम दिखाती है।
जैसे तूने किये काम यह, उसका ही फल पाती है॥

दोहा

इतना कह कर कुमर ने, दीना बिगुल बजाय।
मान सरोवर जाय के, डेरा दिया लगाय॥
तिरस्कार पति ने किया, रानी चित्त उदास।
बैठ महल में ले रही, लम्बे लम्बे श्वांस॥

अंजना का गाना नं० ३२

दिया दुख यह कर्म ने भारा, हुवा विमुख कन्त हमारा। (ध्रुव)
कोई दोष नजर नहीं आता, ना भेद कोई बतलाता जी॥
अब यही फिक्र एक भारा, हुवा विमुख कन्त हमारा।
मैंने पिछले भव के मांही, बड़े पाप किये दुःखदायी जी॥
दम्पति के मन को फाड़ा, हुवा विमुख कन्त हमारा।
जो सुनेगी मात हमारी, दुख पायेगी अति भारी जी॥
मैंने किसके पल्ले डारा, हुवा विमुख कन्त हमारा।
पीहर पूछेंगी सखियां मेरी, दुःख सुख की बात घनेरी जी॥

क्या कहूँगी हाल विचारा, हुवा विमुख कन्त हमारा।
अय कर्म दुष्ट हत्यारे, तैंने कब के बदले निकाले जी।
वर्षे नयनों से जल धारा, हुवा विमुख कन्त हमारा॥

दोहा

बसन्त तिलका ने कहा, रानी दिल मत गेर।
सभी ठीक हो जायगा, है कोई दिन का फेर॥

कभी भिखारी बने जीव, कभी राजन पति बन जाता है।
कभी नरक दुःख भोगे जीव, कभी स्वर्ग महा सुख पाता है॥
जब उदय पाप कोई होता है, तो सबके दिल फिर जाते हैं।
चढ़े पुण्य चरणों में गिरते, और ठोकरें खाते हैं॥

दोहा

मान सरोवर पवन जय, सोया सेज मंझार।
चकवी पति वियोग मे, रोवे जारों जार॥

सुने रुदन के शब्द कुमर को, नींद नहीं कुछ आती है।
पूछा मित्र प्रहसित कहो, यह क्यों इतना चिल्लाती है॥
इसकी चीख पुकार हमें, आराम नहीं करने देती।
भर भर आती नींद आंख मे, जरा नहीं पड़ने देती॥

दोहा

प्रहसित कहे यह, दम्पति रहता है संयोग।
रजनी आ वैरन हुई, स्वामी हुआ वियोग॥
सोच कुमर को आगई, कांप उठा तत्काल।
पत्नी की जब यह दशा, अंजना का क्या हाल॥

इसी तरह यह रात दिवस, रोती और कुरलाती होगी।
हार शृङ्गार छोड़ सारे ना, खाती न पीती होगी॥

पहिले तो कुछ आशा थी, पर अब निराश हो जावेगी।
रण से वापिस आने तक, वह अपने प्राण गमावेगी॥

चौपाई

उसी समय प्रहसित से बोले, भाव सभी जाने के खोले।
सन्तोष बिना मर जावे नारी, है पतिव्रता राजदुलारी॥

दोहा

दोनों बैठ विमान में, आये तुरत आवास।
रानी दुख में ले रही, लम्बे-लम्बे श्वांस॥

दोहा

प्रहसित तब कहने लगा, रानी खोल कपाट।
कुमर पवन जय आये हैं, लम्बी करके बाट॥
रानी तब कहने लगी, कौन है हटो पिछाड।
पहिरे हैं चारों तरफ, तू कहां महल मंझार॥
कौन तू महल मंझार, पति मेरा संग्राम गया है।
छल बल करता कौन, मेरे तू महलों में आया है॥
पकडा दूंगी अभी यदि, मरना पसन्द आया है।
बारा वर्ष हो गये पति ने, चरण नहीं पाया है॥

दोहा

नाम ना सुनना चाहते, कहो, कैसे घर आते।
मुझे तू क्यों बहकावे, भाग्यहीन मैं कहाँ पति
परमेश्वर दर्श दिखावे॥

दोहा

रानी जी निश्चय तुम्हें, भ्रम और संताप।
बैठ झरोखे स्वामी के, दर्शन करलो आप॥
दर्शन करलो आप प्रहसित, मैं मित्र हूँ स्वामी का।
तू है मेरी मात सती, मैं सेवक महारानी का॥

जो भी है अपराध मेरा, सब भूल क्षमा करना चाहिये।
मैं हूं नाथ शरीर की छाया, मुझे भुलाना ना चाहिये॥

दोहा

दुख फिकर जैसा नहीं, दुनिया में कोई रोग।
खुशी प्रसन्नता मम नहीं, सुख का और संयोग॥
दुख चिन्ता सब दूर हुई, अब दिल में अति हर्षाये हैं।
फिर हंसे रमें दम्पति प्रेम, दोनों ने अधिक बढ़ाये हैं॥
जब लगा कुमर वापिस जाने, रानी ने गिरा सुनाई है।
पास चिन्ह कुछ रहने को, यह सब ही बात बनाई है॥

दोहा

प्राणपति तुम तो चले, लड़ने को संग्राम।
मुझको देते जाइये, उत्तर का सामान॥
इस बात को सभी जानते हैं, नहीं कुमर महल में जाता है।
फिर चले आप संग्राम यहां, नहीं मेरी कोई सहायता है॥
मुझे निशानी दे दीजे, क्यों कि अपवाद से डरती हूँ।
एक आसरा चरणों का, धर ध्यान गुजारा करती हूं॥

दोहा

नामांकित दे मुद्रिका, पहुचे कटक मंझार।
फेर गये लंकापुरी, रावण के दर्बार॥
रावण ने दिया वरुण पे. अपना कटक चढ़ाय।
लगा घोर संग्राम फिर, रणभूमि में आय॥
अंजना के होने लगे. प्रकट गर्भ आकार।
गुप्तपने की बात थी, कोई न जाने सार॥
पता लगा जब सास को, केतुमति तसु नाम।
आग बबूला होगई, गर्जी सिंहनी समान॥

दोहा

अरी पापिनी अंजना, अंजन कैसा नाम।
जैसा तेरा नाम है, वैसा तेरा काम॥

जैसा तेरा काम पापिनी, यह क्या कर्म कमाया।
पुत्र मेरा प्रदेश दुराचारण, कहां उदर चढाया॥
अरि कलंकिन निर्भागन, तैं कुल को दाग लगाया।
कुमर गया नहीं महल, बता ये किसका गर्भ धराया॥

दौड़

पतिव्रता कहलाती, जरा भी नहीं लजाती।
डूब के मर जाना था, या तो रखती शील नहीं,यह
मुख नहीं दिखलाना था॥

सास का गाना नं० ३३

अय अंजना पापन महा निरभागिन,खोया है कुल का गौरव मेरा।
माया चारी करी तैंने भारी॥ अय०

यदि सत्य हाल सुन पाऊंगी, तो दया भी तुझ पर लाऊँगी।
निर्वाह की शक्ल बनाऊंगी, आयु तेरी निभवाऊंगी॥

नहीं आफत तुझ पर आवेगी, रो रोकर समय बितावेगी॥
इस घर में जगह न पावेगी, वन वन में धक्का खावेगी।
ऊपर से भोली सूरत है, हृदय में महा कदूरत है॥

धिक्कार ये तेरी सूरत है, जो कुलमर्यादा चूरत है।
बदनामी का ढोल बजा दूंगी, दुनिया से तुझे मिटा दूंगी।
[illegible] के अभी दिखा दूंगी, नाकों से चने चबा दूंगी॥

अंजना का गाना नं० ३४

तू है लासानी-पुण्य निशानी, कायम रहे यह गौरव तेरा-
हितकारी सासु हमारी—ध्रुव

किन्तु अन्वी यह ताकत है, जो लाती हम पर आफत है।
यह नौतर ही जो जाफत है, क्यों गला हमारा कापत है॥
क्या इसमें तेरी बड़ाई है, गम्भीरता सभी भुलाई है।
दीनों पर करी चढ़ाई है, जो प्रलय काल बन आई है॥
ना भरम की कहीं दवाई है, इसका अंजाम तवाही है।
तुमको अब वेपरवाही है, ऐश्वर्य में गरवाई है॥
दुष्ट कर्मों से डरना चाहिये, दुखियों का दुख हरना चाहिये।
यह कोप दूर करना चाहिये, देना सबको सरना चाहिये॥
सब रौद्र ध्यान यह दूर करो, विनती हमरी मंजूर करो।
सब चिन्ता दूर हजूर करो, चरणों से न हमको दूर करो॥

केतुमति अय अंजना पापन, धिक्कार है तेरे सतीत्व पर, पतिव्रत पर, इस कृत्य पर॥

अजना अरि प्रथम हृदय में तोलो। फिर कुछ बोलो वचन सुजानकर। गुणवान समु जो बोलो कुछ वचन सुधारकर, कुछ ख्याल कर, सुन कान कर॥ ध्रुव।

केतुमति अरि उल्टी हम पर धौंस जमा कर बोलती जैसे नृत्यकर।

अंजना निष्कारण क्यों झगड़ा है।

केतुमति क्या सुना नहीं।

अंजना वृथा सब रगड़ा है।

केतुमति दुःख मिला नहीं।

दोहा

अरी पापिनी अंजना, अंजन कैसा नाम ।
जैसा तेरा नाम है, वैसा तेरा काम ॥
जैसा तेरा काम पापिनी, यह क्या कर्म कमाया ।
पुत्र मेरा प्रदेश दुराचारण, कहां उदर बढाया ॥
अरि कलंकिन निर्भागिन, तैं कुल को दाग लगाया ।
कुमर गया नहीं महल, बता ये किसका गर्भ धराया ॥

दौड़

पतिव्रता कहलाती, जरा भी नहीं लजाती ।
डूब के मर जाना था, या तो रखती शील नहीं,यह
मुख नहीं दिखलाना था ॥

सास का गाना नं० ३३

अय अजना पापन महा निरभागिन,खोया है कुल का गौरव मेरा ।
माया चारी करी तैंने भारी ॥ अय०
यदि सत्य हाल सुन पाऊंगी, तो दया भी तुझ पर लाऊँगी ।
निर्वाह की शकल बनाऊंगी, आयु तेरी निभवाऊंगी ॥
नहीं आफत तुझ पर आवेगी, रो रोकर समय वितावेगी ॥
इस घर मे जगह न पावेगी, वन वन में धक्का खावेगी ।
ऊपर से भोली सूरत है, हृदय में महा कदूरत है ॥
धिक्कार ये तेरी सूरत है, जो कुलमर्यादा चूरत है ।
बदनामी का ढोल बजा दूंगी, दुनिया से तुझे मिटा दूंगी ।
करके अभी दिखा दूंगी, नाकों से चने चबा दूंगी ॥

नाम बदनाम न करना, मुझे है तेरा शरणा।
चरण में शीश निवाऊं, निकले दोष यदि मेरा तो
उसी समय मर जाऊं॥

दोहा

गिरी गिराई मुद्रिका, लगी कहीं से हाथ।
धक्का देकर सुत गया, आया बतावे रात॥
जिसको नाम नहीं भाता, उसको आया बतलाती है।
समझ दुराचारण तुझको, माता भी नहीं बुलाती है॥
कलंकित करके दोनों कुल, फिर सती भी बनना चाहती है।
निकल पापिनी यहां से, क्यों काला मुंह नहीं कर जाती है॥

दोहा

केतुमति ने उस समय, सेवक लिये बुलाय।
ले जावो इसको अभी, पीहर देओ पहुँचाय॥
यह कलंक यहां से ले जाओ, महेन्द्र नृप को दे आना।
यदि नहीं रखे तो वहीं इसे, धक्का देकर वापिस आना॥
कह देना सब बात साफ, यह सती जो तुमने व्याही है।
उन सबको तो डोबाई, अब तुमको डोबन आई है॥

दोहा

सेवक जन लेकर गये, महेन्द्र नृप के पास।
एकान्त बुलाकर के कहा, जो था मतलब खास॥
जब सुना हाल हुआ दुःख बड़ा, दाँतों में अंगुल दबाई है।
यह सुना नहीं शत्रु मेरी, कीर्ति सब धूल मिलाई है॥
अब शीघ्र यहाँ से ले जावो, और विजन स्थान छोड़ो जाकर।
दुष्टा ये स्वयं मर जावेगी, अपनी करनी का फल पाकर॥

दोहा

कैसे पाला था इसे, लाड चाव के साथ।
मेरे गौरव का किया, इस दुष्टा ने घात ॥

अमृत में विष बेल और, घन से बिजली होती पैदा।
दीपक से जैसे काजल, तैसे यह मुझसे हुई पैदा ॥
सर्प कटी हुई अंगुली को, रखने से जहर पसरता है।
इसी तरह इसको रखने से, अपयश मेरा बरसता है ॥

दोहा

देख सका ना दुःख महा, मन्त्री चतुर सुजान।
राजा को कहने लगा, ऐसे मधुर जबान ॥
राजन् करना चाहिये, सोच समझ कर काम।
गुप्त महल रखो इसे, लेवो भेद तमाम ॥

ससुर गृह रूसे लड़की तो, पीहर में आ जाती है।
यहाँ से आगे और कहीं पर, ठौर नहीं दिखलाती है ॥
जल में नहीं अग्नि होती, ना ज्ञान असंगी पशु में है।
इस लड़की में कोई दोष नहीं, यदि है तो केवल ससु में है ॥

दोहा

मन्त्री तुमको नहीं पता, पवन ज [illegible]
यहां भी [illegible] उन्हें, कारण क [illegible]

अपनी बेइ [illegible] त्री, सब कोई [illegible] ।
ऐसा कौन [illegible] अपनी [illegible] ॥
जब छिपी [illegible] कहीं [illegible] ॥ है।
यदि वमन [illegible] तो [illegible] है।

दोहा

आज्ञा पाकर भूप की, ले गये वन मंझार।
वसन्तमाला और अंजना, छोड दई निराधार॥
दोनों उस वन खंड में, रोवें आंसू डार।
व्याकुलता छाई अति, दर्शत कष्ट अपार॥

अंजना गाना नं० ३५

दुख पड़ गया हम पर भारा, इस बेइज्जती ने मुझको मारा।
बारा वर्ष पति की जुदाई, मुश्किल से बनी थी रसाई॥
फिर गर्भ ये मैंने धारा, इस बेज्जती ··· ।१।
फिर सासने ताने मारे, वो भी सहन किये मैंने सारे।
आखिर काला मुंह करके निकाला, इस बेज्जती ··· ।२।
पिता पालक भी हो गया उल्टा, माता भाई भी ना कोई सुलटा।
अब तो आशा भी कर गई किनारा, इस बेज्जती ·· ।३।
जिस माता के था जन्म धारा, हाय उसने दिया ना स ।
पति भी परदेश सिधारा, इस बेज्जती ने मुझको मारा। ४।
खिला किस्मत का यह फिसाना, मेरा शत्रु बना कुल जमाना।
प्रभु तेरा ही एक सहारा, इस बेज्जती ने मुझको मारा। ५।
कौन धीर बधावे हमारी, इस बन खण्ड के मझधार
बिना धर्म ना कोई हमारा, इस बेज्जती ··· ··· । ६।
कहां संग सहेली हमारी, पास रहती थी हर बारी।
आज सबने किया है किनारा, इस बेज्जती ··· । ७।

दोहा (वसन्तमाला)

रानी जी धीरज धरो, तुम हो गुण गम्भीर।
रोने से कुछ ना बने, हरो धीर से पीर॥

गाना नं ३५

(वसन्तमाला बहरे तवील)

अरि रानी तूं रोके सुनाती किसे,
बिना धर्म के कोई हमारा नहीं।
आके कष्ट में कोई सहायक बने,
ऐसा दुनिया में कोई प्यारा नहीं।
रानी जब तक सरोवर में पानी रहे,
वहां चारों तरफ से आ मेला भरे।
सूखे पानी कोई ना चरण आधरे,
उड़ता पक्षी भी लेता उतारा नहीं।
सारे माता पिता मित्र बन्धु कोई,
और सासु सुसर भाई दारा पति।
कोई मीठा वचन भी ना कहता सती,
जब होता है पुण्य सितारा नहीं।
जिन राज भजो मन धीर धरो,
सिद्ध ईश्वर प्रभु का ही ध्यान करो।
शुक्ल शोभन कर्म से ही पाप हरो,
बिना धर्म के होगा गुजारा नहीं।

अंजना गाना नं० ३६

कर्म चक्र ने निश्चय ही मुझे, दरदर रुलाया है।
किसी का दोष क्या इसमें, लिखा कर्मों का पाया है॥
किसी को आसरा देकर, निराशा कर दिया होगा।
इसी कारण मेरी जननी ने, भी मन से भुलाया है॥
सताई है अवश्य निर्दोष, कोई आत्मा मैंने।
मुझे व्यभिचारिणी कहकर, जो सासु ने सताया है॥

किसी प्यारी को प्रीतम से, जुदा मैंने किया होगा।
यही कारण जो विरहानल, से मन मेरा जलाया है॥
विपत्ति सम्पत्ति ऐश्वर्य, सुख दुख और निर्धनता।
स्वयं निज कर्म से प्रत्येक, प्राणी ने बनाया है॥
अमानत मे खयानत, शुक्ल मुझसे हो गई होगी।
जो मुझसे मेरे जीवन, धन को कर्मों ने छुड़ाया है॥

दोहा

दासी कहे रानी सुनो, यह वन खण्ड उजाड़।
रो रो कर मर जायंगी, कुछ नहीं निकले सार॥
कुछ नहीं निकले सार, शेर चीतादि खा जावेंगे।
चलो अगाड़ी निकल कहीं, विश्राम फेर पावेंगे॥
बाल गर्भ हो पुत्र तेरे, दुख सभी भाग जावेंगे।
पुत्र का मुख देख देख, मन अपना बहलावेंगे॥

दौड़

धर्म है एक सहाई. ना कर चिन्ता मन माहीं।
ध्यान सर्वज्ञ का लावो, पंच परमेष्ठी हिये धार
रानी मत दिल घबरावो॥

दोहा

दोनों आगे बढ़ चली, निर्जन वन घनघोर।
हिंसक जीव फिरें अति, बोल रहे कहीं मोर॥
एक मुनि वहां गुफा में, खड़े लगाकर ध्यान।
दासी से रानी कहे यह, क्या देख पहिचान॥

दोहा (दासी)

आते हैं मुझको नजर, है कोई मुनि महान्।
निश्चय कर मैंने कहा, करते आतम ध्यान ॥

श्वेत वस्त्र है जैन मुनि, मुख पर मुखपत्ति लगी हुई।
दो हाथ लटक रहे नीचे को, और दृष्टि ध्यान में जमी हुई ॥
ये लाखों मे नहीं छिप सकते, निग्रन्थ मुनि अति श्रेष्ठ यति।
बस अब समझो कि आन जगी, महारानी अपनी पुण्य रति ॥

दोहा (रानी)

दर्शन हों निग्रन्थ के, निश्चय कटते पाप।
दासी मेरी फड़कती, वामी है शुभ आंख ॥

गाना नं० ३७

समझ ले अब विपत्ति, दूर सारी होने वाली है।
जाग आयेगी शुभ किस्मत, मुसीबत सोने वाली है ॥
मुनि के चल करें दर्शन, हाल पूछेंगी कर्मों का।
श्री जिन वाणी मेरे, आज मल को धोने वाली है ॥
पुण्य मेरे उदय आये, पाप सब दूर जायेंगे।
कृपा अरि हन्त भगवन् की, बीज शुभ बोने वाली है ॥
रत्न सम्यक्त्व है मुझ पर, शील संतोष भी कायम।
मुनि संगति मेरी ये आज, कालिस खोने वाली है ॥
विपत्ति और अटवी में, अनुपम लाभ यह पाया।
मेरे इस धर्म गौरव को भी, दुनिया जोहने वाली है।

चौपाई

उसी समय मुनि पास सिधाई। दर्शन कर रानी सुख पाई ॥
धन्य जन्म प्रभु तुमने धारा। आप तरें औरों को तारा ॥

मैं दुखियारी निर आधारा । धर्म रूप आसरा तुम्हारा ॥
चरण कमल प्रभु शीश नमाऊं । अनमोल समय यह कब र पाऊं ॥

दोहा

विधि सहित वन्दना करी, करके अति गुण ग्राम ।
थकी हुई थी बैठ कर, लगी लेन विश्राम ॥

चौपाई

दासी ने फिर शीश नवाया । कर वन्दना निज हाल सुनाया ॥
कारण कौन प्रभु बतलावो । कर्म भेद सारा दर्शावो ॥
कलंक लगा किस कारण भारी । जिसने हम पर विपदा डारी ॥
अमित गति चारण मुनि बोले । कर्म सिद्धांत भेद सब खोले ॥
अनन्त कर्म कहां तक बतलावें । कुछ जन्मों का हाल सुनावें ॥

दोहा

सुनले रानी ध्यान धर, कर्म बीज वट वृक्ष ।
जिसका फल तुम भोगती दोनों ही प्रत्यक्ष ॥
जम्बू द्वीप के भरत क्षेत्र में, मन्दरपुर वर नगरी कहिये ।
प्रिय नन्दी एक वणिक, जया नामक जिसकी नारी लहिये ॥
पुत्र नाम सागर तिसके, था बाग भ्रमण एक रोज गया ।
दर्शन करके श्री मुनिराज के, सम दम खम की खोज हुवा ॥

दोहा

निर्मल व्रत को पाल के, दूजे स्वर्ग मंझार ।
रूप वैक्रिय धार के, भोगे सुख अपार ॥
नगर मृगांक सरि चन्द्र नरेश्वर, प्रियंगु लक्ष्मी रानी ।
स्वर्ग छोड़ रानी के जन्मा, सिंह चन्द्र सुत सुखदानी ॥
पुनः देवलोक पहुँचे, तप संयम शुभ करनी करके ।
आगे सुनो वृत्तान्त इसी का, फिर जन्मा जहां आकरके ॥

दोहा

बैताड़ गिरि है अरुणपुर, भूप सुकण्ठ उदार।
कनकोदरी रानी भली, रूप कला सुखकार ॥
कनकोदरी के पुत्र हुवा था. नाम सिंहवाहन जिसका।
राज सम्पदा भोग कर, संयम मे ध्यान हुवा तिसका ॥
विमल नाथ के शासन मे, लक्ष्मी धर मुनि थे तपधारी।
पास उन्हीं के संयम लेकर, तप संयम किया अति भारी ॥

दोहा

शरीर औदारिक छोड़ के, लंतक स्वर्ग मंझार।
मन इच्छित भोगे वहा, जिसने सुख अपार ॥
पूर्ण कर वह सुर की आयु, गर्भ तेरे में आया है।
सुखदायक सन्देशा अंजना, पहिले तुम्हें सुनाया है ॥
इस पुत्र के पैदा होते ही, दुख तेरा नस जायेगा।
और पूर्व से भी अधिक, तेरे हृदय में सुख बस जायेगा ॥
चर्म शरीरी जीव इसी भव मे, यह मोक्ष सिधायेगा।
यह नाम प्रसिद्ध करके तेरा, अति शूर वीर कहलायेगा ॥
अब हाल तेरा बतलाते हैं, यहां कनक रथ एक राजा था।
थी कनक पुरी राजधानी, नीति से राज्य चलाता था ॥

दोहा

कनकोदरी लक्ष्मीवती दो थी जिसके नार।
कनकोदरी के सुत हुआ, रूप कला शुभकार ॥

चौपाई

लक्ष्मीवती सुत दिया लकोई, पुत्र विरह मे माता रोई।
भेद मिला सुत लिया निकाल, बारा घड़ी दुःख हुवा मुहाल ॥

हुई बेज्जती और कर्म बन्धाया, उसका फल रानी तू पाया ॥
फिर लक्ष्मी ने धर्म शुद्ध पाला,पहिले स्वर्ग सुख अधिक रसाला ॥

दोहा

देव लोक सुख भोग के, आई तू इस धाम ।
पवन जय है पति मिला, अंजना तेरा नाम ॥

वसन्ततिलका बहिन तेरी थी, इसने प्रशंसा अति करी ॥
सामूदानी कर्म भोगने, यह भी तेरे साथ वरी ॥
जो कोई दुख दे औरों को, वह कभी नहीं सुख पाता है ।
बस्मा जैसे कभी नहीं, मेंहन्दी जैसा रंग लाता है ॥

दोहा

अशुभ कर्म रानी तेरा, होने वाला दूर ।
मामा आन मिलें तुम्हें, मिले सभी सुख भूर ॥

पति भी आन मिलें जल्दी, मत घबरावो मन मे रानी ।
गगन गति कर गये मुनि, चारण कह कर शीतल वाणी ।
रानी ने चरण धरा आगे, एक सिंह सामने जबर खड़ा ॥
वह देख शेर को घबराई, जैसे हृदय पर वज्र पड़ा ॥

दोहा

शरणा ले अरिहन्त का, पढ़न लगी नमोकार ।
उधर खड़ा है शेर वह, इधर खड़ी है नार ॥

शील धर्म का तेज शेर, नहीं आगे पैर बढ़ाता है ।
अनमोल श्री जिन धर्म, सभी आपत्ति दूर भागता है ॥
मणि चूड़ एक विद्या धर, उस वन में गया विचरने को ।
और अष्टापद का रूप किया, अबलाओं का दुख हरने को ॥

दोहा

विद्याधर प्रति सूर्य, जा रहा बैठ विमान।
अबलाओं का रुदन सुन, ऐसे बोला आन॥
कहो बहिन तुम कौन भयानक, निर्जन वन में आई हो।
रही उदासी छाय वदन पर, क्यों इतनी घबराई हो॥
कारण इसका बतलावो, और पता चिन्ह अपना सारा।
तुम हो मेरी बहिन धर्म की, मैं सच्चा वीरन थारा॥

गाना नं० ३६

बताएं क्या भला तुम को, निशां अपना पता अपना।
नहीं संसार में कोई, नजर आता सगा अपना॥
न माता न पिता कोई, न सासु ही बनी अपनी।
पत्नी जिनकी बनी थी मैं, नहीं वह भी बना अपना॥
नहीं पाताल में आकाश में, तिरछे में ठोर अपनी।
रही एक सिद्ध शिला बाकी, वहाँ पर वास ना अपना॥
ठिकाना बेठिकानों का, किसी वन में ना उपवन में।
निराशा मात है अपनी, दर्द दुख है पिता अपना॥
जगत भर ने तो ठुकराया, भुलायें भूलना चिन्ता।
शुक्ल मैं ढूंढ हारी ना मिला, कोई सखा अपना॥

दोहा (प्रति सूर्य)

समझ लिया मैंने, तुम्हें है आपत्ति भूर।
कहो यथार्थ बात जो, करू सभी दुःख दूर॥

दोहा (बसन्त तिलका)

पवन जय भरत है, महेन्द्र नृप तात।
केतुमति सासु मही, हृदय सुन्दरी मात॥

मता ने लेकर बच्चे को, अपने हृदय लगाया है।
वह खुशी कथन नहीं कर सकते, फिर आगे पेच दबाया है॥

चौपाई

आ उत्सव हनुपुर मे कीना। मामे दान खोल कर दीना॥
कैसे कहे अदभुत छवि न्यारी। घर-घर मंगल गावें नारी॥
हनुपुर नगर दशोठन भारी। हनुमत नाम दिया सुखकारी॥
अपर नाम श्री शैल प्रधान। कल्प वृक्ष सम सुख महान॥
राज हंस जिम क्रीडा करे। बत्तीस लक्षण शुभ अंग परे॥
मुख को देख मात सुख पावे। दाग देरा अति मन में लजावे॥

दोहा

और दुख सब हट गये, सुख मिल गया अमोल।
दुःरा एक बाकी रहा, जो सिर चढ़ा कुलोल॥

धन्य घडी धन्य भाग वही, जब पति मेरा घर आवेगा।
रही समुद्र-द्रव वही। कालस आ दूर हटावेगा॥
सत्य मेरा प्रगट होगा, यह दाग पति आ धोवेंगे।
धक्के दिये जिन्होंने मुझको। लज्जित अन्त में होवेंगे॥

दोहा

पवन जय नप वरुण से, जीता दल मे आय।
दर्प हुए दिल में अति, सब प्रशंसमें आय॥

प्रस्थान किया सबने वहां से, रावण लंका को आया है।
और पवन जय ने आन पिता, माता को शीश नवाया है॥
जब पता लगा निज रानी का, हृदय पर वज्रपात हुवा।
झट गिरा धरन मुर्च्छित होकर, पितु माता को संताप हुआ॥

चला वहाँ से माता को, जो था सब हाल सुनाया है।
सुन गिरि धरन मूर्छित होके, इतने में राजा आया है॥

दोहा

हो सचेत कहने लगी, मैं पापिनी निर्भाग्य।
वधु गई पुत्र चला, लगी कलेजे आग॥

गाना नं० ४० (केतुमति)

जो सतावे और को, सुख वह कभी पाता नहीं।
आज अब मुझ पर बनी, यह दुःख सहा जाता नहीं॥
मैंने सताई अंजना, पुत्र मेरा मरने लगा।
राज गारत हो सभी, यह दुःख मुझे भाता नहीं॥
बेटा प्रहसित तूने कभी, मित्र जुदा किया नहीं।
आज क्या होनी बनी, क्यों जाके समझाता नहीं॥
छोड़ तू आया अकेला, घात प्राणों की करे।
फिर शुक्ल मैं क्या करूं, कुछ भी कहा जाता नहीं॥

दोहा (प्रहसित)

माता जी मैं क्या करूं, समझाया हर बार।
जब मैं कुछ न कर सका, तब आ करी पुकार॥
शस्त्र तो मैं ले आया, करें और कुछ खबर नहीं।
था दिल में बेचैन उसे, कोई घड़ी पलक का सबर नहीं॥
शीघ्र बैठ विमान चलो, जाकर उनको समझावेंगे।
यदि हुई देर अपघात करें, कर मलते ही रह जावेंगे॥

दोहा

इतने में ही आ गया, हनुपुर से विमान।
अंजना का जो था पता, सभी बताया आन॥

स्वादिष्ट अचार सब सब मुरब्बे भी लाकर धारे ।
पापड़ कई प्रकार के फिर सेवरु दाल परोसे ॥२॥
फल-फूल मेवा कई मिश्रित पक्का तैयार किया ।
अरवी भिन्डी मटर कचनार केला तोरी घिया ।
व्यंजन छत्तीस साग कस्तूरी सिंगार साग ।
जीमन समय साज बाज साथ गावें मंगल राग ।
शोभन सभी फर्नीचर राजा का सरावें भाग ।
भूपाल ने बड़ी उमंग से क्या कहूं जो माल परोसे ॥३॥
पीवें दूध मलाई जामें मिश्री दई है डाल ।
जीम पकवान कर धोय के हुवे तैयार ।
खाएँ मुख वासना सब शोभा को रहे निहार जी ।
राजा जी का महल इन्द्र महल से अधिक मान ।
क्यों कि दृढ़ धर्मी उपकारी अति पुण्यवान ।
नृप राज ने सन्मुख आनके, फिर सब को माल परोसे ॥४॥

दौड़

क्षेम कुशल वर्ती वहां, सभी प्रसन्न महान् ।
फिर वहां से प्रस्थान कर, पहुंचे निज स्थान ॥
आठ वर्ष का जब हुवा, हनुमान् सुकुमार ।
गुरुकुल में पढ़ने लगे, विद्या ही गुण सार ॥
सोलह वर्ष पढ़ी विद्या, सब बहत्र कला का ज्ञान हुवा ।
शस्त्र कला क्या शास्त्र वेत्ता, शूर वीर बलवान् हुवा ॥
वरुण भूप दश कन्धर का, फिर से युद्ध अपार हुवा ।
आज्ञा पा दशकन्धर की, नृप पवन जय तैयार हुवा ॥

दोहा

पवन जय प्रति सूर्य, लगे युद्ध में जान ।
सन्मुख आ हनुमान ने, करी चरण प्रणाम ॥

राजा रानी और मित्र, प्रहसि
था जलने को तैयार चिता में, के
शीघ्र कुमार को हटा लिया, लक्ष
हनुपुर है अन्जना रानी, सब मे

दोहा (प्रह्लाद

शूरवीर योद्धा बली, क्षत्रिय
नारी पीछे जान दे, यह क्या

दोहा (पवनजय

अबला पीछे मरन का, मम नहीं चित
निर्दोषन को दुख दिया, यही कष्ट
इतने कष्ट दिये सबने, नहीं रोष फेर भी
अवगुण तज लेती गुण सबके, पूर्ण सती
पतिव्रता विनयवान पूरी है, मानन्द शीतल
धर्म दृढ़ दुख सहने में, ऐसी जैसे तरुवर

दोहा

पवन जय आदि सभी, हनुपुर हुए तैयार ।
वैठ विमान में चल दिये, दिल में खुशी अपार ॥
खेचर ने जाकर कहा, हाल अंजना पास ।
दुःख पति का सुन हुई, मन में अति उदास ॥
क्या मैं पापिन ऐसी जन्मी, जो सबको ही दुखदायी
सुख नहीं देखा एक दिवस, जिस दिनकी मैं परणाई
फिर नहीं ऐसा कर्म करूं, मुनिराज ने जो बतलाया
कर्म बीज हो गये गिरि, कुल बारह घड़ी कमाया था

दोहा

प्रतिसूर्य भूपाल ने, लिया विमान सजाय ।
अंजना सुत दासी सभी, बैठे मन हर्षाय ॥
गये सामने मिलने को, मित्र प्रहसित की नजर पड़ी ।
झट बोले देखो पवन कुमर, यह दासी रानी दोनों खड़ी ॥
इतने में ही आन मिले तो, खुशी का ना कोई पार रहा ।
मिले प्रेम से आपस में, सुख दुख का सारा हाल कहा ॥

दोहा

हाथ जोड़ अंजना सती, गिरी चरण में आन ।
पतिदेव का इस तरह, करन लगी गुण गान ॥

गाना नं० ४१ (अंजना)

मेरे तुम्ही इष्टदेव, दूसरा ना कोई । (स्थायी)
बिन पति पत लाज गई, सासु ससुर ने त्याग दई ।
कोटि विपत्ति नाथ सही, यह दुर्गति भई ॥१॥
दर्शन बिन नाहीं चैन, खोजत थके राह नैन ।
दीन दुखी करत बैन, रैन दिवस रोई ॥२॥
जब से पिया रूठ गये, कोटि प्रभु कष्ट सहे ।
गौरव गुण नष्ट भये, विपत बेल बोई ॥३॥
आवो पिया पधारो पिया, दर्शन दिखावो पिया ।
नेत्रों की ज्योत शुरू, वाट तकत खोई ॥४॥

दोहा

हनुमान के रूप को, देख मोहित नर नार ।
सभी लाल को प्रेम से, लेवे हाथ पसार ॥
उसी समय ले पिता पुत्र को, हृदय तुरत लगाया है ।
पुण्य सितारा देख कुमर का, पवन जय हर्षाया है ॥

स्वादिष्ट अचार सब सब मुरब्बे भी लाकर धारे।
पापड़ कई प्रकार के फिर सेवरु दाल परोसे ॥२॥
फल-फूल मेवा कई मिश्रित पक्का तैयार किया।
अरवी भिन्डी मटर कचनार केला तोरी घिया।
व्यंजन छत्तीस साग कस्तूरी भिगार साग।
जीमन समय साज बाज साथ गावें मंगल राग।
शोभन सभी फर्नीचर राजा का सरावें भाग।
भूपाल ने बड़ी उमंग से क्या कहूं जो माल परोसे ॥३॥
पीवें दूध मलाई जामें मिश्री दई है डाल।
जीम पकवान कर धोय के हुवे तैयार।
खाएँ मुख वासना सब शोभा को रहे निहार जी।
राजा जी का महल इन्द्र महल से अधिक मान।
क्यों कि दृढ़ धर्मी उपकारी अति पुण्यवान।
नृप राज ने सम्मुख आनके, फिर सब को माल परोसे ॥४॥

दौड़

क्षेम कुशल वर्ती वहां, सभी प्रसन्न महान्।
फिर वहां से प्रस्थान कर, पहुंचे निज स्थान ॥
आठ वर्ष का जब हुवा, हनुमान् सुकुमार।
गुरुकुल में पढ़ने लगे, विद्या ही गुण सार ॥
सोलह वर्ष पढ़ी विद्या, सब बहत्र कला का ज्ञान हुवा।
शस्त्र कला क्या शास्त्र वेत्ता, शूर वीर बलवान् हुवा ॥
वरुण भूप दश कन्धर का, फिर से युद्ध अपार हुवा।
आज्ञा पा दशकन्धर की, नृप पवन जय तैयार हुवा ॥

दोहा

पवन जय प्रति सूर्य, लगे युद्ध में जान।
सम्मुख आ हनुमान ने, करी चरण प्रणाम ॥

करी चरण प्रमाण, आपकी प्रेमाज्ञा पाऊं मैं।
स्वय विराजे सिहासन, सग्राम पिता जाऊं मैं॥
वरुण भूप को कुचल मना कर आन अभी आऊं मैं।
धरो पीठ पर हाथ मेरे, क्षत्री सुत कहलाऊं मैं॥
धमृ गा जब जा रण मे, मचे खल बल सब दल में।
क्षत्रिय का बच्चा हूं, देवो मुझे आशीश नहीं रण
के फन मे कच्चा हूं॥

दोहा

आज्ञा पा भूपाल की, चला वीर हनुमान।
सुग्रीवादि भूपति, मिले युद्ध मे आन॥
लगा घोर सग्राम होन फिर, दल बल का कोई पार नहीं।
नभ मे लड़े विमान और, चलते हैं अग्नि बाण कहीं॥
वरुण भूप के लडको ने, दशकन्धर नृप को बाध लिया।
जब लगे उठाने रावण को, हनुमान ने आकर रोक लिया॥
वरुण सुता पर डालकर, नाग फास का जाल।
दशकन्धर को हनुमान ने खोल दिया तत्काल॥
क्रोधातुर हो वरुण भूप ने, हनुमत को फिर घेर लिया।
लिये सहायता के रावण ने, निज दल आगे ठेल दिया॥
वज्र ग चढ़े जब तेजी से तो, सभी वरुण दल घबराया।
चिन्ह दिया झट सन्धि का, है समय समय की सब माया॥

दोहा

मान सभी मर्दन हुवा, अन्तिम मानी हार।
शर्तें रावण की सभी, करी वरुण स्वीकार॥
वरुण भूप की कन्यका, सत्यवती शुभ नाम।
परणाई हनुमान को, समझ वीर अभिराम॥

समकित धारो कर्म विडारो, मोह कर्म कर भंग।
समदम खम को धार हृदय में, तज सब रंग विरंग ।२।
काया माया बादल छाया, यह संसार भुजंग।
रागद्वेष क्या पाप अठारह, करें जीव को तंग ।३।
सत संगत से शुभ गति पावे, मनुष्य तिर्यंच विहंग।
धर्म या धर्मी बिना ना पाले, कोई किसी का अंग ।४।

दोहा (वज्रबाहु)

तुमभी क्या तैयार हो, लेने को यह भार।
इससे बढ़कर है नहीं, दुनियां में कोई सार॥

दोहा (उदय सुन्दर)

चार महाव्रत धार लो, मैं भी हूं तैयार।
देरी का क्या काम है, यही बात का सार॥

राजकुमर फिर मुनि पास से, संयम व्रत धारण लागा।
उदय सुन्दर यह देख हाल, फिर पीछे को भागन लागा॥
बोला यह बात हास्य की है, विवाह का जरा विचार करो।
रोवेगी बहिन मेरी पीछे, मुझ पर ना यह संताप धरो॥

दोहा (वज्रबाहु)

कुलवन्ती है यह सती, मन में फिकर ना धार।
वचन न तोड़े शूरमा, तोड़े मूढ़ गंवार॥

क्षत्रिय नहीं कहलाता है वह, जिसे वचन का पास नहीं।
है उसका यदि प्रेम धर्म से, होगी कभी उदास नहीं॥
जन्म मरण का अन्त नहीं, फिर सदा यहां किसने रहना है।
शुभ अवसर मिले ना बार-बार, बस यही हमारा कहना है॥

समकित धारो कर्म विडारो, मोह कर्म कर भंग।
समदम खम को धार हृदय में, तज सब रंग विरंग ।२।
काया माया बादल छाया, यह संसार भुजंग।
रागद्वेष क्या पाप अठारह, करें जीव को तंग ।३।
सत संगत से शुभ गति पावे, मनुष्य तिर्यंच विहंग।
धर्म या धर्मी बिना ना पाले, कोई किसी का अंग ।४।

दोहा (वज्रबाहु)

तुमभी क्या तैयार हो, लेने को यह भार।
इससे बढ़कर है नहीं, दुनियां में कोई सार ॥

दोहा (उदय सुन्दर)

चार महाव्रत धार लो, मैं भी हूं तैयार।
देरी का क्या काम है, यही बात का सार ।।

राजकुमर फिर मुनि पास से, संयम व्रत धारण लागा।
उदय सुन्दर यह देख हाल, फिर पीछे को भागन लागा ॥
बोला यह बात हास्य की है, विवाह का जरा विचार करो।
रोवेगी बहिन मेरी पीछे, मुझ पर ना यह संताप धरो ॥

दोहा (वज्रबाहु)

कुलवन्ती है यह सती, मन में फिकर ना धार।
वचन न तोड़े शूरमा, तोड़े मूढ़ गंवार ॥

क्षत्रिय नहीं कहलाता है वह, जिसे वचन का पास नहीं।
है उसका यदि प्रेम धर्म से, होगी कभी उदास नहीं ।।
जन्म मरण का अन्त नहीं, फिर सदा यहां किसने रहना है।
शुभ अवसर मिले ना बार-बार, बस यही हमारा कहना है ॥

चौपाई

जब घर नन्दन जन्मे आई । तब संयम लेना नृपराई ॥
जिसके पीछे नहीं सन्तान । उसका घर श्मशान समान ॥

दोहा

मन्त्री की यह बात सुन, लिया भूपमनमोड़ ।
बोला सुत होगा तभी, देवेंगे मोह तोड़ ॥
सहदेवी के पुत्र हुवा, नहीं भेद बताया रानी ने ।
पर ऐसी नहीं यह चीज, हमेशा छिपे कहीं राजधानी में ॥
लगा पता जब भूपति को, तो जन्म उत्साह किया भारी ।
सुत अपने को दिया राज, और आप बने संयम धारी ॥

दोहा

जिनवाणी हृदय धरी करते उग्र विहार ।
पुरी अयोध्या आ गये, विचरत वह अणगार ॥
सुना आगमन मुनि का, रानी मन दुख पाय ।
प्रथम राज को तज गया, अब ना सुत ले जाय ॥
अन्य फकीर बुलाये रानी, जटा जूट जकड धारी ।
दिनरात उड़ा उड़ता सुलफा, और बम बम शब्द रहे जारी ॥
फिर उनसे कहा यह रानी ने, यह साधु शहर बाहिर कर दो ।
यदि तंग करे तुमको कोई, तो मुझको शीघ्र खबर कर दो ॥

दोहा

अब तो फिर क्या ढील थी, चढ़े वह भंगड नाथ ।
नगर बाहर मुनि कर दिया, धक्कम धक्के साथ ॥
जब सुनी बात यह जनता ने, तो दिल में दुख हुवा भारी ।
यह दशा देख कर बावों ने, की रानी से आहों जारी ॥

दोहा

हुआ तैयार नृप जाने को, उसी समय मुनि पास।
विरक्त भाव मन में लगी, संयम की अभिलाष॥
चित्र जयमाला रानी ने, निज पति से विनय उचारी है।
राजवंश विन सुत के स्वामी, कैसे चले अगाड़ी है॥
जा पुत्र तेरे घर जन्मेगा, भूपाल ने ऐसा बतलाया।
राज तिलक देना उसको बस मेरे मन संयम भाया॥

दोहा

मन्त्री के सिर पर धरा, सभी राज का भार।
आप पिता के पास जा, संयम व्रत लिया धार॥
जब सुना मात सहदेवी ने, झट गिरी धरन मूर्छा खाकर।
वह आर्तध्यान के वशीभूत, मर बनी सिंहनी मुंझलाकर॥
सुकौशल और कीर्तिधर, मिल पिता पुत्र यह दोनों मुनि।
तप संयम में लीन हुए, शुभ शुक्ल ध्यान में लगी ध्वनि॥

दोहा

चातुर्मास के बाद फिर, कर दिया उग्र विहार।
आन मिली वह सिंहनी, मार्ग के मंझधार॥
मुनिवर बोले सुनो शिष्य, यह अनि परिसह आया है।
अब होने दो मुझ को आगे, तप संयम बहुत कमाया है॥
बोले शिष्य क्यों कायर बनूं मैं आपका शिष्य कहाता हूँ।
और करूँ तुम्हें दर कर आगे, इस बात से मैं शर्माता हूँ॥

गाना नं० ४६

तर्ज—(मैं सच्चा भक्त बन जाऊँ, प्रभु तेरा धर्म गुरु जन का)
मैं सच्चा भक्त बन जाऊं, गुरु त्यागी श्री जिनवर का। (ध्रुव)
परिसह मिलकर सारों आवें, सिंह या फनियर आके डरावें।

शास्त्र कला की थी ज्ञाता, पतिव्रता धर्म बजाती थी।
लिये पति के करूँ न्योछावर, प्राण तलक यह चाहती थी॥

दोहा

उत्तर दिशा भूपाल का लगा होन संग्राम।
दक्षिण आक्रमण किया, एक शत्रु ने आन॥

एक शत्रु ने आन तुरत, रानी ने करी चढ़ाई।
शत्रु को पराजय करके, अपने महलों मे आई॥
भूप नघुक ने जब रानी की, सभी बात सुन पाई।
देख वक्र व्यवहार, दुराचारण नृप ने ठहराई॥

दौड़

फौज कम नहीं हमारी, युद्ध में गई क्यों नारी।
बेइज्जती का कारण है, कहे नपुंसक हमको दुनिया,
रानी गई लड़न है॥

दोहा

कुछ विरुद्ध रहने लगा, रानी से महाराय।
भ्रम छेदने का रहो, रानी सोच उपाय॥
एक समय महाराज को, उत्पन्न हो गई दाह।
औषधि ना कोई लगे, दिल में दुख अथाह॥

रानी किया विचार भ्रम, राजा का दूर हटाऊं अभी।
निश्चल हो बीजाक्षरों से, किया नमोकार का जाप तभी॥
मैं पतिव्रता यदि पूर्ण हूँ, कोई अन्य पुरुष नहीं वांछा।
तो मम हाथ फेरने से, पति देव मेरा होवे अच्छा॥

दोहा

रानी ने यह बात कह, फेरमा नृप का अङ्ग।
रोग तुरन्त भागा सभी, गरुड़ से जिमे भुजंग॥

दोहा

समझाया मंत्रीश ने, नहीं माना भूपाल।
राज पुरुप प्रजा सभी, विगड़ गये तत्काल ॥
एक रंग होकर सबने, सीमा से बाहिर नृप राज किया।
सिंह रथ पुत्र जिसको, प्रजा ने मिल कर राज दिया ॥
दक्षिण दिशा सौदास गया, वहां मुनि मिला इक तप धारी।
करी चरण प्रणाम मुनि थे, ज्ञानी बाल ब्रह्मचारी ॥
(तर्ज—मैंने जान लिया है प्यारे रे झूठा है संसार)
संसार हिंडोला प्यारा रे फरमा गये अवतार ॥टेर॥
जो नर्क गति मे दुख है, तो पशु गति में क्या सुख है।
आनन्द सुर गति से विमुख है; नरतन में क्या है सार ॥१॥
यह चार गति का घर है चौरासी का चक्कर है।
सोलह कषाय दुक्कर है दुख में फिरता है संसार ॥२॥
हो दस प्रकार से अन्धा, कर्मों के वस में वन्दा।
यह काल अनादि फंदा रे, स्वप्ने का संसार ॥सं०॥३॥
कभी ऊंचा कर्म बनावे, कभी नीचे को पटकावे।
क्यों नहीं धर्म शुक्ल दो ध्यावे रे आतम का हितकार ॥४॥

चौपाई

दिया उपदेश मुनि हितकारी। मदिरा मांस पाप महा भारी ॥
यहां वेइज्जती परभव दुख कारी। नरकों में अति होय ख्वारी ॥
सुन परभव दुःख नृप घबराया। तब मुनिवर ने नियम कराया ॥
अशुभ कर्म के बने मुत्यागी। पुण्य दशा पूर्व की जागी ॥

दोहा

नगर महापुर से गये, वहां के जो मंत्रीश।
नृप हीन प्रजा सभी, चाहते थे कोई ईश ॥

इस अवसर्पणी काल में, सूर्य वंश महा प्रधान हुवा।
प्रत्येक भूप इस वंश का, अन्तिम संयम ले निर्वाण हुवा॥

दोहा

समय-समय पर प्रकृतियां, उदय और उपशान्त।
आत्म गुण में लीन हो करें सभी का अन्त।

(तर्ज—पाप का परिणाम प्राणी भोगते)

अपने सुत को जीत के, मैं क्या विजय वाला हुवा।
निज अंश का शत्रु बना, निज हाथ का पाला हुवा॥
देश धर्म समाज घर को, हानि पहुंचाते हैं जो।
ससार चक्कर मे रुले, इतिहास मुंह काला हुवा॥
गौर कर देखें तो अपने में ही पायेगी कसर।
किन्तु जड़ा अज्ञान से निज अक्ल के ताला हुवा॥
निज गुण सिवा मुझको शुरू, वैभव सभी खारा लगे।
है ज्ञान दर्श चारित्र में, कर्मों ने भंग डाला हुवा॥

दोहा

राज तिलक जिनको मिला, आगे उनके नाम।
अनुक्रम से सुनलो सभी, शूर वीर अभिराम॥
ब्रह्म रथ नृप चतुर्मुख, हेमरथ सत्य रथ।
उदय पृथु वारि शशि, आदित्य समर्थ॥
मान धाता समर्थ बली, वीरसेन शुभ नाम।
प्रत्युमन्यु अति शूरमा, पद्मबन्धु सुख धाम॥
रविमन्यु मन श्रेष्ठ है, वसन्ततिलक नरेश।
कुंवरदत्त कुंथु सर्म, द्विरद और विशेष॥
सिंह दर्श दिल पाक हरि, कसि पूंजी पुरराय।
पून्य स्थल प्रांदो शशि, और ककुत्स्थ रघुराय॥

रावण का भविष्य

दोहा

एक दिवस रावण-प्रभु बैठा, सभा मंझार।
ज्योतिषी से तब प्रश्नयूं, किया समय विचार॥

गाना नम्बर ४६

तर्ज—(पाप का परिणाम-।)

कौन है संसार में जो मेरी तुलना कर सके।
मैं हूँ ऐसा भी कोई कहने का जो दम भर सके॥१॥
नेत्र उठते ही मेरे त्रिलोकी थर थर कांपती।
प्राण त्यागे बिन मेरा हुंकार कोई जर सके॥२॥
सुर पति भी कांपते हैं—मनुष्य मात्र चीज क्या।
मेरे वैभव को न सब संसार मिल के हर सके॥३॥
तेरे ज्योतिष में कहो क्या दीखता है सो बता।
कौन योधा मेरे सनमुख, पांव आकर धर सके॥४॥
अष्टांग निमचक्र की शुक्ल परीक्षा ही करनी है मुझे।
वरना आगे सिंह के क्या हिरण तृणां चर सके॥५॥

दोहा

परदारा सम्बन्ध से, करे कोई मेरी घात।
सभी असम्भव सी लगे, सुनि कथन की बात॥
तीन खण्ड मे बतलावो, कोई है मुझको मारन वाला।
सुनते ही नाम मात्र मेरा, योद्धा पर छा जाता पाला॥
असुर भी आज कांपते हैं, फिर मनुष्य मात्र है चीज ही क्या।
मसल दिये सब ही कांटे, और सहस्र एक साथो विद्या॥

दोहा

दशरथ को और जनक को, परभव देऊ पहुंचाय।
उत्पत्ति होवे नहीं, बीज दग्ध हो जाय॥
नाश करूं दोनों का जाकर, भूठा इसे बनाऊगा।
सब देऊं खटका मेट भ्रात का, तभी अन्न जल पाऊंगा।
ये नारद जी वहां विद्यमान, सुन बात सभी मिथिला आये॥
और भाव विभीषण के नारद ने, जनक भूप को समझाये।
फेर अयोध्या में आकर के, दशरथ को समझाया है।
भयभीत हुआ वहां रघुवंशी, मिथिलेश वहां घबराया है॥
तब मन्त्री ने यह समझाया, तुम लिये यात्रा के जावो।
हम ठीक सभी कुछ कर लेंगे, पीछे का भय तुम मत खावो।

गाना नम्बर ५१

समय को देख के सब कार्य करना ही मुनासिब है।
धैर्य गंभीरता से, बात को जरना मुनासिब है॥१॥
जलवायु बदलने को, जनक और आप कहीं जावें।
भार मुझ ही जो कुछ है, सभी धरना मुनासिब है॥२॥
करूंगा जो भी कुछ मैं यह, तुम्हें भी कह नहीं सकता।
पंच परमेष्ठी का लेना, एक शरण मुनासिब है॥३॥
शुक्न ले शरण जिनवर का, गुप्त यहां से निकल जावो।
राजमोह भेप और सब कुछ, विसरना ही मुनासिब है॥४॥

दोहा

भेप बदल कर चल दिये, छोड़ राज घर द्वार।
पीछे मन्त्री ने किया, अद्भुत एक विचार॥
लेपमयी तस्वीर एक, दशरथ की मूर्ति बनाई है।
रंग आदि भर के सब ही, सिंहासन पर बैठाई है॥

कैकेयी स्वयम्वर

दोहा

फौतुक मंगल नगर में, शुभ मति है भूपाल।
पृथ्वी रानी की सुता कैकेयी रूप विशाल॥
द्रोणमेघ था पुत्र भूप के, शूर वीर अति बल धारी।
रचा स्वयम्वर लड़की का, आडम्बर बहुत किया भारी॥
बड़े बड़े भूपति आये, स्वागत की आर्ती तार रहे।
लगी खबर यह दशरथ को, मन में यों सोच विचार रहे॥

गाना नं० ५२

[तर्ज—जमाना तेरी कैसी बिगड़ गई चाल रे]

समय ने कैसा खाया है फेर कमाल रे॥ टेर॥
सूर्य वंशी हुवे जगत् में सब ही गौरवशाली॥
हाँ-हाँ, भाग्य हीन मैं आकर जन्मा गई वंश की लाली।
बड़ों की रीत ना पाली, समय की चाल निराली।
कैसा है हाल निढाल रे॥१॥
संमति भूप ने कैकेयी का स्वयंवरा मंडप रचवाया॥ हाँ-हाँ॥
आज पुण्य में कसर हमारे नौता तक ना आया हमीको एक भुलाया,
फेरिस्त में नाम ना आया, हृदय में शाले शाल रे॥२॥
गौरव हीनों का दुनियां में जीना ही मरना है॥ हाँ-हाँ॥
क्षत्रिय वीरों का तो दुनियां में रण भूमि शरणा है।
और फिर क्या करना है अवश्य एक दिन मरना है॥ हाँ-हाँ॥
रंक चाहे भूपाल रे॥३॥
धर्म देश के लिये शुम्ल कुर्बान सभी करना है॥ हाँ-हाँ॥
जायेंगे वहां अवश्यमेव अन्याय तोड़ धरना है

जब समय हुवा कर माला का, लाखों वरनारी साजे हैं।
शशि समान हुए दशरथ, बाकी तारोंवत् राजे हैं॥

दोहा

आरम्भ हुवा व्यवहार अब, बैठे चतुर सुजान।
अपने-अपने पुण्य की होने लगी पहिचान॥

गाना नं० ५३

तर्ज—(गम खाना चीज बड़ा है)

वह पुण्य राशि सज आई स्वयंवर में राजदुलारी (कुमारी) ।टेक।
सोलह सिंगार सहज अगमाई, सोलह ऊपर अधिक सुहाई,
आभा सी बिजली बन आई कान्ति छवि अपार है,
शशि वदना राजदुलारी ॥१॥
आज नहीं कोई इसके तोले, सोच सभी ने इष्ट टटोले,
मौन धार मन ही मन बोले, धन्य वही राजकुमार है, जिसकी
यह बने प्यारी ॥२॥
जादू की यह है वरमाला, स्त्री रत्न एक यह आल्हा,
पुण्यवान् वह कौन भुपाला, आकर्षण जिसमें सार है,
इस लक्ष्मी का अधिकारी ॥३॥
शुक्ल पुण्य से सब कुछ मिलता, धर्महीन नित्य हाथ ममलता।
सदा जमाना रंग बदलता, होता उसका उद्धार है,
जिन वाणी जिस दिल धारी ॥४॥

चौपाई

आई मंडप राजदुलारी, दासी संग सहेली सारी।
राजों के प्रतिबिम्ब दिखावे। धाय मात ऋद्धि बतलावे॥
सोलह शृंगार सहज अंग माही, सोलह ऊपर अधिक सुहाई।
देख रूप सब का मन मोहे, इन्द्राणी सम छवि अति सोहे॥

उसी समय रण भूमि में, सब जुटे शूरमा आ करके।
हो गये बहुत रण भेट वीर, कई गिरे मूर्छा खा करके॥

दोहा

दशरथ नृप का सारथी, गिरा धरन में जाय।
देख दृश्य यह कैकेयी, मन में कुछ घबराय॥

करी विनती रानी ने, महाराजा की आज्ञा चाहती हूँ।
सम्पूर्ण कला है ज्ञात मुझे, संग्रामी रथ चलाती हूँ॥
कृपा आपकी से देखो, मैं अपने हाथ दिखाती हूँ।
जीतो शत्रु दल को तुम, मैं विकट को हवा बनाती हूँ॥

दोहा

कवच पहिन रानी चढ़ी, और दशरथ कुंभार।
सहसा दल में मच गया, हूं हूं हा हा कार॥

पराजय होकर भागे शत्रु विजय हुई दशरथ नृप की।
खुशी हुआ बोला नृप रानी, मांगो जो मरजी मन की॥
जो कुछ मागोगी सो दूंगा, क्षत्री मैं कहलाता हूं।
आपकी देख वीरता को मैं, फूला नहीं समाता हूं॥

दोहा

रानी तब कहने लगी, वर रक्खो भण्डार।
लेऊंगी प्रभु आप से जब होगी दरकार॥

प्रेम भाव से दशरथ नृप को, शुभमति भूपने विदा किया।
शूरवीर जामात समझ, दिल खोल द्रव्य और मान दिया॥
मिथलेश गया मिथला नगरी, सब तरह मित्र का साथ दिया।
राजगृही नगरी में जाकर, दशरथ नृप ने वास किया॥

गाना नं० ५४

(तर्ज—कुछ नीर पिलादे)

कहो प्राणनाथ क्या स्वप्न मुझे सुखकार है,
दुखहार है, गुलजार है ॥ टेर ॥
सच प्राणप्रिये यह स्वप्न दायक सुखदान है,
गुणवान है पुण्यवान है (ठे० रा०)
तो पुण्य उदय शोभन है।
(भू०) बिल्कुल है सही,
(रा०) क्या पुण्यवान् नन्दन है।
(भू०) जन्मेगा यही
(रा०) तो क्या करना मुझको चाहिये,
भाषो जो जो हितकार है ॥१॥ कहो

(भू०) नित्य आत्म ध्यान लगाओ,
(रा०) सत्य पति देव !
(भू०) दुखियों को सुखी बनाओ, जीतहमेव।
दान, शील, तप, शुद्ध भावना से सब का कल्याण है
॥२॥ कहो ॥

मुझे नित्य काम क्या करना (भू०) व्याख्यान सुनो
(रा०) सुखकारी क्या है शरणा।
(भू०) प्रभु नाम गुणो
(रा०) तो समझ लिया मैंने आकर कोई जन्मेगा अवतार है
॥ ३ ॥ कहो ॥

(भू०) सर्वज्ञ शास्त्र नित्य पढ़ना
(रा०) शुद्ध ज्ञान यही।
(भू०) सद्गुण चाहिये नित्य चढ़ना

दोहा

छठे सरोवर में कमल, खिले हुए शुभ रङ्ग ।
रानी को ऐसा मिला, स्वप्ने में प्रसंग ॥
भरा समुद्र देख सातवें, रानी मन हर्षाई है ।
निश्चय कर फिर पति पास, जा सारी बात सुनाई है ॥
सुनते ही राजा के मन में, खुशी का ना कोई पार रहा ।
फल विचार स्वप्नों का नृप ने, रानी को सब हाल कहा ॥

दोहा

रानी सुत होगा तेरे, प्रबल सिंह समान ।
तेज प्रताप सम रवि के, फैले पुण्य महान् ॥
शुभ पुण्य अहो रानी जिसका, सागर मानिन्द लहरायेगा ।
आधीन करे सब दुनिया को, अति शूर वीर कहलायेगा ॥
निर्भय सिंह हस्तियों में, ऐसे यह दरजा पावेगा ।
जब उतरेगा रण भूमि में, सन्नाटा सा छा जावेगा ॥

दोहा

यथा योग्य नित्य पथ्य से, रही गर्भ को पाल ।
मास सवा नौ में हुवा, आन अनुपम लाल ॥
देवलोक से चलकर आया, पुण्यवान योद्धा भारी ।
राज कुमार का रूप देख कर, प्रेम करें सब नरनारी ॥
नारायण शुभ नाम दिया, प्रसिद्ध महा अति सुखकारी ।
उत्सव का कुछ पार नहीं, दशरथ नृप दान किया भारी ॥

दोहा

बहत्तर कला प्रवीण थे, दोनों राज कुमार ।
शूरवीर योद्धा अति, देख खुशी नर नार ॥

दोहा

छठे सरोवर में कमल, खिले हुए शुभ रङ्ग ।
रानी को ऐसा मिला, स्वप्ने में प्रसंग ॥
भरा समुद्र देख सातवें, रानी मन हर्षाई है ।
निश्चय कर फिर पति पास, जा सारी बात सुनाई है ॥
सुनते ही राजा के मन में, खुशी का ना कोई पार रहा ।
फल विचार स्वप्नों का नृप ने, रानी को सब हाल कहा ॥

दोहा

रानी सुत होगा तेरे, प्रबल सिंह समान ।
तेज प्रताप सम रवि के, फैले पुण्य महान् ॥
शुभ पुण्य अहो रानी जिसका, सागर मानिन्द लहरायेगा ।
आधीन करे सब दुनिया को, अति शूर वीर कहलायेगा ॥
निर्भय सिंह हस्तियों में, ऐसे यह दरजा पावेगा ।
जब उतरेगा रण भूमि में, सन्नाटा सा छा जावेगा ॥

दोहा

यथा योग्य नित्य पथ्य से, रहो गर्भ को पाल ।
मास सवा नौ में हुवा, आन अनुपम लाल ॥
देवलोक से चलकर आया, पुण्यवान योद्धा भारी ।
राज कुमार का रूप देख कर, प्रेम करें सब नरनारी ॥
नारायण शुभ नाम दिया, प्रसिद्ध महा अति सुखकारी ।
प्रसव का सुख पार नहीं, दशरथ नृप दान किया भारी ॥

दोहा

बहत्तर कला प्रवीण थे, दोनों राज कुमार ।
शूरवीर योद्धा अति, देख खुशी नर नार ॥

भरत शत्रुघ्न की जोड़ी, थे अतुल बली योधा भारी।
तेज प्रताप प्रचण्ड अति, महा वृद्धि होने लगी सारी॥
ग्रीष्म अन्त जैसे श्रावण, या जैसे मेला जंगल में।
शुभ शुक्ल समाज मिला ऐसे, सुख जैसे सुर नन्दन वन में॥
यह पहिला अधिकार हुवा, दशरथ राजा सुख पाया है।
तेल बिन्दु सम गयाफैल, जगी सामान बनाया है।

तर्ज—(कौन कहता है कि जालिम को)

सर्व सिद्धि के लिये ब्रह्मचर्य ही प्रधान है,
सत्य भाषण दूसरा, निर्वद्ध मेंढ़ी समान है॥१॥

समभाव और एकाग्रता, निज लक्ष में तल्लीन हो।
निर्भीक निरभिमान हो और साधन सभी का ज्ञान हो॥२॥
सेवा भक्ति और विनय से योग्य गुरु की हो कृपा,
एकान्त सेवी मौन ग्राही अटल श्रद्धावान् है॥३॥
कार्याकार्य विचारक और भाव ऊंचे हों सदा,
गुरु शास्त्र धर्म देव संगसेवा में जिसका ध्यान है॥४॥
दान जप तप भावना शुभ पुण्य का संचय भी हो,
शुक्ल साधन धर्म ध्यानी, शुद्ध खान व पान हो॥५॥
जैसी जिसकी भावना, सिद्धि भी तदनुसार है,
मंत्र का नम्बर बदलने का भी जिसको भान है॥६॥

॥ इति प्रथमो भागः समाप्तः ॥

यह कर्म बड़े बलवान् जीव को, खुशी में दुःख दिखलाते हैं।
करते प्राणी नेत्र बन्द कर, फिर पीछे पछताते हैं॥
अब सुनो हाल भामण्डल का, जिसने आकर के जन्म लिया।
होगया विरह बचपन से ही, नहीं मात तात अन्न पान किया॥

दोहा

जम्बू द्वीप भरत क्षेत्र में, दारुण नामक ग्राम।
अनुकोशा का है पति, द्विज वसुभूति नाम॥
अनुभूति है नाम पुत्र का, वधू सरसा सुखदायी है।
कयान विप्र ने मोहित होकर, सरसा स्वयं चुराई है॥
ढूंढ़न को पतिदेव गया, नहीं पता कहीं पर पाया है।
पीछे मोह वश गई मात, और संग पिता उठ धाया है॥

दोहा

जात याम की फिर मिले, मिले लाल दुख्वार।
पुत्र के मोह में फिरें, दोनों होवे ख्वार॥
मार्ग में निग्रन्थ मिले जिन, दुःख नाशक उपदेश दिया।
मोह कर्म सिर डाल धूल, दोनों ने संयम भेष लिया॥
पहिले स्वर्ग पहुँचे जाकर, सुरपुर के सुख भोगे भारी।
आ जन्म लिया वैताढगिरी, फिर भी हुए दोनों नरनारी॥

कड़ा

प्यारे जी चन्द्रगति भूपाल नाम विद्याधर भारी।
पुष्पावती अभिराम, नाम सुन्दर वसु नारी॥

दोहा

सरसा नजर बचाय के, भागी अवसर देख।
संयम का शरणा लिया, अविचल रखे टेक॥

दूसरे स्वर्ग पहुँची जाकर, अनुभूति विरह में भटका है ।
अनमोल मनुष्य तन खो बैठा, भव चक्र गर्भ में लटका है ॥
हुआ हंस बालक जाकर, हस्ती ने ग्रहण कर फेंक दिया ।
जा पड़ा मुनि के चरणों में, नमोकार मन्त्र का शरण दिया ॥

चौपाई

देवलोक में पहुँचा जाई । वर्ष सहस्र दश आयु पाई ॥
जाव कुसंगति से दुःख पावे । शुभ संगति से सुख मिल जावे ॥

दोहा

विदग्ध नामक नगर में, प्रकाशसिंह महाराय ।
रेवती नामक नार के, पुत्र जन्मा आय ॥
कुण्डल मण्डित नाम पुत्र का, सुन्दर जिसकी काया है ।
अब सुनो हाल कथान विप्र का, जन्म जहाँ आ पाया है ॥
चक्रध्वज राजा चक्रपुरी का, धूमसेन पुरोहित जिसका ।
स्वाहा रमणी है विप्राणी, पिंगल सुत कथान हुआ तिसका ॥

दोहा

करती थी नृप कन्यका, विद्या का अभ्यास ।
पिंगल अति मोहित हुआ, देख रूप प्रकाश ॥
समय देख अपहरण करी जा, विदग्ध नगर निवास किया ।
इस काम बाण ने बडो-बडो का, अन्त में समझो नाश किया ॥
विदग्ध नगर के नरनारी, इस रूप पे आश्चर्य करते थे ।
कई वशीभूत होकर मोह में कुछ के कुछ शब्द उचरते थे ॥
कुण्डल मण्डित कुमर हाल सुन, घोड़े पर चढ़ आया है ।
देख रूप उस राजदुलारी, का मन अति हर्षाया है ॥
चारित्र मोहिनी उदय हुआ, सद्ज्ञान हृदय से दूर हुआ ।
उस रूप की महिमा गाने लगा, जब राजकुंवर मजबूर हुआ ॥

दोहा

अतुल्य पुण्य इसने किया, मिला जो अद्भुत रूप।
किन्तु पति इसको मिला, अनपढ़ और कुरूप॥
अनपढ़ और कुरूप, यह किसने लाल गधे गल डाला।
सांचे जैसा ढाला जिस्म है, अद्भुत रूप निराला॥
इस कौवे गल नहीं शोभती, यह रत्नों की माला।
लूं छीन इसे तो पिता मेरा, यहाँ का न्यायी भूपाला॥

दौड़

दिला वापिस ही देगा, मेरा नहीं पक्ष करेगा।
यही अब ढग रचाऊँ, ले पर्वत पर चढ़ूँ दूर जाकर
कहीं वास बनाऊँ॥

दोहा

जो कुछ आया हाथ में लेकर के सामान।
दोनों वहाँ से चल दिये, नगर में किया मुकाम॥
पीछे पिंगल फिरे भटकता, विरह ने आन सताया है।
हार गया सिर पीट पीट, अन्तिम संयम चित्त लाया है॥
सुधर्म देवलोक में पहुंचा, विराधक सुर पदवी पाई है।
कुंडल मंडित ने यहां दशरथ के, राज्य में धूम मचाई है॥
डाके और चोरी छल से, प्रजा को लगे सताने को।
इस तरह आसुरी वृत्ति से, लगा अपना समय बिताने को॥
बालचन्द्र दिया भेज भूप, दशरथ ने उसे पकड़ने को।
जा घेरा डाला सेनापति ने, डाकू चोर जकड़ने को॥
कुंडल मंडित को फुर्ती से विषम स्थान में रोक लिया।
निज शक्ति और चातुर्य से, पकड़ बंधन में ठोक दिया॥

नियत समय पर कोतवाल, दशरथ के सन्मुख लाया है।
भूपाल ने रहस्य समझ कुंडल मंडित को यों समझाया है॥

दोहा (दशरथ)

विषय वासना जगत में, शत्रु महा कठोर।
अशुभ कर्म से बन गया, राजकुमर से चोर॥
शिक्षाप्रद वचन हमारे हैं, मन से अब आर्ति ध्यान तजो।
इस दुष्ट विलासिता को तज कर मनुष्य बनो जिन राजभजो॥
क्षमा सभी अपराध किया, तुमसे न द्वेष हमारा है।
पहिचानो अपने गौरव को, इसमें ही भला तुम्हारा है॥

दोहा

शिक्षा देकर इस तरह, मन रिपुता से मोड़।
कुंडल मंडित को दिया, दशरथ नृप ने छोड़॥
उपकार मान नृप का, चला पहुंचा निज स्थान।
कुंडल मंडित को रहे, नित्य प्रति आर्तध्यान॥

छन्द

राज का रहे ख्याल निशदिन, शोच अति मन मे करे।
ताज पाऊँ राज का, मेरा पिता जल्दी मरे॥
अविनीत पन का ताज अब तो, सिर मेरे रक्खा गया।
स दिन मे आया भाग, अरु कुव्यसन यह चक्खा गया॥
मम बुद्धि पर परदा पड़ा और सोच सब मारी गई।
अब राज की भी हाय कुंजी, हाथ से सारी गई॥
रहता पिता के पास और गुप्त रखता काम यह।
स्वामी बना रहता हमेशा, क्यो बिगड़ता काम यह॥

दोहा

इतने में आया नजर, मुनिचन्द्र ऋषि राय।
कुमार जाय वंदना करी, चरणन शीश नवाय॥
जो भी मन की बात थी, सभी दई बतलाय।
सुनकर के मुनि ने दई, कर्म गति दर्शाय॥

छन्द

बोले मुनि हे कुमर तू, कुछ धर्म चित्त लाया नहीं।
खेद अति है भय जरा, परभव का भी खाया नहीं॥
प्रत्यक्ष तुझ को कुव्यसन का फल तो यहां कुछ मिल गया।
जो था सितारा पुण्य का, वह सब किनारा कर गया॥
अब और जो कर्तव्य तेरा, नरक का परिणाम है।
घात चिंते भूप की, यह दुष्ट तेरा ध्यान है॥
देऊँ तुझे शिक्षा समझ, तन मन से रखना पास यह।
दोनों भवों में लाभदायक, छोड़ती नहीं साथ यह॥
धर ध्यान श्री अरिहन्त का, अन्त. करण निग्रह करो।
द्वादश नियम कर गृहस्थ के, गुण ग्रहण में दृष्टि धरो॥

दोहा

सागारी व्रत मुनि से, लिये कुमर ने धार।
किन्तु इच्छा राज की, रहती मन मंझार॥
इसी विचार में मरा अन्त, आ जनक भूप के जन्म लिया।
सरसा ब्राह्मण की पुत्री, बन फिर तप संयम में ध्यान दिया॥
पहुंची ब्रह्म लोक+ जाकर वहां दीर्घ काल आराम किया।
सुर आयु भोग विदेही, रानी के सीता अवतार लिया॥

+ पाचवे देवलोक

भामंडल का अपहरण

दोहा

पिंगल का जो जीव था, पहिले स्वर्ग मंझार।
अवधिज्ञान से एक दिन, देखा दृष्टि पसार ॥
देखा दृष्टि पसार देव के, क्रोध वदन में छाया।
पूर्व वैरी समझ आन, भामण्डल तुरन्त उठाया ॥
देऊं इसको मार, देव के मन में यही समाया।
राजकुमार का पुण्य प्रबल, यों असुर सोच मन लाया ॥

छन्द

मारूं यदि इस बाल को, महापाप लगता है मुझे।
छोडूं यदि जीता इसे, यह भी नहीं जचता मुझे ॥
बाल हत्या है बुरी, रुलता फिरूं संसार में।
कौन सा अब ढग करूं, जिससे लेऊं निज स्वार* में ॥
रक्खूं गिरी वैताढ्य पर, वहाँ से न कोई लायगा।
खा जायगा कोई श्वापद६, या स्वयं मर जायगा ॥

चन्द्रगति विद्याधर का भामण्डल को उठाना

दोहा

देव वहां से चल दिया, रख शिला पर लाल।
उधर भ्रमण को आ गया, रथनुपुर भूपाल ॥
चन्द्रगति रानी समेत, विमान बैठ कर आया है।
जब देखा बच्चा पर्वत पर, राजा मन में हर्षाया है ॥
लिया उठा कर कमलों में, तो खुशी का न कोई पार रहा।
दे दिया गोद में रानी के, घड़ियों तक देता प्यार रहा ॥

---

* वैर ६हिंसक पशु अवशा

दोहा (कवि)

दासियां घबराई हुई, पहुंची रानी पास।
दुःखदाई वाणी सभी, बोली ऐसे भाष॥

दोहा (दासी)

आश्चर्य हुआ रानी महा, कहें किस तरह बात।
लुप्त हो गया सामने, तव सुत नहीं दिखात॥

गाना नं० १ (बह्र तवील)

(दासियों का रानी से कहना)

अए रानी सभी यह प्रत्यक्ष हैं,
इस हिन्डोले में छौना तुम्हारा पड़ा।
दृष्टि डाली तो यहां पर नहीं लाड़ला,
जिससे धड़क कलेजा हमारा पड़ा।
क्या गगन में गया या धरण में धंसा,
हमें इस भवन में नजर न पड़ा।
कोई आता या जाता न दीखा हमें,
देखो रानी चहुं ओर पहरा खड़ा।

दोहा

हृदय विदारक जब सुने, महारानी ने बैन।
पुत्र विरहिनी माव फिर लगी इस तरह कहन॥

गाना न० २ (बह्र तवील)

(विदेही का विलाप)

आज अपना यह दुःख मैं कहूं किस तरह,
मेरे दिल को तसल्ली है आती नहीं।

दोहा

छान बीन कर सब तरह, देख लिये सब धाम ।
अन्त निराशा भूप ने, आ समझाई† वाम ॥
बोले अए रानी! आज देव, कारण ही नजर आता है।
पूर्व रिपु ले गया असुर कोई, पता नहीं पाता है ॥
समझ नहीं जन्मा पुत्र, बस यही देव‡ चाहता है।
कर्मों के अनुसार प्रिया सब, सुख दुःख मिल जाता है ॥

दौड़

मोह को दूर भगाओ, ध्यान श्री जिन चित्त लाओ।
कर्म गति के हैं चाले, देख देख मुख पुत्री का बस
रानी मन बहला ले ॥

दोहा

पुत्री का मुख देखताँ, शीतल तन मन जान ।
माता पिता ने रख दिया, सीता जिसका नाम ॥
चन्द्रकला सम बढ़ रही, चौसठ कला निधान ।
रूप कला और गुण सभी, शील रत्न की खान ॥

दोहा

सीता जैसा जगत् में नहीं किसी का रूप ।
जहाँ तहाँ भेजे देखने, वर कारण नर भूप ॥
देखे राजकुमार बहुत, वर मिला नहीं कोई शानी का ।
कोई मिले बराबर गुणवाला, था यही ख्याल महारानी का ॥
समरूप अद्वितीय गुणधारी, किसी राजकुमार को चाहते थे ।
अति पुरुषार्थ करने पर भी, सन्तोष जनक नहीं पाते थे ॥

---

†स्त्री ‡भाग्य

जब कार्य बनने वाला हो तो कारण कोई बन जाता है।
और यथा कर्म अनुसार वही, ताना बन कर तन जाता है॥
था अर्ध बर्बर देश विकट, 'अतरंग' नाम म्लेच्छ बड़ा।
प्रान्त लूटता जनक भूप का, नित्य प्रति होने लगा झगड़ा।

दोहा

शक्ति देख 'अतरङ्ग' की, जनक गया घबराय।
खबर अवध मे मित्र को तुरन्त दई पहुंचाय॥
दई तुरन्त पहुचाय, दूत ले पता अयोध्या आया।
नमस्कार कही जनक भूप की, अपना शीश निमाया॥
जो था कारण आने का, दशरथ नृप को समझाया।
बना सहायक आप मित्र के जल्दी तुम्हें बुलाया॥

दौड़

कष्ट जो सिर पर आवे, मित्र बिन कौन हटावे।
दूत से दशरथ बोला, चला अभी जाकरूं खातम क्या है डाकुओ का टोला॥

दोहा

कवच पहिन शस्त्र लिये, हो झटपट तय्यार।
उसी समय कर जोड यो बोले *पद्म कुमार॥

दोहा (रामचन्द्र जी)

आप विराजो यहीं पर, दो मुझको आदेश।
जाकर आपके मित्र का, टालू सकल क्लेश॥
टालू सकल क्लेश, दुबारा ले भुज पद्म जिधर को।
निर्भय होकर देवो आज्ञा, प्यारे शेर बबर को॥

---

*राम

पुत्र लायक होंय जिन्होंके, पिता क्यों जाय समर को।
शक्ति हीन अविनीत हो तो, जीना किस अर्थ कुमर को ॥

दौड़

अभी रण क्षेत्र जाऊं, पकड़ अतरङ्ग को लाऊं।
शीश पर हाथ चढ़ाओ, निश्चिन्त होकर पिता अयोध्या
में आनन्द उड़ाओ ॥

दोहा

आज्ञा दी भूपाल ने, मन में खुशी अपार।
सेना ले कुछ संग में, चले राम बलधार ॥

शत्रु संग जा संग्राम किया, म्लेछ समर में खाक हुए।
अतरंग म्लेच्छ का तेज व गौरव, राम के आगे राख हुए ॥
जब धनुष बाण टंकार किया तो मानो बिजली आन पड़ी।
भगी फौज सब अतरंग की, दुख करके आर्त ध्यान खड़ी ॥

दोहा

विजय हुई श्री राम की, टल गया जनक क्लेश।
प्रसन्न चित्त हो राम की, सेवा करी विशेष ॥

श्री राम का पराक्रम देख जनक, निज रानी को समझाने लगा।
सुन आज विदेहा पुण्य तेरा, मन चाहा मानो आन जगा ॥
श्री रामचन्द्र की समता का, संसार में कोई शूर नहीं।
सब गुण धारक अति सुख दायक, फिर पुरी अयोध्या दूर नहीं॥

दोहा

करी सगाई पुत्री की रामचन्द्र के साथ।
मिथिला वासी हर्ष से, सभी झुकावें माथ ॥

गाना नं० ३

मच रही अवध में धूम, खुशियां घर घर में। टेर।
हिल मिल नारी गावें राग हैं, धन्य तुम्हारे आज भाग हैं।
धन्य अयोध्या भूप, खुशियां घर घर में ॥ १ ॥
गाना गाने आई अप्सरा, नक्काल और आ गये मसखरा।
तननतान तन धम, खुशियां घर घर में ॥२॥
राज्य अधिकारी देत इशारा, अब क्या देरी बजे नकारा।
और वाजिन्त्र अनूप, खुशियां घर घर में ॥३॥
बज रही नौबत खुशी के बाजे, खुशी होये सब मित्र राजे।
ऐसा बधा स्वरूप, खुशियां घर घर में ॥४॥

दोहा

अद्‌भुत है सब ने सुना, जनक सुता का रूप।
देखन आते चाव से, कइ तन पुण्य अनूप ॥
पुरी अयोध्या में सुनी नारद महिमा रूप।
किन्तु मन में जचा नहीं, मुनि के सत्य स्वरूप ॥

(नारद स्वगत विचार)

नारद ने सोचा रामसे बढ़कर, सीता रूप नहीं पास कती।
मेरा विचार तो ऐसा है, वह राम के मन नहीं भा सक्ती ॥
ऐसा न हो कि बिना खबर, कहीं विवाह अचानक आन पड़े।
और देख कुरूप राम को फिर, करना न आर्तध्यान पड़े ॥

दोहा (नारद)

मिथला नगरी जाय कर, देखूं सीता अंग।
यदि तुल्य जोड़ी हुई, तभी विवाह का ढङ्ग ॥
तभी विवाह का ढङ्ग बने, नहीं विघ्न डाल कोई दूंगा।
यदि कोई ना समझे तो मैं बुरा स्वयं बन लूंगा ॥

बोले नये सेवक पकड़ो, यह भूत भाग न जाय कहीं।
काला मुंह इसका करके, दो चार लात दो ठोक यहीं॥

छन्द

कोलाहल भृत्यों का बढ़ा, सब महल गुंजार हुआ।
शीघ्र ही अन्तःपुर पति, जांच को प्रस्तुत हुआ॥
आया है घटना स्थान पर, देखे तो क्या नारद मुनि।
भय मान सब पीछे हटे, नीची करी सब ने ध्वनि॥
कहने लगे सोचे बिना, आफत यह छेड़ी है तुम्हें।
ऐसा न हो महा कष्ट कहीं, जाकर के दिखला दें हमें॥
बाल ब्रह्मचारी महा गुणी, नारद मुनि शुभ नाम है।
तोड़ा फोड़ी कर तमाशा, देखना यह काम है॥
रणवास आदि सब जगह, नहीं रोक इनको है कहीं।
भाई भले के सर्वदा, बद से बदी छोड़ें नहीं॥

दोहा

नारद मन में सोचता किया, मेरा अपमान।
इसका फल दूंगा इन्हें, सोचा लाकर ध्यान॥

चित्र खींचकर सीता का, अब जल्द वहां से धाये हैं।
वैताड़ गिरी 'रथनुपुर' जा, नारद ने जाल बिछाये हैं॥
जब नजर पड़ी भामण्डल पर, नारद को आश्चर्य आया है।
सीता की मानिन्द इस पर भी, क्या रूप रंग अति छाया है॥
भामण्डल ने देख मुनि, नारद को, शीश नमाया है।
आशीर्वाद पा राजकुंवर ने, ऐसे वचन सुनाया है॥
कहो मुनि महाराज किधर से, आकर दर्श दिखाये हैं।
सब तरह कहो शान्ति तो है, और कहां घूम कर आये हैं॥

हम सेवकों पर भी कृपा, दृष्टि जरा रक्खा करें।
क्या ? आपके दिल में भी कोई, अपना बिगाना होगया ॥ ७ ॥
भक्ति भाव से नारद को, सिंहासन पर बैठाया है।
वृत्तान्त पूछने पर नृप को, मुनि ने कुछ भाप सुनाया है ॥
कहें भूप यहाँ कुछ दिन ठहरें, अब बहुत देर से आये हैं।
क्या दोष हमारा बतलाइये, अब तक नहीं दर्श दिखाये हैं ॥

दोहा

आया था जिस काम को, मन में वही उचाट।
उधर महल में देखता, राजकुंवर भी बाट ॥
उसी समय नारद मुनि, भामंडल पे जाय।
फोटो सीता का तुरत, दिया मुनि दिखलाय ॥
असर नहीं कुछ कुंवर को, हुवा समझ कर फोक।
गुण वर्णन कर मुनि ने, दिये मसाले ठोक ॥

नारद का भामण्डल से कहना

गाना नं० ५

तर्ज—कव्वाली

जबां से कह नहीं सकता कि वह, जैसी दुलारी है।
मिले जोड़ी तेरे संग तो, खुले किस्मत तुम्हारी है ॥
रूप पुरनूर है रोशन, शर्म खाती है इन्द्राणी।
हूबहू क्या कहूं सूरत, चाँद की सी उजारी है ॥
समझ भानु की मूरत है, ढली मानो है साँचे में।
मुल्क सब छान कर देखा, नहीं सदृश निहारी है ॥
है चालि हंस के मानिन्द, कला चौसठ सभी पूर्ण।
है मानिन्द मोर की गर्दन के नयनों की कटारी है ॥

दोहा

नेत्रों को मलते हुये, उठे मुनि अंग तोड़ ।
क्षम बना मन में खुशी, यों बोले मुख मोड़ ॥

दोहा (नारद)

मिथिला नगरी है भली, जनक तहाँ भूपाल ।
विदेहा के पैदा हुई, सीता रूप रसाल ॥
क्या करूँ भूप मैं गुण वर्णन, बस भामंडल के लायक है ।
नल कुंवरी सम रूप सिया का, जोड़ी अति सुखदायक है ॥
अब हम महलों में जाकर, कुछ खाना खाकर आते हैं ।
और मन करता है चलने को, फिर पुरी अयोध्या जाते हैं ॥

सीता स्वयम्वर

दोहा

घोकर बीज महा क्लेश का, उड़ गये आप आकाश ।
पुत्र को समझाय कर, दिया भूप विश्वास ॥
चपल गति विद्याधर से, नृप बोले तुम मिथिला जाओ ।
श्री जनक भूप को रात्रि समय, निद्रागत यहाँ उठा लाओ ॥
आज्ञा पाकर जनक भूप को, रात समय ले आया है ।
चन्द्रगति के पास महल में, लाकर तुरत सुलाया है ॥

दोहा

खुली आँख जब जनक की, विस्मित हुआ अपार ।
देख देख चारों तरफ, करने लगा विचार ॥

उस गीदड़ की धमकी से, मैं जरा न भय खाऊंगा।
रखता हूं व्यवहार नहीं, तब सुता उठा लाऊंगा॥
देखूंगा बल दशरथ का, जब सुत ब्याहने आऊंगा।
मानिन्द गरुड़ के भूचर नृप, सर्पों पर छा जाऊंगा॥

दौड़

दिखा शक्ति दशरथ की, देख मेरे भुजबल की।
सोच करले निज दिल से, सीता का जो विवाह होगा
तो होगा भामंडल से॥

दोहा (जनक)

बुद्धिमानी आप की, देख लई भूपाल।
खाली बादल की तरह, बजा रहे हो गाल।
क्या योधापन दर्शाया है, चोरी से उठाकर लायेंगे।
कभी बतलाते हैं दशरथ को, अपनी शक्ति दिखलायेंगे॥
बार बार क्या दुनियां सब, चोरों का धोखा खाती है।
कोई शक्ति और बुद्धिमानी की, बात नजर नहीं आती है।

दोहा

तेजी आई भूप को, किन्तु जरी तमाम।
सोचा ढग यही करें, बने जिस तरह मे काम॥

चन्द्रगतिः—

बिगड़ जायेगा बातों में, क्यों कि क्षत्रय कहलाता है।
कर चुका सगाई लड़की की, नरमाई से समझाता है॥
कार्य से है मतलब मेरा, कोई खेल द्वम से चाला है।
देवाधिष्ठित धनुष हैं दो, यही उपाय एक आला है॥

यहां भवन में बैठे जनक भूप, मन में कुछ आर्ति भारी है।
यह हाल देखकर भूपति का, रानी ने गिरा उचारी है॥

दोहा

सोये थे आनंद से, अब हो गये उदास।
किस कारण पति ले रहे, लम्बे लम्बे श्वांस॥

छन्द (जनक)

क्या कहूं रानी तुझे, बस कुछ कहा जाता नहीं।
अशुभ कर्म प्रकट हुये, यह दुःख सहा जाता नहीं॥
खेचर उठाकर रात, रथनुपुर था मुझको ले गया।
चन्द्रगति भूपाल ने, यूं पास आ रुकके कहा॥
सीता को भामंडल से परणो, सब कहा समझाय कर।
नहीं तो तेरी तरह सिया को, भी मैं लाऊं उठाय कर॥
अन्तिम स्वयंम्वर फैसला, कर धनुष दो लाकर धरे।
मिथिला पुरी के बाहिर, आकर भूप ने डेरे करे॥

दोहा

सुनी अरुचिकर कभी, जनक भूप से बात।
रानी के दिल पर हुआ, भीषण वज्राघात॥

दोहा (रानी)

कर्म सबर तुझको नहीं, लेकर पुत्र प्रधान।
लेनी चाहे पुत्री का, बचे किस तरह प्राण॥
स्वेच्छा से व्याहे सुता, होवा हर्ष अपार।
बिन इच्छा लेवे कोई, दारुण दुःख अपार॥

(रानी)

रामचन्द्र से धनुष यदि, नहीं कहीं चढ़ाया जावेगा।
तो विद्याधर वैताड़ गिरी पर, सिया को व्याह ले जावेगा॥

जनक भूप उठकर बोले, जो क्षत्रिय धनुप उठायेगा।
शूरवीर रणधीर आज, वो ही वर माला को पायेगा॥

दोहा

सुनकर वाणी जनक की, उठे भूप बलवान्।
कंपाते हुए धरण को, मन में भर अभिमान॥

बोले ये धनुप तो चीज है क्या, हम वज्र इंद्र का तोड़ धरें।
और मार गदा हम मेरु गिरि के, शिखर सभी हैं गर्द करें॥
तीर मारकर भूमि में, असुरों के भवन सब चूर करें।
मारें ऐसा अग्नि वाण हम, शशि कला को भस्म करें॥
शत खण्ड करें एक हाथ से, जैसे खांड पताशा है।
फिर उसे चढ़ाना चिल्ले पर, साधारण खेल तमाशा है॥
हम वीर बहादुर अतुल बली, किस गिनती में इन को लाते हैं।
अभी चढ़ाकर प्रत्यंचा पर, जनक सुता को व्याहते हैं॥

दोहा

बैठे हुए सब इस तरह, बजा रहे थे गाल।
तड़क भड़क कर के उठे, अभिमानी भूपाल,॥

छन्द

तैयार थे क्षत्रिय सभी, शक्ति दिखाने के लिए।
पास आये धनुप के, चिल्ला चढ़ाने के लिए॥
ज्वलनसिंह कहने लगा, चिल्ला चढ़ाऊँ भाजते।
सीता को परणनी करूं, वाकी रहें सब झांकते॥
पास में आया है जब, कोदंड लख घबरा गया।
प्राण रक्षा के निमित्त सब, शक्ति को विसरा गया॥
थरथराता धरणी पर पड़, धम्म से आकर पड़ा।
कायर अधम कहते कई, उपहास करते हैं खड़ा॥

जनक भूप उठकर बोले, जो क्षत्रिय धनुप उठायेगा।
शूरवीर रणधीर आज, वो ही वर माला को पायेगा॥

दोहा

सुनकर वाणी जनक की, उठे भूप बलवान्।
कंपाते हुए धरण को, मन में भर अभिमान॥

बोले ये धनुप तो चीज है क्या, हम वज्र इंद्र का तोड़ धरें।
और मार गदा हम मेरु गिरि के, शिखर सभी हैं गर्द करें॥
वीर मारकर भूमि में, असुरों के भवन सब चूर करें।
मारें ऐसा अग्नि बाण हम, शशि कला को भस्म करें॥
शत खण्ड करें एक हाथ से, जैसे खांड पताशा है।
फिर उसे चढ़ाना चिल्ले पर, साधारण खेल तमाशा है॥
हम वीर बहादुर अतुल वली, किस गिनती में इन को लाते हैं।
अभी चढ़ाकर प्रत्यंचा पर, जनक सुता को ब्याहते हैं॥

दोहा

बैठे हुए सब इस तरह, बजा रहे थे गाल।
तड़क भड़क कर के उठे, अभिमानी भूपाल,॥

छन्द

तैयार थे क्षत्रिय सभी, शक्ति दिखाने के लिए।
पास आये धनुप के, चिल्ला चढ़ाने के लिए॥
ज्वलनसिंह कहने लगा, चिल्ला चढ़ाऊँ भाजते।
सीता को पटरानी करूं, बाकी रहें सब झांकते॥
पास में आया है जब, कोदंड लख घबरा गया।
प्राण रक्षा के निमित्त सब, शक्ति को बिसरा गया॥
थरथराता धरणी पर वह, धम्म से आकर पड़ा।
कायर अधम कहते कई, उपहास करते हैं बड़ा॥

जनक

लगा ताव मूंछों पर बैठे, आन स्वयंवर घर में।
अच्छा है कहीं मरो डूबजा, पानी चूल्लू भर में॥
क्षत्रिय कुल की लाज रक्खे, कोई आता नहीं नजर में।
आन चढ़ावो धनुष यदि, रखते कुछ जोश जिगर में॥

दौड़

बनों सभी जनाने, भेष छोड़ो मरदाने।
माता का दूध लजाया, रल मिल के क्षत्रिय कुल को क्यों
बट्टा आज लगाया॥

दोहा (लक्ष्मण)

जनक भूप की बात सुन, कोपा दशरथ नंद।
कहे लक्ष्मण श्री राम से, बांका वीर बुलंद॥
अय भाई ? नृप जनक ने, कही यह अनुचित बात।
सूर्य के होते हुए दिन को समझी रात।
देवो आज्ञा धनुष चढ़ाऊं जरा देर नहीं करता।
बोली की गोली सही समझलो सिर्फ आपसे डरता॥
वरना एक पलक का भी अरसा न जनाब गुजरता॥
एक धनुष क्या और कहो, सब चढ़ा किनारे धरता॥

(लक्ष्मण का कथन)

तर्ज—य० त

बोली की गोली से घायल किया,
क्षत्रिय कोई आया इसको नजर ही नहीं।
सूर्य वंशी हैं बैठे प्रबल सामने,
इसको इतनी भी देखो खबर ही नहीं॥
कोई क्षत्रिय नहीं, अय कहा सो कहा,
आगे लाना जबां पे जिकर ही नहीं।

विना चिल्ला चढ़ाये जो पीछे हटूं,
तो मैं दशरथ का समझो कुवर ही नहीं ॥

दोहा (राम)

ठीक कथन लक्ष्मण तेरा, है तुमको शाबास।
क्या आफत ये धनुष है, चलकर देखें पास॥
क्षत्रिय हैं हैरान सभी, जा धनुष पास घबराते हैं।
सब ग्रीवा कर नीची अपनी, शर्मा कर वापिस आते हैं॥
विद्याधर का धनुष समझ, लक्ष्मण नहीं कोई मामूली है।
यदि हुए यहां से वापिस हम तो, लोक हसाई शूली है॥

दोहा (राम)

सिद्ध सभी कार्य बने, पढ़ो मन्त्र नवकार।
धनुष मात्र यह चीज क्या, बने वज्र भी तार॥
धीर विक्रम गज ललित गति से, चले राम सुखदानी हैं।
पीछे चले सुमित्रा नंदन, जोड़ी क्या लासानी है॥
उद्धतपना नहीं कहीं तन में, धीर गति से चलते हैं।
और देख-देखकर नृप चन्द्र गति, आदि हृदय में हंसते हैं॥
नहीं चढ़ा सके ज्यां *विद्याधर, यह लड़के क्या कर लेवेंगे।
चाप देख भयभीत भाग, कोई अंग ही तुड़वा लेवेंगे॥
कर रहे हंसी मन मानी सभी, न लक्ष्य राम कुछ करते हैं।
परवाह न ज्यां गजराज करे, जब श्वान भौंकते ही रहते हैं॥
देख अनूप शरासन मन में, राम अति हर्षाते हैं।
और मार मन्त्र उच्चार धनुष के, सम्मुख हाथ बढ़ाते हैं॥
वृद्धि गत पुण्य प्रताप से, अग्नि ज्वाला सब काफूर हुई।
और नाग रूप धारी यक्षों की, क्रोधानल सब दूर हुई॥

*—या जोधा

खिलौने को †दारक जैसे, श्री राम ने धनुष उठाया है।
टहनी सम नमा शरासन, ऊपर प्रत्यंचा को चढ़ाया है॥
आकर्ण चाप को खींच राम ने, खाली एक टंकार किया।
ज्यों नभ में कड़के चपला, त्यों महा भयंकर शब्द किया॥
चक्रावर्तज धनुष दूसरा, लक्ष्मण जी ने उठा लिया।
और खींच राम की तरह, एक दम टंकारव घनघोर किया॥
हृदय स्थल कांपे नृप जनों के, मूर्छित हो धरणी जाय पड़े।
नेत्र स्फारित कर देख रहे, आश्चर्य चकित कई होय रहे॥
चढ़े धनुष दोनों चिल्ले, जयकार बोल रहे नर नारी।
करें त्रिदश वृष्टि कुसुमों की, हर्षोल्लासित जनता सारी॥
उसी समय श्रीराम के गल वरमाला सिया ने डाल दई।
गद्-गद् हुये जनक राजा, जब मनोकामना पूर्ण हुई॥

गाना नं० ६

तर्ज—(त्रिताल)

चढ़ा कर धनुष लोक हर्षित किये।टेक।
जब चढ़ाया धनुष घोर कड़की गगन, इन्द्रदेव सब ही गये मगन।
हाँ रचाया स्वयंवर जभी इस लिये॥१॥
रामचन्द्र के चरणों में सीता झुकी, हार डाला गले हंसी सूर्यमुखी
दर्श करते ही मैं घूंट अमृत पिये॥२॥
सारंगी बजी जोर में बंसरी, तबला बजने लगा नाची हूरोंपरी।
बस धनुष पर ही थी जनक की शर्तये॥३॥
पुरी इन्द्रों में फूलों की वर्षा पड़ी, मेघ सावन की लगती है जैसे झड़ी
धनुष सिद्ध रघुवर ने दो कर लिये॥४॥

---

†बालक

दोहा

देख धीरता सकल जन होते हैं हैरान।
क्या छोटी सी उमर में, इतने हैं बलवान्॥

अष्टादश लड़की राजों ने, लक्ष्मण को परणाई है।
देख पुन्य शक्ति सब ही ने, अपनी प्रीत चढ़ाई है॥
श्री "कनक" भ्राता था जनक भूप का, पुत्री अति सुखदाई है।
"शुभ भद्रावलि" नाम जिसका, वह भरत कुंवर को व्याही है॥
अति धूम धाम से विवाह किया, यहां कथन में नहीं आया है।
और चन्द्रगति खो धनुप; आप होकर उदास चल धाया है।
बाकी सब ने प्रस्थान किया; मैदान राम ने पाया है॥
विदा समय विदेही ने. सीता को वचन सुनाया है॥

॥ विदेही माता की सीता को शिक्षा ॥

गाना नम्बर ८

तू बेटी! आज से हुई पराई, तुझे अवधपुर जाना होगा।
सास सुसर और परिजन सब का; पति का हुक्म बजाना होगा॥
नित्य नियम का साधन निशदिन, पतिव्रत धर्म निभाना होगा।
पीछे सोना पहिले उठना, नित्य शुभ कर्तव्य कमाना होगा।
विधि सहित भोजन शुद्ध करना, पानी नित छन वर्तना होगा।
निरर्थक बातों को तजकर, आत्मज्ञान चरचना होगा॥
क्रोध और माया ममता, इनको दूर भगाना होगा।
कुल मर्यादा नहीं विसरना, लाज शरम मन धरना होगा॥
ऐश्वर्य का गर्व न करना, अन्न धन दान दिलाना होगा।
संयोग मिले तुमको सुखदाई, पुण्य अनुट कमाना होगा॥
अपने सुख का ध्यान न रखना, दुखियों का दुःख हरना होगा।
शील रत्न का अमूल्य गहना, तुमको अंग सजाना होगा॥

अब पुत्री कहना यही मेरा, खुश हो निज पति के गृह जावो ।
सुख सम्पत्तिवर सन्तान सदा, शोभन निज पुण्य से पावो ॥६॥
बचपन में तूने अय बेटी ? सुख जन्म गृह में पाये हैं ।
आगे पति के गृह सर्व सुख, तेरे सन्मुख आये हैं ॥७॥
पति सेवा का महत्व लाडली, सद्ग्रन्थों में गाया है ।
इस बात को अब चरितार्थ करें, सब सार आज तू पाया है ॥८॥
सब मन्त्र-तन्त्र टूणा जादू इनको, हृदय धरना न कभी ।
क्या भूत प्रेत डाकण शाकण, इनसे बेटी डरना न कभी ॥९॥
ये प्राण जायं तो जायं किन्तु, बेटी न धर्म जाने पावे ।
छल छिद्र पोप लीला बेटी, तुमको न कोई छलने आवे ॥१०॥
निज सास-ससुर पति की सेवा, करना कर्त्तव्य तुम्हारा है ।
सर्वज्ञ कथित करो धर्म शुक्ल, अन्तिम उपदेश हमारा है ॥११॥
एक आत्म और शरीर ये दो, रोग मुख्य संसार में हैं ।
कम खाना गम खाना औषधि, दोनों तेरे अधिकार में हैं ॥१२॥
बुतपरस्ती एक बला मिथ्या, यह भ्रम ना हृदय धर लेना ।
कभी देश धर्म आत्म समाज, कमजोर न इसको कर लेना ॥१३॥
कृत कर्मों का भोग कष्ट, आपत्ति सहसा आजावे ।
समता दृढ़ता से सब झेलो, रंचक ना दिल गिरने पावे ॥१४॥
अन्याय के आगे झुकना न कभी, सब सृष्टि चाहे उलट जावे ।
आत्म धर्म बचावो अन्तिम, चाहे सब कुछ लुट जावे ॥१५॥
क्या सीढ़ शीतला काली गौरी, भ्रम को दिल से ठुकराना ।
किसी देव दानव या गंधर्व का, शरण न स्वप्नमात्र चाहना ॥१६॥
ज्ञान दर्श चारित्र से, तूने निज आत्म पहचाना ।
तो करो धर्म की नित सेवा, जो इस भव परभव सुख पाना ॥१७॥

सीता खेल रही थी उससे, टूटे भी कई वर्ष हुये।
एक आप क्यों रोते हैं, बाकी फिरते सब हर्ष हुये॥
संस्कार ये चुकसपने के, अन्तिम असर दिखाते हैं।
बस एक श्रोर हो मार्ग से, क्यों ज्यादा पोल खुलाते हैं॥

इतना सुन कर परशुराम, क्रोधानल में भवक पड़े।
विघ्न देख हटा लक्ष्मण को, राम सामने आन खड़े॥

हाथ जोड़ श्रीरामचन्द्र जी यूं बोले शीतल वाणी।
महाराज ये लक्ष्मण बचा है, आप क्षमा के हैं दानी॥
यह पिनाक आपका जीर्ण था, बच्चों के खेल में टूट गया।
फिर यह भी बात पुराणी है, और सहज में पीछा छूट गया॥
आपसे वीर महापुरुषों को, नया और मिल सकता है।
यह षड्यन्त्र है रचा किसी ने, बकने दो जो बकता है॥
परशु ऊपर राम तले चरणों में लिपटा रहता है।
हम विलीन आपके आत्म में, निज गुण तो एक सरीखा है॥
है प्रकृति का भेद सभी ज्ञानी के लिये परीक्षा है॥

दोहा

श्रीराम के वचन से परशुराम हुआ शान्त।
समझ लिया षड्यन्त्र ये, मूठ सभी एकान्त॥
पुण्यवान प्राणी के संमुख, विघ्न सभी काफूर बने।
महाक्रोधी भी शान्त हुआ, षड्यन्त्रियों ने शीश धुने॥

दोहा

अवधपुरी में खुशी से, पहुंची जब बारात।
स्वागत करने आगये, नरनारी मिल साथ॥
मंगल गायन सब-सखियों ने, सीता महल पहुंचाई है।
धन्य कौशल्या भाग तेरे, सबने दयी आन वधाई है॥
दिल खोल दान तकसीम करो, नृप ने दिया हुक्म वजीरों को।
फिर प्रीति भोजन दिया भूप ने, मुफलिस और अमीरों को॥

गाना नं० ११

मिल कामन झगड़ा डाल रही, खोलो कंगना बोली मार रही टेर।
सोचो मति तुम कंगना खोलो, समझ तुम्हें अबवार रही।
धनुप की चाप नहीं कंगना है, रघुवर से हंस नार रही॥१॥
चातुर नार कई सखियों से, कहें वृथा कर तकरार रही।
कंगना खोल दिया रघुवर ने, यूं ही बहस पड़ी चार रही॥२॥

दोहा

दशरथ नृप ने एक दिन, उत्सव दिया रचाय।
मंगलीक शुभ कारणे, कलशे जल भरवाय॥
भेज दिये रनवासों में, कलश पहिला सेवक के हाथ दिया।
शेष कलश एक एक कर, दासी जन को बांट दिया॥
निज निज चेटी ने. निज निज, रानी सिर कलश डुलाया है।
यह देख हाल पटरानी, कौशल्या को आमर्ष आया है॥

दोहा (कौशल्या)

मुझे कलश भेजा नहीं, भेजा औरों पास।
अपमान एक मेरा हुआ, बाकी रही हुलास॥
पहने को तो मैं पटरानी हूँ क्या. इज्जत मेरी खाक रही।
भेज दिया सब ही को जल पहिला [illegible]

क्रोध हुआ उपशांत अति, प्रसन्न चित्त महारानी का।
बोली महाराज ने मुझ पर खुद डाला कलशा पानी का॥

दोहा (भृत्य)

हाल देर का भृत्य से, पूछा नृप ने फेर।
पहिले जल तुझ को दिया कहां लगाई देर॥

दोहा

मैं चाकर महाराज का करूं हुक्म तामील।
जीर्ण मम काया बनी, लगी इस-तरह ढील॥

धरता पैर उठा आगे, पीछे को पड़ता जाता है।
जब उठे निरंतर खांसी बलगम गले बीच अड़ जाता है।
क्या करूं नारी है कलिहारी, अवनीत पुत्र दुःखदाई है॥
पुण्य उदय पिछली आयु में, शरण आपकी पाई है॥

दोहा

स्वयं अपना हाल कह, शर्माऊं महाराज।
अपनी नारी के कहूँ कर्त्तव्य क्या सिरताज॥

बूढ़े भृत्य का निवेदन

गाना नं० १३

फूहड़ नार बहुत किलमावे ॥टेर॥
चांकी टेढ़ी रोटी करती, नीरस साग बनावे।
भाग्यहीन अब रोटी खाले, ऐसे मो बचन मुझे प्यार से बुलावे ॥१॥
पहिले पड़े बालन खा तुमने, फिर पानी मंगवावे।
छुधा के बस मांगूं रोटी सिर पर खांसड़े चार टिकावे ॥२॥

चौपाई

पूर्व पाठी आगम विहारी, चार ज्ञान तप पूर्व धारी ॥
पांच सुमति और पर उपकारी, प्राणी मात्र के हितकारी।

दोहा

जनता ने जब सुना, आए मुनि महान्।
हर्षसहित पहुंचे सभी, सुना धर्म-व्याख्यान ॥

परिवार सहित गए दशरथ नृप, मुनि जन को शीश नवाया है
जब सुना धर्म व्याख्यान अति, आनंद ज्ञान में आया है ॥
चंद्रगति भ्रमण करण, परिवार सहित था सैर गया।
श्री मुनि दर्शन अर्थ अवध में, वापिस आके ठहर गया ॥
थी ज्ञान की वर्षा लगी हुई, मुनि भेद खोल दर्शाते हैं।
कुकर्म संग हो मूढ़ फिरे, यह जीव बहुत दुःख पावे हैं ॥
हो काम में अंधे फिरें भटकते, राग मोह चित लाते हैं।
देख मतो गम मुफ्तें लाभ, ना होने पर पछताते हैं ॥
यह चिंतामणि मनुष्य तन पाया, फेर हाथ नहीं आयेगा।
अचक्षु कर्ण रस घ्राण, अनंते चक्र में रुल जायेगा ॥

दोहा

पुद्गल परिवर्तन सुना, गए भव्य घबराय।
कुमति छोड़ सुमति गही, सम्यक्त्व दिल ठहराय ॥
उपदेश बाद भूपाल ने, प्रश्न किया तत्काल।
पूर्व जन्म का है प्रभो ? कृपानिधि कहो हाल ॥

दोहा (कवि)

भ्रात विरह का शल्य सब, सीता का हुआ दूर ।
फूली न समाती अंग में, मिला यह सुख भरभूर ॥
मिला देख भाई सीता की खुशी, का न कोई पार रहा ।
श्री रामचन्द्र जी भामंडल को, देता अतितर प्यार रहा ॥
निज हाथ शीश धर सीता ने, भामंडल को आशीष दिया ।
चिरंजीव रहो अए भाई, अब तक तैंने कहां वास किया ॥
फिर मिथिला नगरी रामचन्द्र ने, झट यह खबर पहुंचाई है ।
यह सुनते ही वृतान्त जनक, और साथ विदेहा आई है ॥
देख पुत्र का मुख राजा का, हृदय कमल प्रकाश हुआ ।
ग्रीष्म अन्त श्रावण में, जैसे सब जगल में घास हुआ ॥
भामंडल ने मात पिता के, चरणन में शीश झुकाया है ।
निज सुत को देख दम्पति के, हृदय में आनन्द छाया है ॥
उस खुशी को कैसे बतलाये, न भाव कथन में आया है ।
न शक्ति यहाँ लेखनी की, सर्वज्ञ देव ही ज्ञाता है ॥
नृप चन्द्रगति ने भामडल को, रथनुपुर का राज्य दिया ।
आप लिया संयम नृप ने, तप जप से आत्म काज किया ॥
अष्ट कर्म संहारण को, शुभ भाव सदा ही वर्ताये ।
अहो भाग्य उस प्राणी का जो सयम मार्ग को चाहे ॥

दोहा

आनन्द मंगल हो गया, पहुँचे निज निज धाम ।
जनक भूप का सिद्ध हुआ, मन वांछित सब काम ॥
सत्य भूति ज्ञानी मुनि, शुभ चारित्र विशाल ।
शासन के शृंगार हैं, षट् काया प्रतिपाल ॥
विधि सहित कर वन्दना, बोले दशरथ भूप ।
पूर्व जन्म का हे प्रभु, वर्णन करो स्वरूप ॥

पूर्व महा विदेह क्षेत्र में, वैताड्य गिरी सुविशेष।
उत्तर श्रेणी में भला, शशीपुर नामक देश॥
था भूप रत्नमाली विद्याधर, विद्युतलता नारी जिसके।
एक सूर्ययश पुत्र जन्मा, अति शूर वीर योद्धा जिसके॥
सिंहपुरी के वज्रनयन, नृप से राजा का जंग हुआ।
वहाँ विजय रत्नमाली पाई, और वज्रनयन नृप तंग हुआ॥

दोहा (मुनि)

सिंहपुरी को घेर कर; अग्नि लगा लगान।
पूर्व मित्र इक देव आ: लगा देन यों ज्ञान॥

दोहा (मुनि)

भूरिनन्दन तू हुआ, पूर्व जन्म में भूप।
पड़ विलासिता में तजा, तूने धर्म अनूप॥
मुनि से मांस का त्याग किया, किन्तु कुसंग ने घेर लिया।
भंग किया तूने व्रत अपना फिर ढंग उसी तरह गेर लिया॥
मैं राज पुरोहित था तेरा, अब आगे हाल सुनाता हूँ।
स्कन्द राय के हाथ से फिर, मैं मरण वहाँ पर पाता हूं॥
हस्ति यूथ में जन्म लिया, पर कर्म कहीं ना तजते हैं।
भूरिनन्दन के भृत्यों द्वारा, वहाँ भी कैद में फंसते हैं॥
मैं नायक किया हस्ति चमु में, फिर होनी ऐसी बनती है।
अन्य एक नृप से, भूरिनन्दन की लड़ाई ठनती है।

दोहा

उस घोर युद्ध में मैं तजे, हस्ति योनि के प्राण।
पुण्योदय से फिर हुआ, इसका करूं बयान॥
उसी भूरिनन्दन के थी, गांधारी नाम की पटरानी।
मैं उसी के जाके पुत्र हुआ, जो कहलाती थी महारानी॥

सुना हाल जन्मान्तर का, वैराग्य भूप दिल छाया है।
फिर अयोध्या में आकर, नृप ने दरबार लगाया है॥

दोहा

सुत मित्र पूछे सभी, और बड़े मंत्रीश।
भरी सभा के बीच में, भाषण लगे महीश॥

अस्थिर तन धन संसार में है,
फिर इससे कहा सम्बन्ध ही क्या।
जिन फूलों ने कुमलाना है,
फिर उनकी मस्त सुगन्ध ही क्या।
प्रकृति का वन बना सभी यह,
अवश्यमेव खिर जावेगा।
अनमोल समय यह मिला,
'शुक्ल' फिर शीघ्र हाथ नहीं आवेगा।

सब राज्य महल द्रव्य दुनिया का, कुछ जाना मेरे साथ नहीं।
है यही समय जो निकल गया, दुर्लभ फिर आना हाथ नहीं॥
यह तृष्णा है आकाश तुल्य, न भरी न भरने पायेगी।
अग्नि में जितना घी डालो, उतनी ही लपट दिखायेगी॥
जो वस्तु अनित्य संसार में है, उससे अनुराग बढ़ाना क्या।
मिल रहा संखिया जहर समझ, फिर उस भोजन का खानाक्या॥
हो गया विरक्त अब मन मेरा, संयम व्रत लेना चाहता हूँ।
सुत रामचन्द्र को राज ताज, निज कर से देना चाहता हूं॥

—ः—

दोहा (दासी)

सत्य सभी मैंने कहा, कर तेरा अनुराग ।
बार-बार तुझ से कहूं, इस गफलत को त्याग ॥
इस समय यदि प्रमाद किया तो, फिर पीछे पछतावेगी ।
भरत पुत्र के विरह में फिर, रो रो कर समय बितावेगी ॥
तू स्वामिन है मैं दासी हूँ, इस कारण कहना पड़ता है ।
और भरतकुंवर का मोह रानी, मुझको भी आन जकड़ता है ॥

गाना १४ (दासी का)

(रागनी—तीन ताल)
रानी तुझको नहीं मन, ज्ञान खबर । स्थायी—
अभी शहर में पिटा ढिंढोरा, राज तिलक का समय दुपहरा ॥
खुशियों में सब अवध नगर ।
रामचन्द्र को राज्य मिलेगा, तख्त नशीनी ताज मिलेगा ॥
धूम मची कर देख नजर ।
कहे दशरथ मैं संयम धारूं, भरत कहे मैं संग सिधारूं ॥
फिर रानी तेरी नहीं कोई कदर ।
सोच यत्न कुछ करले रानी, आलस्य में क्यों पड़ी दीवानी ॥
तू भरत से करले आज सबर ।

दोहा

सुन कर रानी के वचन, भूल गई रंग चाव ।
विरह पुत्र का ना बने, सोचन लगी उपाव ॥
लगी अक्ल भ्रमण करने, कोई ढंग नजर नहीं आता है ॥
विरक्त हुवे नृप नहीं रह सकते, सोचा सुत भी जाता है ।
जो वर था मिला स्वयम्वर में नृप के भण्डार रखाया है ।
अद्भुत यह ढंग निराली अब, लेने का मौका आया है ॥

दोहा

पास बुलाई रानियें, बोले नृप समझाय।
राज-काज दे राम को, मैं संयम लूं जाय॥
जो-जो मन के भाव आप, वह प्रकट सभी कर सकती हो।
यह जन्म-मरण संसार अनित्य तज संयम भी धर सकती हो॥
श्रेष्ठ मुहूर्त सभी ज्योतिषी, देख हाल बतलाते हैं।
कल रामचन्द्र को राज ताज दे, हम संयम चित्त लाते हैं॥

दोहा

सुनते ही नृप के वचन, रानी सब हैरान।
क्योंकि पति वियोग का समय दृष्टि लगा आन॥
देख विरह नृप को सब रानी, यथा योग समझाती हैं।
निज राग प्रेम दिखलाने को, नयनों से नीर बहाती हैं॥
जब समझ लिया राजा आगे न पेश हमारी जाती है।
तब शेष मौन हो गई, कैकयी ऐसे वचन सुनाती है॥

दोहा (कैकयी)

नम्र निवेदन है पिया, संयम लेना बाद।
वर भंडारे है मेरा, स्वयं करो प्रभु याद॥
स्वयं करो प्रभु याद गये थे आप स्वयंवर घर में।
पंक्ति से थे बाहिर मैं लाई, वरमाला जब कर में॥
मचा घोर संग्राम अड़े, जब शूरे सभी समर में।
करी सहाय मैं उठा होल था, आप के आन जिगर में॥

गाना नं० १५

(कैकयी का दशरथ से कहना) बहर कव्वाली
अक्ल उस दिन मेरे स्वामी, गई थी कर किनारा है।
अरि ने सारथी के बाण जब सीने में मारा है॥१॥

शत्रुओं ने तुम्हें आकर, युद्ध में जब दबाया था।
बनी में सारथिन आकर, दिया तुमको सहारा है ॥२॥
पड़ी मैं दल में बिजली सी, चलाई तेग फिर तुमने।
हुए काफ़ूर सब शत्रु रवि जैसे सितारा है ॥३॥
हो खुशी फिर अपने मुख से, कहा मांगोगी सो दूंगा।
न तोड़ूं वाक्य क्षत्रिय हूँ, वचन तुमने उचारा है ॥४॥
धरो भंडार में मैंने कहा, प्रीतम वचन लेकर।
उऋण होवें मुझे देकर, आप सिर बोझ भारा है ॥५॥

दौड़

सुनो स्वामी चित्त लाके, वचन दो मेरा चुका के।
वचन क्षत्रिय नहीं हारे, जो हारे सो समझ पति,
नहीं पहुँचे मोक्ष द्वारे ॥

दोहा दशरथ)

हाँ मैंने था वर दिया, कर तेरा अनुराग।
बिना एक चरित्र के, जो मर्जी सो मांग ॥

(दशरथ)

सब ठीक दिलाया याद मुझे, अये रानी तूने आ करके।
मैं क्षत्रिय हूँ नहीं तोड़ूं वाक्य, सब कहूं तुम्हें समझा करके ॥
जो कुछ इच्छा तुमको सब, देने को तैयार हूं मैं।
निष्फल दुनिया में एक घड़ी, भी रहने को लाचार हूं मैं ॥

चौपाई

क्षत्रिय कुल रीत यही सुन रानी, वचन हेत तजते जिंदगानी।
मेरु समुद्र चले महीमान, शूर वचन जाने सम प्राण ॥

वचन को हारूं नहीं, जो आत्मा का धर्म है।
कर दिया वेहाल मुझको, इस करज के दाम ने ॥४॥
तोड़ दूं व्यवहार सारा, न्याय कैसे छोड़ दूं।
प्रसिद्ध हम सबको किया, दुनिया में जिस सुत राम ने ॥५॥
तीर बीन छलनी किया, मेरा कलेजा नार ने।
अब 'शुक्ल' मैं क्या करूं, युक्ति न आवी सामने ॥६॥

दोहा

सोच फिकर में इस तरह, हुआ भूप लाचार।
इतने में आकर झुके, चरणन पद्म कुमार ॥
आ नमस्कार की चरणों में, फिर मुख पर नजर टिकाई है।
बैठे कुछ आज उदास भूप, सब चमक दमक मुर्झाई है॥
यह देख पिता का हाल, राम का हृदय कमल मुर्झाया है।
दो हाथ जोड़ नम्रता से, यो शीतल वचन सुनाया है॥

दोहा (रामचन्द्र)

कारण आर्तध्यान का, बतलाओ महाराज।
विकट समस्या आ गई, कौन सामने आज ॥
कौन सामने आज आपके; मन में बड़ा फिकर है।
आज्ञा कर दई भंग किसीने, या भय और जबर है॥
शूरवीर रणधीर आपकी, जाहिर तेग समर है।
कौन फिकर है पिता आपको, जब तक राम कमर है॥

दौड़

भेद दिल का बतलाओ, जो आज्ञा हो फरमावो।
जन्म तुम घर लीना है, पिता रहे जो दुखी फेर,
धिक्कार मेरा जीना है॥

क्षत्रिय अपना वचन सदा, सब पूरी तरह निभाता है।
महाशूर वीर नहीं हटे कभी, चाहे अपने प्राण लगाता है॥
कैसे करूं वचन पूरा अब, यही मैं ध्यान लगाता हूँ।
यहां बैठा दुःख में लीन हुआ, इस जीने से घबराता हूँ॥

दोहा (राम)

राज्य नकारी चीज पर, इतने हैं हैरान।
वर देने को है पिता, मांगो हाजिर प्राण॥

गाना नं० १७ (रामचन्द्र)

पिता मात का कर्जा, सिर से उतारना जी। स्थायी
तुम गल जिस पर माला पाई, फिर दल में आ जीत कराई।
इससे बढ़कर और कोई उपकार ना जी॥१॥
विपत समय में करी सहाई, बड़ी मात की शूरमताई॥
जो मांगे दो जरा करो, तकरार ना जी॥२॥
खिला आज यह चमन हमारा, कृपामात की करो विचारा॥
धन्य कैकयी मात सर्व, दुःख टारना जी॥३॥
क्षत्रिय का निज कर्म यही है वचन न तोड़े धर्म यही है।
हक बेहक का करो, आप इसरार ना जी॥४॥
पिता आपने वचन दिया है, राज्य मात ने मांग लिया है।
लियें भरत के मुझे, खुशी का पार ना जी॥५॥
भरत राम दो नहीं पिताजी, क्या नाचीज है ताज पिताजी।
जैसे मस्तक चक्षु, इन्हें विचारना जी॥६॥
पहिले भरत को राज तिलक दो, फिर जिन दीक्षा में निज दिल दो।
शुक्ल ध्यान निर्विघ्न, मोक्ष पधारना जी॥७॥

दोहा (दशरथ)

शाबास मेरे सुत के हरी, विनयवान रणधीर।
तृषातुर को अय कुमर, प्याया शीतल नीर॥
ग्रीष्म अन्त श्रावण जैसे, या जैसे द्वीप समुद्र मे।
शशि चकोर को सुखदायी, या औषधी रोग भंगदर मे॥
जैसे श्री जिन धर्म जीव को, सुख अनन्त दिखलाता है।
ऐसे मुझ को सुखदायी, तू पुत्र राम कहलाता है॥

दोहा

उसी समय भूपाल ने, किया एक दरबार।
मंत्रीश्वर बुलवाय कर करने लगे विचार।

दशरथ—घड़ी पहर निष्फल मुझको, वर्षों की तरह दिखाते हैं।
अब राज तिलक दे भरत पुत्र के, सिर पर ताज टिकाते हैं॥
तुम यथायोग्य सब तैयारी, करने मे अब ना देर करो।
व्यवहार सभी यह ठीक बना, स्वतन्त्र हमे भी फेर करो॥
यह नियत सभी कुछ हुआ, आज बस रानी का वर देते है।
सुत भरत अयोध्यापति बना, अब हम जिन दीक्षा लेते हैं॥
है यही सम्मति रामचन्द्र की, भरत भूप होना चाहिये।
और ऐसे पुत्र सुपुत्र के लिये, धन्यवाद देना चाहिये॥

दोहा

राज कुमर प्रस्ताव सुन, बोले भरत कुमार।
उदक विलोने से कभी, निकला है क्या सार॥

दोहा (भरत)

माता को मैं क्या कहू, मुझे न चाहिये राज।
चरित्र आपके मग लू, सारू आत्म काज॥

अनुचित शब्द कोई माता को, कहना महा सभ्यता है।
और आश्चर्य में चकित हुआ, दिल मेरा बड़ा धड़कता है॥
क्या यही एक वर था दुनिया में जो माता ने मांगा है।
जो परम धर्म का मर्म शर्म, हक तीनों का ही त्यागा है॥

दोहा (भरत)

सरल स्वभावी पिताजी, तुम भोले भण्डार।
असुरों को भी ना मिला, त्रिया चरित्र पार॥

भरत—मोह कर्म के वशीभूत हो अपना आप भुलाती है।
और पुत्र के हित के कारण, अपना सर्वस्व लगाती है।
रोना जो इन्हें नहीं आवे तो, नेत्रों को लव लगाती है॥
और फाड़ गलारो बुरा ढंग, कर सम वेदना दिखाती है।
वन में न सिंह से भय खाती, घर मूषक से डर जाती है॥
जा चढ़े विकट पर्वत ऊपर, घर देहली से दहलाती है।
निज पति पुत्र को आप मार, औरों को दोष लगाती है॥
फिर करे अग्नि प्रवेश और, आंखों से नीर बहाती है।

दोहा (भरत)

करना चाहिये आपको दीर्घ दृष्टि विचार।
व्यवहार न जिसमें शुद्ध रहे, विगड़ जावे संसार॥

कुछ तो सोच विचार करो, यह सूर्यवंश कहाता है।
बस अनुचित कोई काम यहाँ, पर रचक नहीं समाता है॥
क्यों मर्यादा सब तोड़ कीर्ति, पानी बीच बहावे हो।
श्री रामचन्द्र का ताज मुझे दे, जग में हंसी कराते हो॥
यदि करे नार से नरमाई उतना ही सिर पर चढ़ती है।
नागिन को जितना दूध मिले, विष उतना अधिक उगलती है।

हाथ कंकन को अरसी क्या, प्रत्यक्ष सभी दिखलाता हूँ ।
इस राज के बदले मुझे क्षमा दो, चरणन शीश नमाता हूँ ॥

दोहा

दशरथ मन में सोचता, मुश्किल हुई अपार ।
राज्य लेने से भरत ने, साफ किया इन्कार ॥

गाना नं० १८ (दशरथ का भरत से कहना)

सब तरह से समझ रक्खा, भरत तुझको मैं स्याना था ।
इस तरह साफ इन्कारी, बनेगा यह न जाना था ॥१॥
वचन पहिला ही जब हमने, सभा अन्दर उचारा था ।
सोच कर सार उसका, अय कुमार हृदय जमाना था ॥२॥
ठीक तैंने कहा सो भी, किन्तु नहीं समय को सोचा ।
गया जो छूट कर से तीर, उसको क्या जिताना था ॥३॥

दोहा (दशरथ)

बेटा अब तुम मत करो; मुझ प्रतिज्ञा भंग ।
रानी को था वर दिया; जब जीता था जंग ॥

सिर आखों से मात पिता का; हुक्म बजा लाना चाहिये ।
और अपनी बुद्धि का परिचय, मौके पर दिखलाना चाहिये ॥
कर्तव्य है पुत्र शिष्य का, जो गुरुजन का हुक्म बजाता है ।
अब कहो पुत्र मुख से उचार क्या, समझ तुम्हारी आता है ॥

दोहा (भरत)

बेशक मैं अविनत हू, दुर्बुद्धि दुःखकार ।
रामचन्द्र को राज्य दो, मुझे नहीं स्वीकार ॥

छन्द--(भरत)

शोभता मुझको नहीं, यह ताज अपने सिर धरूं।
धिक्कार चुल्लू भर कहीं पानी में न जाकर मरूं॥
चाकर का चाकर मैं बनूं राजों का राजा राम है।
आज्ञा उन्हीं की सर धरें, ये ही हमारा काम है॥
और जो मर्जी पिता आज्ञा, मुझे दे दीजिये।
ताज शोभे राम सिर, बेशक अभी धर दीजिये॥
इस अयोध्या राज की, मुझको पिता इच्छा नहीं।
दीक्षा लेने के सिवा मानूं कोई शिक्षा नहीं॥

दोहा (राम)

राम कहे भाई सुनो, बनों न तुम नादान।
कुल के गौरव पर जरा, करना चाहिये ध्यान॥
तेरा सहज हिलाना सिर, यह मुझको नहीं गंवारा।
प्रतिज्ञा हो भंग पिता की, कुछ तो करो विचारा॥
आदिनाथ से चला आ रहा, शुद्ध कुल वंश हमारा।
आप से बुद्धिमानों को है काफी जरा इशारा॥

गाना नं० १६ (राम का भरत को कहना)

वचन पिता का भाई, तुम मानों जरूर ॥टेर॥
सेवा कर-कर हारें, सारी उमर गुंजारें।
पिता का फर्ज उतारें, तब भी होवा न पूर॥
पिता का धर्म बचाओ, सिर पे ताज टिकाओ।
जल्दी करके दिखावो, होवें दुःख सब दूर॥ २॥
तुमने हुक्म यह टाला, फिर क्यों संयम पाला।
यह क्या मुख से निकाला, होके गुस्से में चूर॥ ३॥

दोहा

मन में खूब विचार कर, बोले रामकुंवार।
पिता आपका भरत सुत, विनयी आज्ञाकार॥

मेरे होते राज्य भरत ने, करना नहीं पसन्द किया।
फिर सोच समझ कर और, एक हमने ऐसा प्रबन्ध किया॥
अपने वचनों का पास भरत को निकले कभी न तोड़ेगा।
मेरे जाने के बाद करेगा राज, हुकम नहीं मोड़ेगा॥
पिता आपका ऋण उतरा, यह खुशी मेरे मन भारी है।
अब जाता हूं वन सैर आज, लेवो प्रणाम हमारी है॥
इस चरण रज निर्गुणी राम के, हाथ शीश पर धर दीजे।
मैं सेवा न कर सका, आपकी क्षमा दोष सब कर दीजे॥

दोहा

रामचन्द्र के जब सुने, दशरथ नृप ने वैन।
मूर्च्छित हो धरणी गिरा, नीर बहाता नैन॥

झट गिरा भरत आ चरणों में, नैनों से नीर बहाता है।
हा खेद निकल गया क्या मुख से, गद्-गद् स्वर अति पछताता है॥
अब हो सचेत दशरथ राजा, दुःख सागर बीच समाया है॥
श्री राम ने जाकर माता के, चरणों में शीश झुकाया है।

दोहा (राम)

माता मेरी लीजिये, चलत समय प्रणाम।
साधन चौदह वर्ष में, होगा वन का धाम॥

छन्द

जब मात के चरणों झुका, पाँचों ही अंग निमाय कर।
मानिन्द-चम्पक बेल सम, रानी गिरी मुर्झाय कर॥

कुछ चेत जब मन को हुआ, सुत राम से कहने लगी।
और अश्रु धार उस दम, नेत्रों से बहने लगी॥

दोहा (कौशल्या)

दुखदायी तूने कहा, शब्द विरह का आन।
विना मौत मारा मुझे, लगे कलेजे बान॥

लगा कलेजे बाण रही, ना शक्ति मेरे बदन में।
अन्धकार हो जाय विना तेरे, सब राज भवन में॥
देख तुझे सुखकन्द चन्द, खुश रहूं हमेशा मन में।
हरगिज न जाने दूंगी, पुत्र मैं तुझको बन में॥

दौड़

मेरा तू एक कुमर है, छोड़ कर चला किधर है।
मेरे रो रो कर मइया, विना विचारे किया काम तैंने
क्या कुमर कन्हैया॥

दोहा (राम)

जान बूझ कर मात तू, क्यों बनती अनजान।
यहाँ रहने से न रहे, कुल का गौरव महान्॥

छंद (राम)

राज्य मेरे सामने भाई भरत करता नहीं।
ऋण उतारे बिन पिता का, भी हमें सरता नहीं॥
तात प्रतिज्ञा होवे पूरी, सभी मम जाने से।
जैसे कलह उपशम बने, माता जरा गम खाने से।
तन की खातिर धन तजो, दोनों को तज रख प्राण ने॥
धर्म की खातिर तजो, तीनों कहा जिनराज ने॥

आबरू तन राज दौलत, सब हमारे पास है।
बस यह अलौकिक धर्म कारण ही वनों का वास है॥
प्रसन्न होकर मातजी, आज्ञा मुझे दे दीजिये।
सैर करने सुत गया यह ध्यान मन धर लीजिये॥

दोहा (कौशल्या)

अनजान पुत्र मैं हूं नहीं, रहा जो यों बहकाय।
छइया मइया से तेरा, विरह सहा नहीं जाय॥

छंद (कौशल्या)

परभव मुझे पहिले पहुंचा, कर फेर वन में जाइये।
उपकार कर मुझ पर कुंवर, भारी यह दुख मिटाइये॥
खेद अतिमाता का तूने, ख्याल कुछ भी न किया।
दुख सहा जिसने अतुल, और दूध है जिसका पिया॥
बेशक पिता का फिकर भी, तुमको मिटाना चाहिये।
किन्तु मात का भी कुमर दिल न दुखाना चाहिये॥
या तो कर मेरा भी कहना, या किसी का भी न कर।
क्या कहूँ मैं कैकयी को, आज यह मांगा है वर॥

दोहा (राम)

शूर वीर की तू सुता, मत कायर बन मात।
तू ही बतलादे मुझे, बने किस तरह बात॥
तू ही बतला हमें आज ऋण कैसे पिता उतारेंगे।
इस झूठी दुनिया को तज कर, कैसे शुभ संयम धारेंगे॥
एक यही उपाय है बस माता, जिससे सब कार्य सिद्ध बनें।
धर दो कैकयी माता का, और पिता भी जिससे उऋण बनें॥

रामचन्द्र और कौशल्या का प्रश्नोत्तर रूप गाना २०

(तर्ज—लावणी)

राम—माता मुझको जाना है अमर जरूरी।
क्या कहूँ हाल यह बनी आन मजबूरी॥
मेरी मात सोच कुछ बहुत विचारा है।
कर्तव्य पालन के लिये, मात वनवास हमारा है॥टेर॥
अयि माता धरो मन, धीर नहीं घबराना।
बिन धर्म श्री जिन, नाशवान जग माना॥
दुख भोग रहा मोह के, वश सभी जमाना।
धर ध्यान मुनि सुव्रत, स्वामी चित्त लाना।
मेरी मात जन्म तेरे उर धारा है।
कर्तव्य पालन के लिये मात वनवास हमारा है॥ १॥

कौशल्या—अय पुत्र ! फेर तैंने यही शब्द सुनाया।
गया निकल कलेजा जी जामा थर्राया॥
आखों के तारे बेटा गुण सुख धाम।
लगे कलेजे बाण पुत्र मत ले जाने का नाम।टेर।
हे पुत्र ! बता कैसे दिल मेरा डटेगा।
कर याद याद तेरे मम, हृदय फटेगा॥
वर्षों के समान एक क्षण, पल मेरा कटेगा।
कैसे चौदह वर्षों का, काल घटेगा॥
अय पुत्र बता कैसे, बचेंगे प्राण।
लगें कलेजे बाण पुत्र मत ले जाने का नाम॥ २॥

राम—अय माता ! बात नहीं चाहता मन बस्ती का।
गया निकल बाहर नहीं, छिपे दांत हस्ती का।

यही वक्त है माता अब धैर्य धारण का।
आराम नहीं चाहता हूँ, अब मैं तन का॥
है मात ख्याल एक सिर्फ पिता के ऋण का।
मुझको नहीं बिल्कुल, साधन में भय वन का॥
है लिये धर्म के तुच्छ, मेरी जिन्द तिनका।
फिर ध्यान कहां है, राज पाट और धन का॥
मेरी मात ख्याल कहां गया तुम्हारा है।
कर्तव्य पालन के लिये मात बनवास हमारा है॥ ३॥

कौशल्या—हर वार कुमर दिल मेरा, मति दुखावे।
पति धारे सयम और तू वन को जावे॥
मेरे पुत्र मैं दिल कैसे, थामू कर ध्यान।
तेरा, कहना सहज, कलेजे मेरे लगता बाण॥
क्यों सहे अतुल दुःख वेटा, बालेपन में।
तेरे विन घोर अन्धेरा, हो महलन में॥
गया उछल कलेजा, रही न सत्या तन में।
न रुके वह रहा जल, झरना नयनन में॥
तोते चश्म मानिन्द मोह तजा तमाम।
लगे कलेजे बाण, पुत्र मत ले जाने का नाम॥४॥

दोहा (राम)

माता छोटा देख कर, मन अपने मत भूल।
छोटा बच्चा सिंह का, मारे गज स्थूल॥

राम—छोटा सा वज्र बड़े बड़े, पर्वत भी तोड़ गिराता है।
अंकुश क्या देखो छोटासा, हस्ती को वश कर लाता है॥
अन्धकार का नाश करे दीपक, या रवि जरा सा है।
मैं क्षत्राणी का शेर बबर, माता दिल धरो दिलासा है॥

दोहा

छुटे बाण ज्यों धनुष से, त्यों शूरवीर की बात।
वापिस फिर लेते नहीं, जैसे दिन गत रात॥

दोहा (राम)

रवि शशि सागर टरे, व्योम न दे अवकाश।
प्रण से माता मैं ना टरूं, जाय करूं वनवास॥
शूरवीर का पुत्र नहीं, दुनियां से दहलाता हूं।
जन्म लिया तेरे माता, मैं क्षत्रिय कहलाता हूं॥
मरने का नहीं भय मुझको, प्रण का जितना खाता हूं।
रघुवंशिन को आज नहीं बटा लाना चाहता हूं॥

गाना नं० २१ (राम का कौशल्या से कहना)

मुझे माता वनवास जाना पड़ेगा।
वचन यह पिता का, निभाना पड़ेगा॥१॥
नहीं आती युक्ति, नजर कोई दूजी।
अय माता तुझे मन दिकाना पड़ेगा॥२॥
वनों का यह क्या दुख चाहे जान जावे।
जो प्रण है पिता का, निभाना पड़ेगा॥३॥
पिता ऋण न उतरे, धर्म कैसे हारूं।
यह भव भव में दुख फिर उठाना पड़ेगा॥४॥
क्षमा दोष करके, धरो हाथ सिर पर।
कहो 'पुत्र जा वन' सुनाना पड़ेगा॥५॥

गाना नं० २२ (रामचन्द्र और कौशल्या का प्रश्नोत्तर रूप)

तर्ज—(लावणी)

यह जाना नहीं बेटा, मेरे इस सुन्न में।
किस तरह कहूं होना, जाओ वन दुख में॥

मेरे लाल अक्ल के तोते उड़े तमाम।
लगे कलेजे बाण कुंवर मत ले जाने का नाम ॥टेर॥
आंखों का तारा, जान जिगर से प्यारा।
कभी आज तलक में किया न तुझको न्यारा ॥
गुल वदन चाँद का टुकड़ा राज दुलारा।
पुत्र ! माता को दुख सागर में डारा ॥
मेरे लाल शुक्ल क्यों छोड़ चले वन धाम।
लगे कलेजे बाण, पुत्र मत ले जाने का नाम ॥१॥

राम—लीजो माता प्रणाम झुकाऊं सिर को।
तजता हूँ चौदह वर्ष तलक इस घर को ॥
मेरी मात करूं बनवास गुजारा है।
फर्तव्य पालन के लिये मात बनवास हमारा है ॥
है विनयवान् मम भ्राता भरत सुत तेरा।
उठ गया समझ यहां से अन्न पानी मेरा ॥
मानिन्द पंछी दुनिया का रैन बसेरा।
वही शुक्ल मनुष जिसने नहीं गौरव गेरा ॥
मेरी मात धर्म ही एक सहारा है।
फर्तव्य पालन के लिये मात बनवास हमारा है ॥

दोहा (राम)

माता पुत्र की लीजिये, हृदय से प्रणाम।
नीरस मोह को त्यागकर, कीजे आत्म काम ॥

छंद

पीठ फेरी राम ने, इतने में सीता आगई।
पकड़ लगा हृदय सासु ने, गोद में बैठा लई ॥

नेत्र जल वर्षा से अति सीता को मानो तर किया।
चहुं ओर से आपत्तियों ने, जैसे आकर घर किया॥
रोक मन को थाम दिल को, बात तब कहने लगी।
अव्यक्त और गद्गद् शब्द, स्वर धार जल बहने लगी॥

दोहा (कौशल्या)

क्यों वधु शृंगार सब तन से दिये उतार।
नमस्कार आकर करी, हुई फिरर तैयार॥

हार गल से लालों का, किस कारण तैंने उतार दिया।
क्यों सच्चे मोती हेम जड़ित, साड़ी को आज विसार दिया॥
नजर नहीं आता दामन जी, जवाहरात से जड़ा हुआ।
यह कहाँ दोलर्फी मस्तक खींचे, था चन्द्रमा चढ़ा हुआ॥
कहाँ पायजेब नूपुर भुमके, हीरे जिनमें थे अड़े हुवे।
मनमोहन माला पंचरंगी, दाने जिनमें थे जड़े हुवे॥
निर्मल व्योम शशि जैसे तारागण में दिखलाता था।
ऐसे ही गुल बदन तेरा मुख, गहनों से मुस्काता था॥

दोहा (सीता)

क्या बतलाऊँ मैं तुझे, माता मुख से भाप।
जला हुआ जो दूध का, फूंक लगाता छास॥

छंद (सीता)

बालपन में भ्रात की, मैंने जुदाई है सही।
फेर विद्याधर पिता को, ले गया गिरि पर कहीं॥
दुख नहीं पहिला मिटा और ही गम आ मचा।
लाचार मेरा पिता ने था स्वयंवर व्याह रचा॥
दुख स्वयंवर का कहूँ, शक्ति यह जिह्वा में नहीं।
चरण स्पर्श आपके, कुछ पुण्य बाकी था कहीं॥

सभी यह महल सुख शय्या, मुझे शूलों के मानिन्द है।
फिरूं वन वन पिया संग तन, सुखाना ही मुनासिब है ॥३॥
पति वन जाय दुख भोगे मैं, कैसे महल सुख भोगूं।
पति के संग जो सुख, दुख उठाना ही मुनासिब है ॥४॥

दोहा

उसको भय कैसे लगे, शीलव्रत जिस पास।
जिस शक्ति से आ बने, देव न पति भी दास ॥
नमस्कार करके हुई, सीता झट तैयार
महारानी पर मानों गिरा, आपत्ति का भार ॥

छन्द

आशा निराशा होय रानी शोक सागर में पड़ी।
नेत्रों में आँसू बरसते जैसे कि श्रावण की झड़ी ॥
देख कर यह दृश्य सखियाँ भी सभी रोने लगीं।
परिचारिका आसुओं से, अपना मुंह धोने लगीं ॥
बोली सभी कि प्रेम भी ऐसा ही होना चाहिए।
सब को आगे ऐसा ही पुण्य बीज बोना चाहिए ॥
जैसा हर्ष था विवाह में, वैसा हर्ष वनवास है।
है सती पूरी नहीं छोड़ा, पति का साथ है ॥
सुख अवध के सब तज दिए एकदम से ठोकर मार के।
सेवा करन को साथ ही वन में चली भर्तार के ॥

दोहा

सीता का है पति मे निश्चय प्रेम अपार।
दुनियाँ में ऐसी सती विरली हैं दो चार ॥
धन्य जन्म इसका हुआ, धन्य मात और तात।
धन्य जिसे ब्याही उसे, धन्य विदेही मात ॥

अब विरह यह सामने, पतिदेव का आता नजर ।
साथ न छोड़ूँ पिया का, फिर मिलें कब क्या खबर ॥

दोहा (कौशल्या)

लगे घाव पर अब सिया, नमक दिया बुरकाय ।
मरती को मारा मुझे, जो तू भी वन जाय ॥
जो तू भी वन जाय, फेर मैं कैसे करूं गुजारा ।
दुख सागर में लीन, गमों का चले जिगर पर आरा ॥
सुख दुख की मैं कहूँ बात, किससे कर वधू विचारा ।
मरने भी न कोई देता, मर जाऊं मार कटारा ॥

गाना नं० २३ (राम कौशल्या विलाप)

कर्म हैं खोटे मेरे, आँसू बहाना हो गया ।
सुत वधू दोनों चले, सूना जमाना हो गया ॥१॥
क्या कहूँ तकदीर आगे, पेश कुछ चलती नहीं ।
रात दिन पुत्र जुदाई, जी जलाना हो गया ॥२॥
तू वधू मत जा बनां में, मान ले मेरा कथन ।
राजधानी महल सब, गम का खजाना हो गया ॥३॥
घोर दुख वन का, सिया तुझसे सहा नहीं जायगा ।
मानती नहीं क्या अशुभ, कर्मों का आना हो गया ॥४॥

दोहा (सीता)

पति देव बन बन फिरें, मैं रहूँ बैठ आवास ।
आज्ञा मुझको दीजिए नम्र निवेदन सास ॥

गाना नं० २४ (सीता का कौशल्या से कहना)

पति का साथ छोड़ूँ यह मेरे से हो नहीं सकता ।
कोई कर्त्तव्य से चुके तो मुक्त वो नहीं सकता ॥१॥

पति के तन की छाया हूं, कहे अर्धाङ्गिनी दुनिया ।
कोई छोड़े धर्म अपना, वह सुख से सो नहीं सकता ॥२॥
है जब तक दम मे दम मेरा, करू सेवा पति की मैं ।
लिए परमार्थ जो मरता, कभी वह रो नहीं सकता ॥३॥
न इच्छा राज महलों की, तमन्ना है न कुछ धन की ।
योग्य सेवा विना परमार्थ कोई टोह नहीं सकता ॥४॥
झुकाती हूं मैं सिर अपना, आपके सास चरणों में ।
अपूर्व लाभ अपना ऐसा, कोई खो नहीं सकता ॥५॥

दोहा (कौशल्या)

वेशक पतिव्रता सती, पति से प्रेम अपार ।
नादान पता तुझको नहीं, वन में दुःख अपार ॥

यह कोमल वदन वधू तेरा, मक्खन समान ढल जायेगा ।
ज्येष्ठ भाद्रपद को धूपों से, दिल तेरा घबरायेगा ॥
घोर बड़े तूफान नदी नालों के दुख का पार नहीं ।
हिंसक जन्तु शेर बघेरे चीते हस्ती पार नहीं ॥
तू फेर वहाँ पछतावेगी, जगल में सोना धरती का ।
जहाँ नित्य प्रति आर्तध्यान सहेगी कैसे दुख वन सर्दी का ॥
मक्खी मच्छर बिच्छु आदि, दारुण भय वहाँ सर्पों का ।
विकट पहाड़ बताऊँ दुख मैं, कैसे खूनी वर्फों का ॥
मैं वार वार समझाती हूं, अंजाम सोच इन हर्फों का ।
जहाँ थोड़े दिन का काम नहीं, दुख भारी चौदह वर्षों का ॥
फेर पति का पग बंधन, परदेशों में यह नारी है ।
कोमल गुल वदन वधू तेरा, यह कष्ट झेलना भारी है ॥
शोभनीय फल देख तुरत खग वृक्षों पर छा जाते हैं ।
कोई कष्ट न तुम पर आ जावे, यों हम नहीं भेजना चाहते हैं ॥

वहां दुख नहीं है कुछ भी, जहाँ होवें प्राण प्यारे।
उनकी करूंगी सेवा, जाकर के साथ वन में ॥२॥
कांटे भी फूल बनते, सत्य पथ को धारणे से।
कोमल कली बनेंगे, कण-कण सु तीक्ष्ण वन में ॥३॥
कर्तव्य धारणे पर दुखों की क्या है परवाह।
दुख का ही सुख बनेगा, पति प्रेम हो जो मन में ॥४॥
करि केहरी द्वीपी भालु, बिच्छु व नाग अजगर।
पति सेवा से भगेंगे ज्यो अंधकार दिन मे ॥५॥
चिन्ता नहीं जिस की पतिव्रत पे हो अर्पण।
उपसर्ग सारे सहकर, प्रसन्न हूंगी मन में ॥६॥

दोहा (लक्ष्मण)

लक्ष्मण यह वृतान्त सुन, रहन सके चुपचाप।
कुछ तेजी मे आनकर, ऐसे बोले आप ॥

अच्छा वर मागा माता ने, यहां भंग रंग मे डाला है।
जो राज ताज दे भरत वीर को, बाहर राम निकाला है ॥
पहिले वर भडारे में रक्खा, अब यह मिसल निकाली है।
वर नहीं मागा माता की, यह भी कोई चाल निराली है ॥

दोहा

सरल स्वभावी हैं पिता, कपट कारिणी मात।
भरत वीर भी था भला, फंसा वचन वस तात ॥

फंसा वचन वस तात, किन्तु मैं देखूं तेज सभी का।
क्या होता है देख रहा था, बैठा हाल कभी का ॥
अफसोस हुआ वर्ताव, देखकर ऐसा आज सभी का।
राज्य राम को देऊं भरत, बालक है, कौन अभी का ॥

दौड़

जहा तक मेरा दम है, राम को फिर क्या गम है ।
नहीं जाने दूं बन मे राम करेंगे राज रहूंगा,
मैं सेवक चरणन में ॥

दोहा

दहकती ज्वाला की तरह, देख अनुज का रोष ।
शीतल वचनों से लगे, दन राम सन्तोष ॥

।म—अय लक्ष्मण कुछ सोच समझ, मन मे क्यों रोष बढ़ाया है ।
अत्यन्त खुशी का समय आज, यह अपने कर में आया है ॥
मातपिता की आज्ञा पालें, मुख्य कर्तव्य हमारा है ।
करें सेवा तन मन से जिनकी, अनुचित क्रोध तुम्हारा है ॥
जैसा राम भरत वैसा, लक्ष्मण या वीर शत्रुघ्न है ।
वचन पिता का करे न पूरा, तो हम भी कृतघ्न हैं ॥
यह राज खुशी से भरत वीर, को मैं लक्ष्मण ! देजाता हूँ ।
कर्तव्य अपना पले पिता ऋण टले, यही दिल चाहता हूँ ॥

गाना नं० २८

(रामचन्द्र का लक्ष्मण को समझाना)
तर्ज—(लगी लौ जान जाना से तो जाना ही मुनासिब है)

राज्य के वास्ते अपना वचन, हरगिज न हारेंगे ।
करेंगे सैर बन बन की, पिता का ऋण उतारेंगे ॥१॥
रोष को दूर कर मन से, सुनो लक्ष्मण मेरे भाई ।
मात कैकयी के चरणो में, यह अपना शीश डारेंगे ॥२॥
प्रतिज्ञा पालने वाले, हुए सब सूर्य वंशी हैं ।
इसी में जन्म धारा तो वचन हम भी न हारेंगे ॥३॥

भरत के शीस शोभे ताज, मैं शोभूंगा वन जाकर।
पिता शोभें मुनि दीक्षा, जन्म अपना सुधारेंगे ॥४॥
राज्य धन मित्र सुत दारा, मिलें कई बार प्राणी को।
है दुर्लभ धर्म का मिलना, इसी से वन श्रृङ्गारेंगे ॥५॥

दोहा

सुना कथन जब राम का, ठण्डा हो गया जोश।
गूढ़ रहस्य को सोच कर, रहे लखन खामोश॥
मन ही मन में सोचकर, निजको किया उपशांत।
समय भाव को जानकर, बोले अनुज इस भांत॥

लक्ष्मण—मुझे फेर क्या राम खुशी से, राज्य छोड़ वन जाता है
तो फिर खाना अवधपुरी का, हमको भी नहीं भाता है॥
झगड़ा और बढ़ा कर सब का, दिल ही सिर्फ दुःखाना है
यदि दूल्हा ही निज सिर फेरे, फिर किस का व्याह रचाना

दोहा

यही सोच के लखन फिर, गये पिता के पास।
नमस्कार कर चरण में, कहा इस तरह भाष॥

दोहा (लक्ष्मण)

पानी में मछली सुखी चकवा चकवी साथ।
राम चरण लक्ष्मण वहां ज्यों रवि साथ प्रभात॥
पिता मुझे आज्ञा दीजे, मैं राम संग वन जाऊंगा।
सेवा होगी भाई की, दुःख में निज शीस उठाऊंगा॥
ताज मुबारिक भरत वीर को, आपका ऋण उतारा सिर से.
तात मात खुश हम भी खुश, जैसे किसान खुश जलधर से।
छिन पल विरह राम का मुझ से, पिता सहा नहीं जाता है।

पान किया जो क्षीर मेरा, कर्तव्य पालन कर देना ।
तन बेशक लग जाय, किन्तु नहीं दगा भ्रात को देना ॥
पड़े कष्ट जो आन कोई, आगे हो कर सह लेना ।
मानिन्द पिता के रामचन्द्र, माता सीता को कहना ॥

गाना नं० २६

(सुमित्रा का लक्ष्मण को उपदेश)

प्रेम हृदय नहीं जिसके, वह शत्रु न भाई है ॥
प्राण चाहे चले जायें न छोड़े संग भाई है ॥ ॥
नाश दुनिया सभी जानों, शेष इसमें न कोई है ।
चले नेकी बदी मग में, जिस्म की भी सफाई है ॥२॥
सहारा कष्ट में देना, यह है कर्तव्य भाई का ।
यदि आँखें चुरायें तो, लगेगी मुँह पे काई है ॥३॥
करो तन मन से वन जाकर, मेरे सुत राम की सेवा ।
मेरी शिक्षा कुंवर तूने, यदि हृदय जमाई है ॥४॥
रहा अब तक तो तू भाई मगर चाकर हो अब रहना ।
हुकम सियाराम का लेना, कुंवर मस्तक चढ़ाई है ॥५॥

दोहा (लक्ष्मण)

माता तन मन खुश हुआ, सुने तुम्हारे बैन ।
करूं मैं सेवा राम की, जैसे मस्तक नैन ॥
जैसे माली पौधे को, जल देकर खुश रखता है ।
या किसान के लिए समय पर, बादल आन बरसता है ॥
ऐसे खुश रक्खूं भाई को, जैसे माता फूल खिला ।
यह चीज नहीं दुनिया में जैसा कि मुझ को वीर मिला ॥
जब तक जीता हूँ भाई को, मैं कष्ट नहीं पहुंचन दूंगा ।
पहिले होगी आज्ञा पालन, कुछ मन में नहीं सोचन दूंगा ॥

सब देव खुशी होते हैं, जैसे देख सुमेरु नन्दन वन ।
बस ऐसे हम सब को होगा, बन में माता आनन्द अमन ॥

दोहा (लक्ष्मण)

सूर्य वंशी मात मैं, क्षत्राणी का शेर ।
अब इस मुख से क्या कहूं बतलाऊगा फेर ॥
बतलाऊंगा फेर अयोध्या, जब वापिस आऊंगा ।
कष्ट जो होगा सिया राम का, अपने सिर उठाऊंगा ॥
तेल बिन्दु सम नाम राम का, जग में फैलाऊंगा ।
तब ही मात सुमित्रा का मैं नन्दन कहलाऊंगा ॥

दौड़

शीस जब तक धड़ पर है, राम को कौन फिकर है ।
चरण जहाँ जहाँ धरेंगे, बड़े बड़े भूपति मात चरणों में आन गिरेंगे ।

छंद

पीठ ठोकी मात ने, सिर पर धरा शुभ हाथ है ।
फिर जा के चरणन मे गिरा, जहाँ थी कौशल्या मात है ॥
सिर झुका कर अनुज ने जो बात थी सारी कही ।
सुन दुखी रानी हुई, कुछ होश न तन की रही ॥
चेत जब मन को हुआ, लक्ष्मण से यों कहने लगी ।
आंसुओं की धार भी, आंखों से तब बहने लगी ॥

दोहा (कौशल्या)

गोला टूटा गजब का, मेरे ऊपर आन ।
राम संग तू भी चला, जाते नहीं.. प्राण ॥

बहरे तवील गाना नं० ३०

कौशल्या कालक्ष्मण से प्रश्नोत्तर।
बेटा तू भी चला सीयाराम गये।
हो उदय कौन से आये मेरे कर्म॥
मुझे छोड़ अकेली इधर तुम चले।
पीछे पति देव धारेंगे संयम धर्म॥
पीछे किसका सहारा मुझे है बता।
कैसे थामूं जिगर है मुझे यह भर्म।
रामचन्द्र के संग क्यों तू वन में चला।
नहीं होता है कहने से तू भी नर्म॥

लक्ष्मण—माता क्षत्राणी होकर तू कायर बने।
यह समझ तेरी भी मुझको भाई नहीं।
भरत शत्रुघ्न दोनों तेरी सेवा में,
राजधानी व प्रजा पराई नहीं।
यह मालूम तुझे बस विना राम के,
मेरे जीने की कोई दवाई नहीं।
कैसे तात प्रतिज्ञा हो पूरी बता,
तेने गौरव में दृष्टि जमाई नहीं॥

दोहा (लक्ष्मण)

क्षमा दोष सब कीजिये, चरण नमाऊं माथ।
जाऊंगा मानूं नहीं, मात भ्रात के साथ॥
छोड़ कहो चाहे लाख मेरा दिल ही वनवास के अन्दर है।
श्रीराम कलंदर समझ मात, लक्ष्मण तो पालतू बन्दर है॥
दिल डोरी है पास राम के, मरजी जिधर घुमावेंगे।
एक विना राम के प्राण मात मेरे तन में नहीं पावेंगे॥

दोहा

सुन बातें सब अनुज की, रानी मन हैरान ।
रहना इसने है नहीं, समझा दिल दरम्यान ॥

मौन आकृति देख मात की, लक्ष्मण ने प्रणाम किया ।
श्रीरामचन्द्र के पास गए, फिर चरण कमल में ध्यान दिया ॥
प्रेम भाव से रामचन्द्र जी, सीता को समझाते हैं ।
वनवास के दुख भयानक हैं, सब भेद खोल दर्शाते हैं ॥

दोहा (राम)

ऐ सीते मेरी तरफ जरा कीजिये गौर ।
महलों में बैठी रहो वनखंड में दुख भोर ॥

घन खंड मे दुख घोर देख भय जान निकल जावेगी ।
जनकपुरी मे मात तुम्हारी, सुन के घबरावेगी ॥
कहा मान अय जनक सुता, जाकर के पछतावेगी ।
चौदह वर्ष का लम्बा, काल वहाँ दारुण दुख पावेगी ॥

गाना नं० ३१ (रामचन्द्र का सीता को समझाना)

बैठी राज महल सुख भोगो, बन खंड मे दुख पावोगी ।
जहाँ गर्जत है सिंह बघेरे, दारुण दुख तूफान घनेरे ॥
शयन जमीं का रात अंधेरे, कैसे प्राण बचाओगी ॥१॥
ज्येष्ठ भाद्रपद धूप करारी, वर्षा नदी गहन अति भारी ।
गिरी गुफा दुर्गम दुखकारी, देख-देख दहलावोगी ॥२॥
इतर फुलेल न अटवी घन में भोजन मन वांछित कहा वन में ।
चमक-दमक यह रहे न तन में, फिर क्या यत्न बनाओगी ।३।
आदम की न मिले शक्ल है, कहीं खारा कहीं कड़वा जल है ।
यह सुख वहाँ नहीं बिल्कुल है, कैसे दिल बहलाओगी ॥४॥

दासी सेवक संग सहेली, उस वन में फिर-फिर अकेली ।
कहा मान सुन्दर अलबेली नाहक दुख उठाओगी ।।५।।
मात पास तुम रहो पियारी, श्री जिनधर्म करो सुखकारी ।
सोचो मन में जनक दुलारी, 'शुक्ल' परम सुख पाओगी ।।६।।

दोहा

शिक्षा सुन श्रीराम की, सिया ने किया विचार ।
विनय पूर्वक फिर इस तरह, बोली वचन उचार ।।

गाना नं० ३२ सीता का श्रीराम को कहना

यह क्या वनों का दुख पिया, अन्तक मुझे हन जायेगा ।
जो भी मुख से कह चुकी, मेरा न यह प्रण जायेगा ।।१।
राज मन्दिर और दास दासी, सब यहां रह जायेंगे ।
राख मट्टी जिस्म चमकीला, मेरा बन जायगा ।।२।
संग की सखी सहेली, मात पितु सासु श्वसुर ।
काल फाँसी दे लगा सग, कौन साजन जायेगा ।।३।
धर्म मेरा है पति के संग, सुख दुःख में रहूं ।
इससे हुआ विपरीत तो, दुःख में यह तन भुन जायगा ।।४।।
तन है सेवक हर मनुष्य का, प्रेम इससे जो करे ।
एक दिन देगा दगा वस, वन यह कृतघ्न जायगा ।।५।।
दुःख पति ! या सुख का मिलना, पूर्व कर्म अनुसार है ।
भागें कर्म पुरुषार्थ आ जब सामने तन जायगा ।।६।।

दोहा

राम जहाँ वहाँ पर सिया, इसमें भेद न जान ।
जायोगे यदि छोड़ कर, तो नहीं बचें प्राण ।।
सीता का प्रस्ताव सुन, हुए राम लाचार ।
खड़े-खड़े चुपचाप हो. ऐसा किया विचार ।।

राम—सीता से चौदह वर्षों का विरह सहा नहीं जायगा।
अब यदि और कुछ अधिक कहा तो इसका तन मुर्झायगा॥

पृथक् नहीं घन से बिजली, या जैसे तन की छाया है।
भरे स्वयंवर में मुझ को, इसने निज पति बनाया है॥

है पतिव्रता सती प्रेम, मेरे संग है इसका भारी।
जाव जीवन पर्यन्त पति के, शरणागत होती नारी॥

क्षत्रिय का यह धर्म नहीं, शरणागत को दुःख में डारे।
जिस का लिया साथ उसको, देना सुख-दुःख निज सिर धारे॥

फिर बोले अच्छा वैदेही, मन में न सोच-विचार करो।
यदि चलो वनों में खुशी आपकी, या घर में आराम करो॥

सन्तोषजनक सुन वचन सिया ने, अपना शीश नमाया है।
फिर रामचन्द्र ने अनुज भ्रात को, ऐसा वचन सुनाया है॥

दोहा (राम)

कारण वश मैं तो चला, भाई वन मंझार।
किस कारण तुम भी खड़े, पहले ही तैयार॥

सन्तोष दिलाना माता को, और सावधान होकर रहना।
तुम अवधपुरी में करो सैर, किस कारण वनका दुःख सहना
चौदह वर्ष समय लम्बा, वन का दुःख लक्ष्मण भारी है।
यहाँ पुरी अयोध्या में झुरझुर, दुख पायेगी महतारी है॥

जिनके संग पाणि ग्रहण किया, वह सब उदास हो जायेंगी।
अब भाई लक्ष्मण विन तेरे, वह कैसे समय वितायेंगी॥

सब राजकार्य साथ भरत के, भाई तूने करना है।
और तेरे विन माताओं ने भी सवर न दिल में धरना है।

(राम का लक्ष्मण से कहना)

गाना नं० ३३

मत जावो मेरे संग भाई लखन ॥ टेर ॥

चौदह वर्ष हमें वन में रहना, मान हमारा वीरन कहना ।
वह है जंगल बियाबान कठिन ॥१॥

भेष सादगी तन पर धारूं, प्रण किया सो कभी न हारूं ।
जर वस्तर मैं सब उतारे वसन ॥३॥

दोहा

लक्ष्मण ने ऐसे सुने, रामचन्द्र के वैन ।
शीस झुका कर जोड़ कर, लगा इस तरह कहन ॥

लक्ष्मण—आज्ञा आपकी न मानूं, मेरा यह दुष्ट विचार नहीं ।
पर विरह आपका सहने को, भाई मैं भी तैयार नहीं ॥
जिस जगह राम वहाँ लक्ष्मण है, बिन राम मेरा नहीं जीना है ।
इस पुरी अयोध्या का मुझको, नहीं भाता खाना पीना है ॥
किसी शून्य चित्त को समझाने में, निष्फल समय बिताना है ।
कृपण से कोई करे याचना, तो वहां से क्या पाना है ॥
कर्ण बधिर को सुरताल सहित, निष्फल गायन सुनाना है ।
वृथा क्यों अन्धे के आगे, नयनों से नीर बहाना है ॥
बस ऐसे ही लक्ष्मण को समझाने में, समय बिताना है ।
अब लाख कहो या कराड़, आप बिन मेरा नहीं ठिकाना है ॥
चलो देर मत करो मग, चलने को मैं हूं खड़ा हुआ ।
यह धनुषबाण कर सह शस्त्रों के, वस्तर तन पर पड़ा हुआ ॥

दोहा

इतना कह श्रीराम जी, गये जहां थी मात ।
हाथ जोड़कर चरण में रख दिया अपना माथ ॥

मातृ भक्त का देख हृदय, माता का हृदय पिघल गया ।
कौशल्या के हृदय से मानो, मोह एक दम निकल गया ॥
श्रीराम के सिर पर हाथ फेर, बोली बेटा क्या चाहता है ।
तु पुण्यवान् सब हृदयों की, मुरझाई कली खिलाता है ॥

दोहा

हाथ जोड़ श्रीराम जी, बोले वचन उचार ।
बड़े मात करते सदा, छोटों पर उपकार ॥
क्या नहीं जानती मात, राम एक नारहनी का बच्चा है ।
चाहे यह पृथ्वी उलट जाय, किन्तु हृदय नहीं कच्चा है ॥
माता चाहे वज्र के सम, अपना हृदय बना लेवे ।
पर बच्चे के रोने से वहीं, वज्र का हृदय पिघल जावे ॥
माता बिन बच्चों को इस, दुनिया में कोई शरण नहीं ।
आपकी कृपा बिन माता, पूरा होगा ये प्रण नहीं ॥
बच्चा हूं तेरा अभी फरस पर, रूस के लेट लगाऊंगा ।
अभी देखना फिर माता मैं, आपसे आज्ञा पाऊंगा ॥
तुम मेरे हित की कहते हो, इस बात को खूब जानता हूं ।
उपकार तेरा नहीं दे सकता, इस बात को माता मानता हूं ॥

दोहा

ऊँच नीच सब सोचकर, बोली वचन उचार ।
माता विदुषी के वचन, ये शुभ समय अनुसार ॥

नर्क कुण्ड पर नारी और पर पुरुष दुःखों का सागर है।
शुक्ल अन्य शिक्षा मेरी, शुभ सदाचार सुख आगर है॥
मूल विने शुद्ध प्रेम ऐक्यता, सब सुख इसमें समा रहे।
स्वाधीन सभी सृष्टि उसके, यह त्रिक जिस हृदय जमा रहे॥
मैं पुत्रवती हूँ समझ लिया, मैंने सब आज परीक्षा से।
पुण्य प्रबल तुम्हारा होगा, बेटा मेरी शिक्षा से॥
मेरी सेवा में भरत पुत्र है, आपना फिकर कोई करना।
इस भव परभव सुखदाता है, बेटा परमेष्टी का शरना॥

दोहा

सार भरी शिक्षा सुनी, माता की जिस वार
राम लखन सीता हुवे, तीनों खुशी अपार॥

—***—

वन प्रस्थान

दोहा

रंग ढंग सब सोच के, हुए राम तैयार।
शोकाकुल चहुं ओर से, आ पहुँचे नरनार॥

वस्त्र शस्त्र पहिन राम ने, धनुष बाण निज हाथ लिया।
इस कष्ट समय में संग राम के, लक्ष्मणजी ने प्रस्थान किया॥
फिर माता कैकेयी के चरणों में, तीनों ने सिर नाया है।
और अन्त दिलासा दे सबको, श्रीराम ने कदम बढ़ाया॥

दोहा

छोड़ राज और ताज को, चले राम वनवास।
नरनारी सब ले रहे, लम्बे-लम्बे स्वास॥

जब चरण राम ने बाहर किया, सहसा सन्नाटा छाया है।
तब पत्थर दिल नरनारी के भी, जल नेत्रों में आया है॥
व्यापार शीघ्र सब बन्द हुआ, क्या दफ्तर और कचहरी है।
नयनों की माला खड़ी हुई, चले राम करी न देरी है॥
मन्त्री और राज कर्मचारी सब, पीछे है हज्जूम बड़ा।
और आगे का कुछ पार नहीं, सब जन समूह अति अड़ा खड़ा॥
सब नत मस्तक हो खड़े हुवे, तन मन से सेवा चाहते हैं।
दक्षिण कर से स्वीकार राम, आगे को बढ़ते जाते हैं॥
बाजार दोतर्फी छज्जों पर, अगणित माताएं बहनें खड़ी :
नयनों से आँसू बरसा रहे, जैसे श्रावण की लगी झड़ी॥
यह दृश्य देख कैकेयी रानी का, हृदय कमल उछलता है।
बस मौन चित्र की तरह खड़ी, मुख से नहीं बोल निकलता है॥

छन्द

आश्चर्य सीता की खुशी को, देख कर नरनार हैं।
मन ही मन में कैकेयी, को दे रहे धिक्कार हैं॥
महा जन समूह नरनार का, सिया राम संग चलने लगा।
तब देख कौशल्या कुंवर, यह हाल यूं कहने लगा॥

राम शिक्षा

दोहा (राम)

नेत्रों से जल बहा रहे, बनते क्यों नादान।
निष्कारण तुम खुशी में, लाये आर्त्तध्यान॥
क्यों यह आर्त्तध्यान, सैर मैं तो वन को जाता हूं।
तुम जाओ वापिस अवधपुरी, मैं सबको समझाता हूं॥

कर्तव्य पालन करो सदा, हृदय से यह चाहता हूं।
है प्रजा पुत्र दशरथ की, मैं भी सुत कहलाता हूं॥

दौड़

रक्खो सभी एकता, ध्यान शुभ सत्य विवेकता।
एक दिन यह आवेगा, इस भव परभव लाभ गौरव,
दुनिया में छा जावेगा॥

दोहा

ग्राम धर्म की व्यवस्था, शुद्ध करो सब कोय।
नगर धर्म कहा दूसरा, प्रेम सभी संग होय॥

धर्म तीसरा राष्ट्र लिये, अर्पण सब कुछ करना चाहिये।
यदि कोई विपत्ति आ जावे तो देश के हित मरना चाहिये॥
चौथे पाखण्ड को काट छांट, व्रत रक्षा करना अच्छा है।
जो भी इनसे विपरीत चले, वह निर्बुद्धि या बच्चा है॥
निज कुल के गौरव को देखो, यह धर्म पांचवा सुखदाई।
सब त्यागी और गृहस्थ का,इसी में समावेश दोनों का ही॥
समूह धर्म छठा बतलाया, क्योंकि इसमें शक्ति है।
जिसने इसको कर दिया भंग, समझो उसकी कमबख्ती है॥
फिर संघ धर्म का पालन करना, सप्तम बुद्धिमानी है।
और किसी अंश में श्री संघ की, आज्ञा भी आप्तवाणी है॥
अष्टम है श्री श्रुत धर्म, क्योंकि यह ज्ञान खजाना है।
बस इसके पालन रक्षण में ही, सर्व सुखों का पाना है॥
सम्यक्त्व चरित्र धर्म नवमा, सब कर्ममैल को धोना है।
विष क्रोध मानमद काट फेंककर, अमृत फल को बोना है॥
जो विपरीत चले इन धर्मों से, न उन्हें कभी सुख होना है।
अज्ञान तिमिर में फंसे हुओं को, रहे शेष बस रोना है॥

और विघ्न पन्द्रहवां महा बुरा, होना पक्षान्ध कहाता है।
फिर वंचित सब लाभों से, होकर नीच गति जा पाता है॥

दोहा (राम)

उन्नत होने में सदा, शक्ति ही प्रधान।
शक्ति हीन नर को गिना, बिल्कुल पशु समान॥
ग्यारह हैं शक्ति सभी, पुण्यवान् में होय।
जिसमें न हो एक भी, वृथा जन्म रहा खोय॥
शक्तिहीन का दुनिया में, गौरव एक तुच्छ तमाशा है।
घुल जाय जरा से पानी में, जैसे कि बड़ा पताशा है॥
शक्तिहीन मनुष्य इस जग में, सब की ठोकर खाते हैं।
और न्याय न्याय कहते कहते, बेइज्जत हो मर जाते हैं॥

दोहा

ध्यान लगा करके सुनो, ग्यारह शक्ति महान्।
जो इनको धारण करे, अन्त लहे निर्वाण॥

आदर्श गुणों को ग्रहण करे, यह गुण माहात्म्या शक्ति है।
गुणी जन की सेवा करना, शक्ति योग्य दूसरी जंचती है॥
स्मरण शक्ति तृतीया है, उपकार कभी न भुलाना है।
कृतघ्न बन कर सर्वस्व हार, आत्म को नहीं रुलाना है॥
छोटे से छोटा बन होकर, यह दास्या शक्ति चौथी है।
नहीं तजा मान जिस प्राणी ने, तो उसकी किस्मत सोती है।
शुभ सख्या शक्ति पंचम है, सबसे शुद्ध मैत्री भाव करो।
है कान्ति तेज प्रभाव छठे, निज निर्बलता का पाप हरो॥
शुभ वात्सल्यता प्रेम भाव, सप्तम सबका सनमान करो।
है आत्म समर्पण अष्टम शक्ति, धर्म पे सब कुर्बान करो॥

तल्लीन रही नवमी शक्ति, सब कार्य सिद्ध कर देती है।
बस और तो क्या उस प्राणी को, शिव रमणी तक वर लेती है॥
धर्म समाज ज्ञानहानी का, जिसके दिल में खेद नहीं।
ऐसे छद्मस्थ प्राणी में, और पशु में कोई भेद नहीं॥
सर्वज्ञ अवधिमनःपर्यय ज्ञानी, दृष्टिवाद पूर्व धारी।
इनके विच्छेद होने पर समदृष्टि, को होता दुःख भारी॥
उक्त साधनों के वियोग का, जिस प्राणी मे संचार नहीं।
इन शक्ति हीन मूढात्म का होता कहीं बेड़ा पार नहीं॥
एक रूपा शक्ति कही ग्यारहवीं, वरते सब व्यवहारों में।
तन जन क्या कारोबार रूप विन, श्राव नहीं घर बारों में॥

दोहा (राम)

आप्तवाणी हृदय धर, लगो सभी निज काम।
अवध पुरी में तुम सुखी, हमको सुख वन धाम॥

निर्भयता से अवध पुरी में, भरत भूप की शरण रहो।
और जैसा राम भरत वैसा, इसमें न रंचक फरक लहो॥
बस न्याय पथ पर डटे रहो, सोचो उपाय नित्य वृद्धि का।
शुभ उद्यम शील बनो सारे, अमोघ शस्त्र यह सिद्धि का॥

दोहा

शिक्षा दे श्रीराम ने, किया गमन में ध्यान।
जन समूह ने भी किया, संग ही संग प्रस्थान॥

मकना तीस खेंच लोहे को, अपने संग मिलाता है।
ऐसे ही अवध वासियों का दिल, राम संग ले जाता है॥
हम कैसे हाल कहें सारा, न शक्ति कलम जबां में है।
शुद्ध क्षीर नीर सम प्रेम राम, प्रजा में सहज स्वभावें है॥

मुश्किल से वापिस करके फिर, आगे चरण बढ़ाये हैं।
इस प्रेम विरह रूपी सागर में, सब नर नार समाये हैं॥

दोहा

ग्राम-ग्राम के अधिपति, विनती करें अपार।
प्रभु यहां कृपा करो, आपका सब घर बार॥
श्रीराम सबको समझा कर, आगे को बढ़ते जाते हैं।
सब ग्राम नगर पुर पाटन तज, रजनी जहां आमन लाते हैं।
अब इधर अवध में दशरथ नृप ने, भरत पुत्र बुलवाया है।
और राज भार देने को नृप, मंत्रीश्वर ने समझाया है॥

भरत का राज्य

दोहा

राज्य न लेवे भरत जी, आक्रोशे निज मात।
सियाराम और लखन का, विरह सहा नहीं जात॥

छन्द

चारित्र लेने के लिये, भूपाल शीघ्रता करे।
दरबार समझाया भरत नहीं, ताज अपने सिर धरे॥
ऋन सब निष्फल हुआ, कुछ काम बन आया नहीं।
सुन भी गया दशरथ कहे, मुनि व्रत मुझे आया नहीं॥
परिवार सब दुख में पड़ा, रानी का हाल खराब है।
राम लक्ष्मण के बिना, सुत भरत भी बेताब है॥
अब भूप ने सोचा कि वापिस, राम को बुलवाय लूं।
सोच कर युक्ति कोई, चारित्र में चित्त लाय लूं॥

दोहा

आज्ञा पा महाराज की, हो झटपट तैयार।
मंत्रीश्वर वहाँ से चला, जरा न लाई वार॥
जरा न लाई वार तुरन्त, पश्चिम दिशि को पै धाया।
मिले दूर कानन में जा, मंत्री ने शीश नमाया॥
जो था मतलब खास, अवध का सारा हाल सुनाया।
बोले अवध पुरी में नृप ने, आपको जल्द बुलाया॥

दौड़

चलो अब देर न लावो, क्लेश उपशान्त बनाओ।
ख्याल कुछ करो इधर का होवें सब दुख दूर चरण जहाँ
हो गरीब परवर का॥

दोहा (राम)

वापिस जा सकता नहीं, हूँ मंत्री लाचार।
अब कुछ वर्षों के लिये, है वन का आधार॥
तुम जाओ अवध में भरत वीर को,
वचन मेरा यह कह देना।
अब तू अपने को राम समझ,
और मुझको भरत समझ लेना॥
श्री दशरथ नृप घर हम चारों, सुत एक सरीखे जाये हैं।
हम सबको यह स्वीकार भूपति, भरत वीर शोभाये हैं॥
मात पिता को आज तलक का क्षेम कुशल बतला देना।
सब यथायोग्य प्रमाण तात, माताओं को जतला देना॥
तुम भरत वीर को गद्दी पर, समझा करके बैठा देना।
और धूम धाम से छत्र लगाकर, ऊपर चमर झुला देना॥

छन्द

मानना भाई भरत को, तात के मानिन्द सभी ।
मेरा भी हृदय सर्द सुन सुन, करके होवेगा तभी ॥
वचन यह कह कर चरण, श्री राम ने आगे धरा ।
सामन्त मन्त्री जन सभी के नेत्रों में अति जल भरा ॥
प्रेम हृदय में भरा सब संग ही संग में चल रहे ।
विनती न मानी राम ने, सौ सौ खुशामद कर रहे ॥

दोहा

चलते चलते आ गई, नदी बह रहा नीर ।
फेर राम कहने लगे, बैठ नदि के तीर ॥

गाना नं० ३४

(राम का मंत्रीगण एवं सामन्तगण को समझाना)

बहुत आगये दूर मन्त्री, लौट अवध जाओ ॥टेर॥
वापिस रथ ले जाओ मन्त्री, मत ना घबराओ ।
तुम समस्त राज परिवार को, जाकर धीरज बधाओ ॥१॥
सामन्त होश कर मत रोवो, न नीर नैन लावो ।
वापिस तुम सब जाओ, अयोध्या हुक्म मेरा पाओ ॥२॥

दोहा

समझा कर या राम जी, बढ़े नाव की ओर ।
निषाद राज अति खुश हुआ, जैसे चन्द्र चकोर ॥

गाना नं० ३५

आन प्रभु ने दर्श दिखाये सफल कर्म मेरे, हां सफल कर्म मेरे ।
भिरन भिरने आ रही बेडी, गाय रही है महिमा तेरी ।

संग सिया लेरे, हां संग सिया लेरे ॥१॥
दादुर मोर पपईया बोला, श्री राम कुंवर का सादा चोला।
देव पवन देरे हाँ देव पवन देरे ॥२॥
केवट को अति खुशियाँ हो रही राम कृपा सब कष्ट खो रही।
उदय भाग्य तेरे हाँ उदय भग्य तेरे ॥३॥

दोहा

तीनो प्राणी हो गये बेड़ी में अस्वार।
इधर खड़ी जनता सभी रोवें जारों जार॥
खुशियों मे निषाद सब, गाते जावे गीत।
पुल का रास्ता छोड़ कर, हम से पाली प्रीत॥

गाना नं० २६ (सब मल्लाहों का)

दीना नाथ दयाल आज दर्श हमने पाये।
देख देख नैन सब के, प्रफुल्लित थाये ॥टेर॥
सहज सहज चालत नाव आपके ही गीत गाय।
मन में नाविकों के चाव, प्रभु घर आये ॥१॥
राम नाम से आराम, लखन करे सिद्ध काम।
जपत रहे आठों याम, सीता सुख दाये ॥२॥
तजा सत्य खातिर राज, वन को आप चले महाराज।
हमरे भी संवारन काज, प्रभु इधर आये ॥३॥
नित्य धर्म शुक्ल ध्यान, उदय होये भाग्य आन।
रंक घर आये महान, दर्शन विराजाये ॥४॥

दोहा

नदी पार जब हो गये, रामचन्द्र भगवान्।
जनक सुता श्री राम से, बोली मधुर जबान॥

मुद्रा मेरी निषाद को दे दीजे महाराज।
केवट को करदो खुशी प्राणपति सिरताज॥

श्री राम का था यही विचार उनका दरिद्र हर लेने का।
सरकारी जो कुछ था महसूल वो सभी माफ कर देने का॥
उस जनक सुता का भी कहना श्री राम को था मंजूर सभी।
दो नैन उठाकर केवटों को औदार चित्त ने कहा तभी॥

दोहा (राम)

निषाद राज आवो इधर यह लो आप इनाम।
सुन के यह कहने लगा अर्ज सुनो श्रीराम॥

(निषाद)

रघुकुल दिनेश काटो क्लेश, तुम केवट जग अवतारी हो।
मैं क्या इनाम तुम से मांगूं, भव तारण आप खरारी हो॥
मैं पार किया जल से तुमको, तुम पार करो दुखों से हम को।
जब केवट से केवट मिल गये, अब मेट दिया मेरे गम को॥

दोहा

केवट को करके खुशी, चले अगाड़ी राम।
पार खड़े जन कह रहे, यह जाते सुख धाम॥
जब राम दूर हुये दृष्टि से तो, जनता सभी निराश हुई।
मुख मंडल सब के मुर्झाये, जैसे ग्रीष्म की घास नई॥
जब विरह की अग्नि भभक उठी, तब नेत्र वर्षा करने लगे।
और लम्बे लम्बे श्वास छोड़, सन्तोष हृदय में भरने लगे॥

दोहा

परम विरहा शुभ शक्तिवान, थे सुयोग्य नरनार।
प्रजा और श्रीराम में, प्रेम था गूढ़ अपार॥

सब हुए उदास अवध में, वापिस आते हैं और रोते हैं।
हृदय में प्रेम उबाल उठे तो, अश्रुओं से मुंह धोते हैं ॥३
मुश्किल से चरण धरें आगे, है प्रेम राम में अड़ा हुआ
वह आ तो रहे हैं अवध पुरी, पर मन भ्रमता में पड़ा हुआ।

छन्द

प्रणाम करके बाद नृप को, वार्ता सारी कही।
हाल सुन राजा की जो थी अक्ल सब मारी गई ॥
भरत को अति प्रेम से नृप फेर समझाने लगे।
विघ्न मत डालो कुमर, सब भाव बतलाने लगे ॥
मान लो मेरा कथन, हित शिक्षा समझाऊँ तुझे।
कर उऋण मुझको धरो, सिर ताज बतलाऊँ तुझे ॥

गाना नम्बर ३७

(राजा दशरथ का भरत को समझाना)

लाल मेरे बेटा धारो सिर पे यह ताज ॥टेर॥
मानो वचन हमारा कर्त्तव्य पहिला तुम्हारा।
देवो मुझको सहारा धारूं संयम आज ॥
राम बन को सिधारा संग लक्ष्मण प्यारा।
सबने यही उचारा देवो भरत को राज ॥२॥
यह सूर्य वंश कहाया, सबने वचन निभाया।
तुझे ख्याल न आया, सारा बिगड़े यह काज ॥३॥
मस्तक तिलक सजावो, अर्ति दूर न साध्यो।
शुक्ल ध्यान ध्यावो, भाषा श्री जिनराज ॥४॥

दोहा (भरत)

लाख कहो चाहे पिता, नहीं धारूं सिर ताज।
मैं चाकर बन के रहूँ, राम करेंगे राज ॥

राम करेंगे राज्य अभी, वापिस वन से लाऊँगा।
चलना जिसने चलो, नहीं मैं अभी चला जाऊँगा॥
रामचन्द्र के दर्श किये बिन अन्न जल नहीं पाऊँगा।
रामचन्द्र को लाकर, सिंहासन पर बैठाऊँगा॥

दौड़

मुझे हर बार सताते, जले को और जलाते।
भ्रात वन वन दुख पावे, मुझे फेर बतलावो कैसे राज्य सुख भावे।

छन्द

यह देख हालत कैकयी यों दिल ही दिल कहने लगी।
और आँसुओं की धार, नेत्रों से अधिक बहने लगी॥
राज्य यह बिन राम के, चलता नजर आता नहीं।
सोचा था जिसके वास्ते, सो भरत कुछ चाहता नहीं॥
अयश क्या संसार में; निन्दा हमारी हो गई।
जो कीर्ति अनमोल थी, वह आज सारी खो गई॥
अपयश हुआ सब जगत् में, फिर कार्य न कोई सरा।
भंग डाला रंग में उसका, यह फल भरना पड़ा॥

दोहा

कर विचार यह कैकेयी, आई दशरथ पास।
हाथ जोड़ कहने लगी, जो मतलब था खास॥

दोहा (कैकयी)

आज्ञा मुझको दीजिये, प्राण पति जग नाथ।
लाऊँ राम बुलाय के, चलूं भरत के साथ॥
अब जैसे भी हो सका राम को, पुरी अयोध्या लाती हूँ।
और बने काम जिसतरह नाथ, वैसा ही करना चाहती हूँ॥

यह राज ताज दे रामचन्द्र को, आप मुनिव्रत ले लीजे।
श्री राम लखन सीता को लाऊं, आज्ञा मुझको दे दीजे॥

दोहा

कैकेयी के सुन कर वचन, बोले दशरथ भूप।
अक्ल ठिकाने आ गई, सोची युक्ति अनूप॥

दोहा (दशरथ)

बिना विचारे जो करे, सो पीछे पछताय।
व्यवहार यहाँ बिगड़े सभी, अशुभ कर्म बन्ध जाय॥

गाना नं० ३८

(राजा दशरथ का कैकेयी को उपालम्भ देना)

गजब तूने किया किसका, यह किसको हक दिलाया है।
मैं जिसके दर्श से जीऊं, उसी का दिल दुखाया है॥ १॥
समझ कर मांगती वरदान, तू क्यों हो गई नादान।
अन्त पछतायेगी क्यों आज, गौरव को गिराया है॥ २॥
नियत यह हो चुका सब कुछ, तिलक श्री राम को होगा।
अवध की शुद्ध भूमि में, यह क्यों उल्लू बुलाया है॥ ३॥
भरत को राज्य देने से, नियम सब भंग होते हैं।
तू मंगल में अमगल करके, क्यों हृदय जलाया है॥ ४॥
तेरा अपयश मरण मेरा, नहीं इसमें कोई संशय।
आज व्यवहार को तज कर, 'शुक्ल' को क्यों लजाया है॥५॥

दोहा

आज्ञा ले निज नाथ की, चली राम के पास।
भरत मंडली और कैकेयी, हो रहे अति उदास॥

चपलगति रथ बैठ सभी, अति तेजगति से धाये हैं।
थे तीनों तरु की छाया में, और नजर दूर से आये हैं॥
उधर राम सीता लक्ष्मण ने, दिल में यही विचार किया।
वह मात कैकेयी आती है, झट आगे आ सत्कार किया॥
फिर उतर यान से मिले परस्पर, खुशी का न कोई पार रहा।
लघु भरत राम के चरणों में, रो रो के आंसू डाल रहा।
और बोले अय भाई मनसे, तुमने क्यों मुझे विसारा है।
अब चलो अवध में राज करो, चरणों का हमें सहारा है॥
श्री रामचन्द्र ने माता के, चरणों में, शीश झुकाया है।
फिर बोले माता किस कारण, इतना यह कष्ट उठाया है॥
सीता आन झुकी चरणों में, विनय भाव दर्शाती है।
फिर लक्ष्मण ने प्रणाम किया, कैकेयी जल नैन बहाती है॥

छंद

हाथ सबके सिरपे धर धर, प्रेम माता कर रही।
आंसुओं की धार भी, नेत्रों से नीचे झर रही॥
बोली नहीं है दोष अन्य का, मेरा ही खोटा भाग्य है।
जिन्दगी पर्यन्त मुझको, लग चुका यह दाग है॥
अवध में चलकर कुमर, आर्ति सभी हर लीजिये।
तप्त हृदय मात का शीतल, कुमर कर दीजिये॥
मुझ सी पापिन और, न दुनियां में कोई नार है।
रात दिन झुरती कौशल्या, अवध दुख मंझार है॥

दोहा (कैकेयी)

मेरी गलती पर नहीं, करना चाहिये ध्यान।
सागरवत् गम्भीर तुम, मेरे सुत पुण्यवान्॥

उल्टी मति हो नार की, तुम सागर गम्भीर।
मात पिता की अय कुमर, चलो बंधावो धीर॥

अब कहना मानो भरत वीर का, चलो अवध का राज्य करो।
मैं हूँ निपट नादान मेरा अपराध, क्षमा सब आज करो॥
सुत भरत न लेवे राज्य अवध का, सभी तरह समझाया है।
इस कारण फिर आकर के तुम को वृत्तान्त सुनाया है॥

दोहा (राम)

माता सब कर फैसला, फिर आया बनवास।
किस कारण फिर हो गया, भाई भरत उदास॥
भरत राम में फरक समझ, मेरी में कुछ नहीं आता है।
दे दिया पिता ने राज भरत को, क्यो नहीं हुक्म बजाता है।
पितु प्रतिज्ञा पूर्ण करने को, यह ढङ्ग बनाया था।
सब राज्य भरत को दे करके, मैं सैर बनों की आया था।
अवधपुरी में अब जाने को, माता मैं तैयार नहीं।
शुद्ध क्षत्रिय कुल को दाग लगे, तुमने कुछ किया विचार नहीं॥
कर्तव्य हमारा वचन पिता का, जो भी कुछ हो सिर धरना है।
भरत अयोध्यापति और हमने कुछ वन में विचरना है॥

दोहा (भरत)

भरत-भरत क्या कह रहे कहा न मानूं एक।
अय भाई मुझ को कहां हुआ राज्य अभिषेक॥
मुझे कहां अभिषेक राज का, हुआ जरा बतलाओ।
फंसू न हरगिज झगड़े में चाहे, लाखों चाल चलाओ॥
मंत्री लक्ष्मण ताज आप सिर, चाकर मुझे बनाओ।
अब चलो अवध में अय भाई! सब आर्त ध्यान हटाओ॥

दौड़

ध्यान मेरा चरणन में, नहीं जाने दूं वन में।
चलो अब देर न लावो, सिंहासन पर बैठ मुझे भी
ड्योढ़ीवान बनाओ॥

राज्याभिषेक

दोहा

उसी समय श्रीराम ने, करी इशारत बात।
सीता ने कलशा नीर का, दिया राम के हाथ॥

भरत वीर के शीश राम ने, कलशा तुरत दुलाया है।
कहा अवधपुरी का नाथ, भरत राजा यह शब्द सुनाया है॥
यह मन्त्रीश्वर भी साक्षी है, जो राज्याभिषेक किया हमने।
जो भ्रम भूत सब दूर हुआ, अब तो स्वीकार किया तुमने॥
अब अवधपुरी में जाकर मन्त्री, उत्सव अधिक रचा देना।
और सुखखबरी यह मात-पिता को, जाकर प्रथम सुना देना॥
सब अवधपुरी का मिलजुल कर, नीति से अपना राज करो।
कोई कष्ट आन कर पड़े हमें, दो खबर ना चित्त उदास करो॥
अविनय जो कुछ हुआ माता सो क्षमा सभी अब कर देना।
हम चलने को तैयार अगाड़ी, हाथ शीस पर धर देना॥
प्रणाम हमारी माताओं को, क्षेम कुशल सब कह देना।
तज कर आर्तध्यान शुक्ल, शुभ ध्यान हृदय में धर लेना॥

दोहा

प्रेम भाव से देर तक, हुई परस्पर बात।
माता ने लाचार हो धरा शीश पर हाथ॥

दोहा

पांच महाव्रत धार लो, पांच ही सुसतिमान।
राजन् ? गुप्ति तीन कर पहुंचो पद निर्वाण ॥

सुना भूल गुण संयम का, वैराग्य मजीठी रंग चढ़ा।
चरणों में करी प्रणाम फेर, ईशाण कोण की तरफ बढ़ा ॥
आभूपण सभी उतार भूप ने, केश लुंच कर डारे हैं।
मुखपति मुंह पर बांध मुनि हो, चार महाव्रत धारे हैं ॥
दीक्षा उत्सव के बाद सभी जन, निज-निज कारोबार लगें।
तज कर झूठा संसार मुनि तप संयम के व्यवहार लगे ॥
इस तरफ अवध का राज भरत नीति से खूब चलाते हैं।
बनवास में फिरते उधर, राम सिया लक्ष्मण हाल बताते हैं ॥

दोहा

फिरते हैं नित्य चाव से, मन में अति हुलास।
चित्रकूट में पहुच कर, किया राम ने वास ॥

शुभ समय बिताते हैं अपना, सन्ध्या और आत्म शोधन में,
श्रीराम माहात्म्य प्रगट हुआ, इस कारण सारे लोकन में ॥
फिर वहाँ से भी चल दिया राम, जब सीया का चित्त उदास हुआ।
अब ऋतु बसन्त भी आ पहुची, सारे जंगल में घास हुआ ॥

२६—वज्रकरण सिंहोदर

दोहा

आगे फिर इक आगया, अवन्ती वरदेश।
शुद्ध एक स्थान मे ठहरे रामनरेश॥

वटवृक्ष तले आसन लाये, जहाँ अति गहन शुभ छाया है।
कुछ देख हाल उस जंगल का, मन ही मन ध्यान लगाया है॥
क्या बाग और उद्यान यह दोनों अद्भुत रंग दिखाते हैं।
फूलों पर यौवन बरस रहा, पर मनुष्य नजर नहीं आते हैं॥

दोहा (राम)

उज्जड़ अब ही का हुआ; अय लक्ष्मण यह देश।
कोई मिले तो पूछिये, कारण कौन विशेष॥

थोड़ी देर के बाद, पथिक एक नजर सामने आया है।
कुछ हाल पूछने लिये अनुज ने, अपने पास बुलाया है॥
बोले अहो पथिक बतलाओ, किस कारण उज्जड़ देश हुआ।
सब आदि अन्त पर्यन्त कहो, तेरा भी क्यों दुर्भेस हुआ॥

दोहा (पथिक)

दारुण दुःख सुन लीजिये, पथिक कहे तत्काल।
जिस कारण उज्जड़ हुआ, बतलाऊं सब हाल॥

उज्जयनी एक नगर में, सिंहोदर राजान्।
भूपति आचरण न गिरें, आज बड़ा बलवान्॥
वज्रकर्ण एक और है दशांगपुर का भूप।
सिंहोदर ने आनकर, घेरा नगर अनूप॥

अब यथायोग्य प्रणाम किया, फिर आगे को चल धाये हैं।
यह विरह देख श्रीराम का, सब नयनों में जल भर लाये हैं॥
हो गये लुप्त जब दृष्टि से, फिर पीछे चरण हटाये हैं।
सब बैठ यान में तेज गति से, पुरी अयोध्या आये हैं॥
यहाँ आदि अन्त पर्यन्त भूप को, सभी वार्ता बतलाई।
होगया वचन पूरा ऋण उतरा, खुशी बदन में भर आई॥
फिर उसी समय अति धूमधाम से भरत पुत्र को राज दिया।
और अपना फिर इस दुनिया से, राजा ने चित्त उदास किया॥

छन्द

प्रजा को पुत्रों की तरह, अति प्रेम से नृप पालता।
देव है अरिहन्त और, निर्ग्रन्थ गुरु निज मानता॥
धर्म श्रद्धा है दयामय, ध्यान लेश्या शुभ सभी।
वीतरागी कथित शास्त्रो मे, न है शका कभी॥
सूर्य वशी सुयश पाया, नाम उज्ज्वल कर दिया।
वचन पूरा कर पिता का, कष्ट सारा हर लिया॥
देख शोभा कुमर की, राजा का हृदय सर्द है।
पूरा ही कर दिखला दिया, पुत्रों का जो कुछ फर्ज है॥

—※※※—

दशरथ दीक्षा

दोहा

संयम लेने के लिये, दशरथ हुआ तैयार।
हाथ जोड़ कहने लगी, आन कौशल्या नार॥

कौश०--सुत राम गये वनवास नाथ, तुम भी संयम ले जाते हो।
क्यों बने एकदम निर्मोही, कुछ ख्याल नहीं दिल लाते हैं॥

महारानी और वजीर सभी, पुत्र आदि समझाते हैं।
प्रभु उमर आखिरी में लेना, यदि संयम लेना चाहते हैं ॥

दोहा (दशरथ)

रानी उम्र संसार की, इसका आदि न अन्त।
उम्र शुरू करूं धर्म की, लहुं मोक्ष आनन्द ॥
लहुं मोक्ष आनन्द तजूं, अब ख्याल सभी इस घर का।
इस संसार का सम्बन्ध समझ, जैसे हैं मणि विषधर का ॥
कारीगर लें काढ़ इस तरह, जैसे कि फूल कमल का।
तजूं कषाय भजूं समता, जैसे स्वभाव चन्दन का ॥

दौड़

सभी संयोग अनित्य है, ज्ञान गुण इसका नित्य है।
करूं आत्म निर्मल हैं, पाकर केवल ज्ञान मोक्ष सुख
भोगूं सदा अटल है ॥

चौपाई

सत्यभूति मुनि पास सिधाये। चरण कमल में शीश झुकाये ॥
बोले भव दुख से प्रभु तारो। जन्म मरण का कष्ट निवारो ॥

दोहा

नृप का जब अणगार ने, देखा दृढ़ विश्वास।
तब ऐसे मुनिराज ने, किये वचन प्रकाश ॥

चौपाई--(सत्यभूति)

आश्रव रोक संवर को धारो।
बंध जान निर्जरा विचारो ॥
स्वम दम सम, त्रिक हृदय लाओ।
तप जपकर अरि कर्म उड़ाओ ॥

दोहा

पांच महाव्रत धार लो, पांच ही सुमतिमान।
राजन् ? गुप्ति तीन कर पहुंचो पद निर्वाण॥

सुना भूल गुण संयम का, वैराग्य मजीठी रंग चढ़ा।
चरणों में करी प्रणाम फेर, ईशाण कोण की तरफ बढ़ा॥
आभूषण सभी उतार भूप ने, केश लूंच कर डारे हैं।
मुखपति मुंह पर बांध मुनि हो, चार महाव्रत धारे हैं॥
दीक्षा उत्सव के बाद सभी जन, निज-निज कारोबार लगे।
तज कर भूठा संसार मुनि तप संयम के व्यवहार लगे॥
इस तरफ अवध का राज भरत नीति से खूब चलाते हैं।
बनवास में फिरते उधर, राम सिया लक्ष्मण हाल बताते हैं॥

दोहा

फिरते हैं नित्य चाव से, मन में अति हुलास।
चित्रकूट में पहुंच कर, किया राम ने वास॥

शुभ समय बिताते हैं अपना, सन्ध्या और आत्म शोधन में,
श्रीराम माहात्म्य प्रगट हुआ, इस कारण सारे लोकन में॥
फिर वहाँ से भी चल दिया राम, जब सीया का चित्त उदास हुआ।
अब ऋतु वसन्त भी आ पहुंची, सारे जंगल में घास हुआ॥

२६—वज्रकरण सिंहोदर

दोहा

आगे फिर इक आगया, अवन्ती वरदेश।
शुद्ध एक स्थान में ठहरे रामनरेश॥

वटवृक्ष तले आसन लाये, जहाँ अति गहन शुभ छाया है।
कुछ देख हाल उस जंगल का, मन ही मन ध्यान लगाया है॥
क्या बाग और उद्यान यह दोनों अद्भुत रंग दिखाते हैं।
फूलों पर यौवन बरस रहा, पर मनुष्य नजर नहीं आते हैं॥

दोहा (राम)

उज्जड़ अब ही का हुआ; अय लक्ष्मण यह देश।
कोई मिले तो पूछिये, कारण कौन विशेष॥

थोड़ी देर के बाद, पथिक एक नजर सामने आया है।
कुछ हाल पूछने लिये अनुज ने, अपने पास बुलाया है॥
बोले अहो पथिक बतलाओ, किस कारण उज्जड़ देश हुआ।
सब आदि अन्त पर्यन्त कहो, तेरा भी क्यों दुर्भेस हुआ॥

दोहा (पथिक)

दारुण दुःख सुन लीजिये, पथिक कहे तत्काल।
जिस कारण उज्जड़ हुआ, बतलाऊं सब हाल॥

उज्जयनी एक नगर में, सिंहोदर राजान्।
भूपति आचरण न गिरें, आज बड़ा बलवान्॥
वज्रकर्ण एक और है दशांगपुर का भूप।
सिंहोदर ने आनकर, घेरा नगर अनूप॥

पांच अणुव्रत और सात शिक्षाव्रत, धारण करते हैं।
और सातों कुव्यसन तजे तन मन, धन से पर कार्य करते हैं ॥
देव गुरु शुभ धर्मशास्त्र, चारों की पहिचान करें।
रत्नत्रय को धार, श्री मुनि सुव्रत को प्रणाम करें ॥
नवरत्न पदार्थ धार हृदय, अरि दुष्ट कर्म सब दूर करें।
अब हिंसा दोष बताते हैं, इस पर भी जरा विचार करें ॥
मदिरा मांस खाने वाले, अधो नरक में जाते हैं।
जो करे शिकार अनाथों का, वह जन्म मरण दुख पाते हैं।
दुख होता है दुख देने से, यह सर्वज्ञों का कहना है।
कोई जैसा बोवे बीज, उसी का वैसा ही फल लेना है ॥

गाना नम्बर ३६

(मुनिराज का राजा वज्रकरण को उपदेश देना)

तर्ज नाटक की

तुम सत्य धर्म को पालो, हरदम जान जान जान ।टेर।
जो सत्य धर्म को पाले, वह नरकादिक दुःख टाले।
जहाँ खड़े हैं तिरछे भाले, सत्य तू मान मान मान ॥१॥
यह राज पाऽ सुत भ्राता, नहीं संग किसी के जाता।
फिर परभव में दुःख पाता, सुन धर कान कान कान ॥२॥
जो विमुख धर्म से होता, वह सिर धुन धुन कर रोता।
कुछ मतलब सिद्ध नहीं होता, सुन धर ध्यान ध्यान ध्यान ॥३॥
जिन क्रोध मान मद मारा, और अष्ट कर्म को टारा।
हुआ शुक्ल ध्यान सुखकारा, मिले निर्वाण थाण थाण ॥४॥

दोहा

राजा ने ऐसा सुना, आत्म धर्म अनूप।
सम्यक्त्व शुद्ध धारण करी, बैठा हृदय स्वरूप ॥

निश्चय मैंने किया तुम्हें, यह कब खातिर में लायेगा।
अंगूठी कर से हटा कभी नहीं, आपको शीस निवाएगा॥

दोहा

पिशुन पुरुष के वचन सुन, जल बल हो गया ढेर।
क्रोधित सिंहोदर हुआ, जैसे भूखा शेर॥
सिंहोदर कहने लगा, अब आ पहुँची रात।
प्रातः काल जाकर करूं, वज्र कर्ण की घात॥
सिंहोदर जाकर लगा, करने भोजन पान।
किसी पुरुष ने कह दिया, वज्रकर्ण को आन॥

(रामचन्द्र पथिक से)

बोले राम यह कौन मनुष्य, जिस गुप्त भेद सब पाया है।
वज्रकर्ण के पास पहुच जिन, सभी हाल बतलाया है॥
ज्ञात तुम्हें है तो यह भी, कहदो, हम सुनना चाहते हैं।
बोला पथिक सुनो यह भी, हम सभी खोल दर्शाते हैं॥

दोहा (पथिक)

कुन्दन पुर में सेठ के, सुन्दर यमुना नार।
विद्युत अंग पुत्र हुआ, शशीवदन सुखकार॥
शशिवदन सुखकार सेठ, सुत नगर उज्जयनी आया।
रूप कला नहीं पार द्रव्य, उज्जयनी खूब कमाया॥
कामलता वेश्या देखी, रग-रग में इश्क समाया।
खोटी संगत में पड़ करके, सारा माल गवाया॥

दोहा

पास जिसके न पैसा, मेल फिर उससे कैसा।
लगी दिखलाने पीला, वर्ताव देख विद्युतअंग,
वेश्या से ऐसा बोला॥

गाना नं० ४०

(विद्युत अंग)

जिनको जूतों के तले, पलकें बिछाते देखा।
आज मुंह देखते ही, नाक चढ़ाते देखा ॥१॥

झूठे टुकड़ों से मेरे, पलता था कुनबा जिनका।
सरे बाजार उन्हें, धमकी सुनाते देखा ॥२॥

फखर जिनको था मेरे, चरण दबाने में कल।
क्रोध से आज उन्हें आखें दिखाते देखा ॥३॥

मेरे दर पर जो कुत्तों की, तरह फिरते थे कल।
आज विपरीत उन्हें, दांत चबाते देखा ॥४॥

न प्रेम न धीरज न वो, बुद्धि आकार रहे।
शुक्र पैसे को सभी, नाच नचाते देखा ॥५॥

दोहा (वेश्या)

आभूषण बिन द्रव्य ही, तस्कर लावे लूट।
ऐसे भी न जिसे मिलें, तो किस्मत गई फूट ॥

आज हो रात अन्धेरी में, राजा के महल घुसो जाकर।
रानी के कान पड़े कुण्डल, जल्दी लावो झटका लाकर ॥
ऐसा सुनकर आ घुसा महल, में राजा रानी जाग रहे।
सोचा छुप बैठूं महलों में, क्योंकि जल मर्भो चिराग रहे ॥
जो एक पलक भी सो जावें, तो मुझे फिकर न एक रहे।
विद्युत अंतर से छिपे हुवे, रानी के कुण्डल देख रहे ॥
नींद न आती राजा को, मन में राजा ये विचार रही।
निश्चय करने को महारानी, चंपा यूं वचन उचार रही ॥

दोहा (चम्पा रानी)

इधर उधर तन पलटते, सुनो पति महाराज ।
किस उचाट में लग रहे, नींद न आती आज ॥

दोहा (सिंहोदर)

क्या रानी तुझको कहूं, वैरन हो रही रात ।
दिन चढ़ते कल जा करूं, वज्रकरण की घात ॥
प्रणाम नहीं करता मुझको, फल इसका उसे चखाऊंगा ।
मैं दशांग पुर को कल जाकर, चहुं ओर से घेरा लाऊंगा ।
इसी विचार में अभी तलक, अय रानी मैं हूं लगा हुआ ।
यह मन चिंता ने घेर लिया, इस कारण से हूं जगा हुआ ॥

दोहा

हानी आगे ही खड़ी, कारण रही मिलाय ।
बलिहारी कुव्यसन की, बने चोर कहाँ जाय ॥
विद्युत अंग ने सोच लिया, हरगिज नहीं कुण्डल पाऊं मैं ।
इससे अच्छा वज्रकरण को, जाकर के समझाऊं मैं ॥
सोच समझ के ऐसा मन में, विद्युत अग सिधाया है ।
रात समय आ वज्रकर्ण को, सारा हाल सुनाया है ॥

दोहा (पथिक)

सिंहोदर का हाल सुन घबरा गया नरेश ।
सावधान हो किले में, बैठा सजा विशेष ॥
सामान सभी ले दुर्ग बीच, पहरा चहुं ओर लगाया है ।
अब सिंहोदर ने उधर आन, दल बल से घेरा लाया है ॥
जैसे तरुवर चन्दन पे, भमरे भुंजग छा जाते है ।
ऐसे जंगी दल पड़ा देख, सब नर नारी घबराते हैं ॥

सिंहोदर ने भेज दूत नृप को, यह वचन सुनाया है।
अवकाश नहीं तुमको बचने का, हमने घेरा लाया है॥
मुद्रि हटा गिरो चरणन में, जान बचाना चाहते हो।
किस कारण फंस कर धर्म, भ्रम में जान माल से जाते हो॥

दोहा (वज्रक)

वज्रकरण उत्तर दिया, सुन लीजे दरख्वास्त।
राज पाट धन माल की, मुझे नहीं है ख्वास॥

देव गुरु को छोड़, नहीं नमने का सिर मेरा है।
रस्ता दीजे तजूं देश, यदि कोई हर्ज तेरा है॥
क्यों दुःख देते प्रजा को, ला चहुँ ओर घेरा है।
तजूं न हरगिज धर्म, जब तलक दम में दम मेरा है॥

दौड़

नियम अपना नहीं तोड़ूं, और सब कुछ ही छोड़ूं।
क्षत्रिय कहलाता हूं, नहीं हारूंगा धर्म नर्म, वचनों से समझाता हूँ॥

दोहा (पथिक)

उत्तर सुन सिंहोदर को, चढ़ा रोष विकराल।
मारे बिन छोड़ूं नहीं, कहे वचन भूपाल॥

छन्द (पथिक)

लूट प्रजा को लिया, लाई कहीं पर आग है।
छोड़ कर घर बार नर, नारी समूह गया भाग है॥
लूट निर्धन कर दिये, धनी क्या सभी नर मार है।
मेरा भी सब कुछ लुस गया, बस माल और परवार है॥
उजाड़ हुआ तत्काल का, यह समृद्धि शाली देश है।
वस्त्र भी मेरे लुस गये, बस रह गया यह वेस है॥

इस झगड़े का भेद कहीं, यदि भरत भूप सुन पावेगा ।
मिल जाय धूल में सब शक्ति, और जान माल से जावेगा ॥

दोहा

लक्ष्मण का प्रस्ताव सुन, तड़प उठा भूपाल ।
कौन है तू मुझको बता, बोला आंख निकाल ॥

हृदय नेत्र दोनों के अन्धे, किसको धौंस दिखाई है ।
करी मिसाल वही लाडो की, भूआ बन कर आई है ॥
भरत भरत कर रहा बता, क्या नाता लेकर आया है ।
जिसका कोई सम्बन्ध नहीं, उसका प्रसङ्ग चलाया है ॥
धुर से है मातहत हमारे, भरत क्या इसका मामा है ।
यह धौंस वृथा क्यों दिखलाई, यहाँ क्षत्रिय कुल का जामा है ॥
सब मान भंग करके इसका, चरणों में आज गिराऊंगा ।
क्यों तेरी भी होनी आई, परभव इसको पहुँचाऊंगा ॥

दोहा

सुनी काट करती हुई, बात सु.मित्रानन्द ।
गर्ज तजे कहने लगा, बांका वीर बुलन्द ॥

(लक्ष्मण)

नीच भाव राजन्! तेरे, मैं भी तो दूत भरत का हूं ।
नाम पलनिया दिया छेड़ मैं, नहीं वीर गफलत का हूं ॥
मान सभी मर्दन करके, अन्याय का मजा चखाऊंगा ।
जो वचन कहे मुख से पूरे, बिन किये न यहाँ से जाऊंगा ॥

छन्द (लक्ष्मण)

है खेद इस अन्याय पर, क्षत्रिय का तू जाया नहीं ।
धर्मी को तैने दुःख दिया, कुछ भय भी मन लाया नहीं ॥

श्रीरामचन्द्र के पास अनुज, नृप की मुश्कें कस लाया है।
और आदि अन्त पर्यन्त सभी, रण का वृत्तान्त सुनाया है॥
श्रीराम सिया और लक्ष्मण हैं, यह भेद सिंहोदर पाया है।
फिर बारम्बार क्षमा मांगी, चरणों में शीश झुकाया है॥

दोहा (सिंहोदर)

क्षमा मुझे अब कीजिये, यही मेरी अरदास।
राजपाट सब आपका, मैं चरणों का दास॥

(राम)-बोले राम सुनो अच्छा, अब मेटें सभी बखेड़ा यह।
दोनों के राज्य मिला करके, बस अधर्म अर्ध निवेड़ा यह॥
सेवक मालिक नहीं कोई, अब दोनों भ्रात बराबर के।
है यदि तुम्हें मंजूर फैसला, करूं कहूँ समझा करके॥

दोहा

सिंहोदर और वज्रकरण, गिरे चरण में आन।
हमें सभी स्वीकार है, जो भाषा भगवान॥

श्रीराम ने कुण्डल मंगवाकर, विद्युत अंग के हाथ दिये।
और बना दिया अधिकारी नृप ने, सब नगरों के नाथ किये॥
फिर बोले राम से सिंहोदर, एक बात आपसे चाहता हूँ।
हे नाथ करें मंजूर मैं निज पुत्री, लक्ष्मण को विवाहता हूं॥

दोहा (राम)

लक्ष्मण से लो सम्मति, यों बोले श्रीराम।
यदि लखन जो मान लें, बने तुम्हारा काम॥

लक्ष्मण जी से फिर कहा, सिंहोदर ने आन।
सुनते ही फिर अनुज यों, बोले मधुर जबान॥

भीलनी

दोहा

अटवी में एक भीलनी कर रही मार्ग साफ।
कभी कहती है हे प्रभो ! कटें किस तरह पाप ॥

चौपाई

शब्द भीलनी के सुन राम । निज मन मांही विचारा ताम ॥
भीलनी जपे जिनेश्वर नाम । क्या सत्संग हुआ इस धाम ॥
या जाति स्मरण हुआ ज्ञान । कारण कोई मिला शुभ आन ।
क्या सुन्दर करती गुण गान । सुन जिन नाम टले सब मान ॥

दोहा

देख राम को भीलनी, हर्षित हुई अपार ।
चरणों में आकर गिरी, सब को किया जुहार ॥

एक वृक्ष तले बैठा करके, फिर पानी उन्हें पिलाया है ।
जो चुनकर रक्खे थे पहले बेरों पर हाथ जमाया है ॥
मीठों की परीक्षा कारण कुछ, निज दाँतों से काटती थी ॥
फिर छांट छांट अच्छे अच्छे, सियाराम लखन को बांटती थी ॥

दोहा

सादर प्रेम के वह बेर रस, मिला अपूर्व स्वाद ।
जनता को वह प्रेम सब, आज तलक है याद ॥

वह बेर नहीं एक अमृत था, सब तीन लोक में बढ़ करके ।
शुभ हैं पांचों रस दुनिया में, पर इन में था बढ़ चढ़ करके ॥
अब बाप बेटे में नफरत है, तो औरों से फिर प्रेम कहां ।
एक दूजे में जहां प्रेम नहीं, वहां वर्तेगा सुख क्षेम कहा ॥
जो दशा आज भारत की है, किसी बुद्धिमान् से छिपी नहीं ।
चोटों पर चोटें सहते हैं, फिर भी हैं आंखें मिची हुई ॥

छन्द (लक्ष्मण)

अब नहीं समय विवाह का, बोले अनुज सुन लीजिये ।
परलौटेंगे वापिस आन कर, जाने हमें अब दीजिये ॥
हो विदा उज्जैन को, सेना ले सिंहोदर गया ।
धर्म के प्रताप से, नृप का उपद्रव टल गया ॥
राम लक्ष्मण भी विदा हो, ध्यान चलने में किया ।
विश्राम करते उस जगह, जहाँ पर कि थक जाती सिया ॥

कल्याण भूप

दोहा

मलयाचल आगे बढ़े, जब श्रीराम नरेश ।
चलते हुये आया वहाँ निर्जल नामा देश ॥
तृषा सीता को लगी, लिया जरा विश्राम ।
पानी लाने के लिये, लक्ष्मण धाया ताम ॥
एक सरोवर जल भरा, देखा अधिक अनूप ।
जल क्रीडा करने वहाँ आया है एक भूप ॥
कुबेरपुर का अधिपति, कल्याण नाम सुकुमाल ।
देख सुमित्रानन्द को खुशी हुआ तत्काल ।

उसी समय कर प्रेमभाव, लक्ष्मण से हाथ मिलाया है ॥
फिर करता अनुज विचार, लगे औरत दिल में मुस्काया है ।
कल्याण भूप ने लक्ष्मण जी का, स्वागत किया अति भारा है ॥
और दिया आमन्त्रण चलो महल, मुख से यूं वचन उचारा है ॥

दोहा

इश्क मुश्क गुफिया खुश्क, द्वेष खून मद पान ।
भेद न मूर्ख को लगे, लेते चतुर पहिचान ॥
लेते चतुर पहिचान, भेद लक्ष्मण ने सब जाना है ।
तेजी से नहीं पड़े कदम, यह औरत का जामा है ॥
नक्श पड़े सब महिला के, एक बाना मर्दाना है ।
स्वयं रहस्य खुल जायेगा, जो भी इनको चाहना है ॥

दौड़

उमर छोटी बिल्कुल है, हुस्न चेहरा खुश दिल है ।
रहस्य कुछ पाना चाहिये सियाराम बैठे वन में, यह भी
दर्शाना चाहिये ॥

दोहा (लक्ष्मण)

सिया राम बैठे यहां, बोले लक्ष्मण लाल ।
बिन आज्ञा कैसे चलूं, महल सुनो भूपाल ॥
उसी समय सेवक जन को, राजा ने हुक्म चढ़ाया है ।
सियाराम को बुला संग ले, अपने महल सिधाया है ॥
भोजन पान से की सेवा, और समभ्र पर उपकारी है ।
अवसर देख कुबेर पति ने, मुख से बात उचारी है ॥

दोहा (कल्याण राजा)

चरणदास की विनती, सुन लीजे महाराज ।
परोपकारी तुम प्रभु, सभी जगत के ताज ॥
वालिखिल्य है पिता मेरा, पृथ्वी नामा महतारी है ।
थी गर्भवती पृथ्वी रानी, सुन लीजे व्यथा हमारी है ॥
आया एक गिरोह डाकुओं का, महमा वालिखिल्य बाँध लिया
नहीं लगा पता कई मासों तक, दुर्गम नग बीच तलाश किया

सुता हुई पीछे रानी के और नहीं कोई लड़का है।
वृद्धावस्था बालिखिल्य की, यह भी दिल में धड़का है॥
बालिखिल्य है किस हालत में, यह हमको कुछ खबर नहीं।
यदि करें लडाई जाकर के, दस्यु दल से हम जबर नहीं॥
फिर सोचा कि पुत्री जन्मी, कहीं सिंहोदर सुन पायेगा।
राजपाट सबके ऊपर, अपना अधिकार जमायेगा॥
इस आपत्ति से बचने के लिये, रलमिल एक बात बनाई है।
'पुत्र जन्मा महारानी के' यह बात प्रसिद्ध कराई है॥

दोहा

सिंहोदर को यह खबर, पहुंचाई तत्काल।
सहित बधाई उत्तर यों, भेज दिया भूपाल॥

राजतिलक दो राज कुमार को सिंहोदर फरमाया है।
मन्त्री ने अपनी बुद्धि से, यह सारा ढङ्ग रचाया है॥
पत्नी पति को लालच भी, हम द्रव्य बहुत सा देते हैं।
फिर भी न तजते अपना हठ, इसलिए महा दुःख सहते हैं॥

दोहा

वज्रकरण का जिस तरह, दीना कष्ट निवार।
नाथ हमारा भी जरा, कीजे तनिक विचार॥

यों बोले राम यह भेष पुरुष का, अभी न तन से दूर करो।
बालिखिल्य को छुड़वा देंगे, तुम अपने मन में धीर धरो॥
देकर के सन्तोष राम फिर, नदी नर्मदा आये हैं।
निर्भयता से विन्ध्या अटवी की, ओर आप चल धाये हैं।

भीलनी

दोहा

अटवी में एक भीलनी कर रही मार्ग साफ।
कभी कहती है हे प्रभो ! कटें किस तरह पाप ॥

चौपाई

शब्द भीलनी के सुन राम। निज मन मांही विचारा ताम ॥
भीलनी जपे जिनेश्वर नाम। क्या सत्संग हुआ इस धाम ॥
या जाति स्मरण हुआ ज्ञान। कारण कोई मिला शुभ आन।
क्या सुन्दर करती गुण गान। सुन जिन नाम टलें सब मान ॥

दोहा

देख राम को भीलनी, हर्षित हुई अपार।
चरणों में आकर गिरी, सब को किया जुहार ॥
एक वृक्ष तले बैठा करके, फिर पानी उन्हें पिलाया है।
जो चुनकर रक्खे थे पहले बेरों पर हाथ जमाया है ॥
मीठों की परीक्षा कारण कुछ, निज दाँतों से काटती थी ॥
फिर छांट छाट अच्छे अच्छे, सियाराम लखन को बांटती थी ॥

दोहा

सादर प्रेम के वह बेर रस, मिला अपूर्व स्वाद।
जनता को यह प्रेम सब, आज तलक है याद ॥
वह बेर नहीं एक अमृत था, सब तीन लोक मे बढ़ करके।
शुभ हैं पाचों रस दुनिया में, पर इन में था बढ़ चढ़ करके ॥
अब बाप बेटे में नफरत है, तो औरों से फिर प्रेम कहां।
एक दूजे में जहां प्रेम नहीं, वहां वर्तेगा सुख क्षेम कहां ॥
जो दशा आज भारत की है, किसी बुद्धिमान से छिपी नहीं।
चोटों पर चोटें सहते हैं, फिर भी हैं आंखें मिची हुई ॥

दोहा

पाकर के मनुष्य तन करो जरा कुछ ख्याल ।
अन्त सभी तजना पड़े, परिजन तन धन माल ॥

गाना नं० ४१

तर्ज—(खिदमते खल्क में जो कि मर जायेंगे)

कर के नेकी जो दुनिया से मर जायेंगे ।
यहां अमर नाम अपना वह कर जायेंगे ॥
उठो भारत वीरों, कमर कस के अपनी ।
तजो नकली माला, तजो नकली जपनी ॥
करो धर्म दुःख सारे, टर जायेगा ॥१॥
रहो प्रेम में आप, हिल मिल के सारे ।
करो संयम धारण तो, हो प्यारे न्यारे ।
नहीं द्वेषानल में, ही जर जायेंगे ॥२॥
यह चारों वर्ण का, मनुष्य तन समूह है ।
करो प्रेम सब से बढ़े, पुण्य समूह है ॥
नहीं सच्चे मानी बिखर जायेंगे ॥३॥
पतित हो के अपने, ही घातक बनेंगे ।
बस अपवर्ग में भी, बाधक बनेंगे ।
शत्रु के [illegible] लङ्का के घर जायेंगे ॥४॥
हम [illegible] क्या सदा से कहा धर्म ये ही ।
[illegible] है [illegible] ही ।
[illegible] जायेंगे ॥५॥

दोहा

दोहा (राम)

कहां तेरा पतिदेव है, और सभी परिवार।
क्या नाम आप का भीलनी, मिला धर्म कहां सार ॥

दोहा (भीलनी)

सम्बद्ध नहीं कुछ पति से, सम्बन्धी दिये छोड़।
नाम उग्रमिका है मेरा, मन सब से लिया मोड़ ॥
परोपकारी मिले मुनि, जिन को मैं मारने धाई थी।
हानि न उसको पहुँचा सकी, निज शक्ति सभी लगाई थी ॥
फिर महा पुरुष निर्ग्रन्थ मुनि ने, मुझे अपूर्व ज्ञान दिया।
जो आत्मा कल्याण करे, सम्यक्त्व रत्न यह दान दिया ॥

दोहा (भीलनी)

अरिहन्त सिद्ध आचार्य, उपाध्याय मुनिराज।
गुण इनका हृदय धरो, महामुनि सिरताज ॥
शरणा भी उत्तम बतलाया, अरिहन्त सिद्ध साधु जन का।
मन वचन काय को शुद्ध करो, और पाप हरो अपने मन का ॥
मत मारो निरपराधी को, प्राणीमात्र पर दया करो।
चोरी जारी जुआ मदिरा, अभक्ष्य मास को परिहारो ॥
नित्य ध्यान करो अपने हक पर, यह धर्म मुख्य है आत्म का।
बाकी स्वप्ने की माया है, नित्य ध्यान धरो परमात्म का ॥
मैत्री भाव रखो सब पर, गुणियों का आदर भाव करो।
दुर्बल पर कृपा करो सदा, विपरीत ये माध्यस्थ भाव धरो ॥

दोहा

आत्म शुद्धि के लिये, जपा करो यह जाप।
सोऽहं सोऽहं जपन से कटें दुष्ट सब पाप ॥

और नहीं कुछ धर्म पर, यह जन्म वृथा ही जाता है ॥
क्या खबर कर्म कब छूटेंगे, ये ही दुख मुझे सताता है ।

दोहा

अपना जो वृत्तान्त था, संक्षेप में दिया बताय ।
औदार चित्त प्रसन्न हो, यों बोले रघुराय ॥

दोहा (राम)

अब से नाम सुधर्मिका, तेरा गुण सम्पन्न ।
सार धर्म धारण किया, तेरा जन्म सुधन्य ॥
भक्ति ही संसार में, करे भवोदधि पार ।
यह नवधा भक्ति तुम्हें, बतलाते हैं सार ॥

नवधा भक्ति (श्री रामचन्द्र का भीलनी को उपदेश देना)

चौपाई

प्रथम साधु भक्ति सुखदानी । विनय सहित भक्ति मुख्य मानी ॥
सुविनय मूल धर्म का माना । यही मोक्ष का पन्थ बखाना ।
द्वितीय पढ़ो सर्वज्ञ की बानी । अथवा शास्त्र कथा सुनो कानी ॥
सम्यग् ज्ञान दर्श चारित्र, इससे करो निज धर्म पवित्र ।
देवगुरु धर्मशास्त्र में प्रेम, निष्कपट भक्ति तृतीये शुभ नेम ॥
आश्रव रोक संवर को धारो, पुण्य ग्रहण कर पाप निवारो ।
उत्तम चौथी भक्ति पहिचानो, आत्म तुल्य सभी को जानो ॥
शरणे उत्तम चार बताये, इसमें पंच परमेष्ठी समाये ।
दृढ़ विश्वास रक्खो मन मांही, पचम भक्ति कही सुखदाई ॥
गृहस्थ धर्म बारह बतलाये, नित्य कर्म जिनके मन भाये ।
अतिथि संविभाग मुनि जन सेवा, अष्टम भक्ति आतम सुख देवा ॥

चोरों ने वालिखिल्य नृप से, यह अपनी रड़क निकाली है।
एक इसका ही क्या जिकर करें, वैश्यों पर विपदा डाली है॥

दोहा

परोपकारी चल दिये, विषमस्थल की ओर।
चलने को तैयार थे, उधर महा भट चोर॥
राम जिधर को जा रहे, कंटक तरु अति भूर।
रास्ता न कोई मिले, जाते मार्ग चूर॥
शकुन अपशकुन गिनते नहीं, गिने न वाट कुवाट।
दुर्बल को यह सोच है, बलिजन उज्जड़ वाट॥
सेना चोरों की प्रबल, शूर वीर बलवान।
देश लूटने को चले, मिले सामने आन॥

देख सिया का रूप तरुण, सेनापति हुक्म सुनाता है।
देखो हीरे का टुकड़ा, यह आज सामने आता है॥
अतुल अनुपम रूप हमें, यह जगदम्बा ने भेजा है।
राज खजाने तुच्छ सभी, बस ये ही जान कलेजा है॥

दोहा

आज्ञा पाते ही कई, बढ़े अगाड़ी शूर।
हंसते-हंसते जा रहे, दिल में अति गरूर॥

जा पहुंचे जब पास राम के भट शस्त्र चमकाते हैं।
उधर रामलक्ष्मण ने भी, निज धनुष बाण उठाये हैं।
तब कहे अनुज हे भ्रात रहो, तुम सिया पास हुशियारी से।
करता हूं नाश अभी इनका, ज्वाला को जैसे वारि से॥

दोहा

आज्ञा पा श्रीराम की, लक्ष्मण बढ़े अगार।
धनुष प्रत्यचा खेंच कर, किया एक टंकार॥

किया धनुप टंकार अनुज ने, मानो बिजली कड़क पड़ी।
हो गये अधीर सभी शत्रु, चोरों की सेना धड़क पड़ी॥
सेनापति सामन्त सहित, यह हाल देख रहे खड़े खड़े।
फिर डाल दिये हथियार अभी, कर जोड़ राम के शरण पड़े॥

दोहा (दस्यु सेनापति)

पराक्रम से अज्ञात था, मुझे कीजिये माफ।
हाल सभी सुन लीजिये, कहूं जो बीती साफ॥
कौशाम्बी नगरी भली, वैश्वानर पितु जान।
सावित्री माता मेरी, आगे सुनो बयान॥
नाम है मेरा रुद्रदेव, करता कर्म क्रूर।
खोटी संगत में लगा, बाजे अपयश तूर॥

चोरी करता पकड़ मुझे, नृप ने शूली का हुक्म दिया।
महा पापी है यह मरने दो, नहीं जरा किसी ने रहम किया॥
तब एक पुरुष धर्मी ने आकर, मेरी जान बचाई थी।
कोई दुष्ट कर्म फिर ना करना, यह भी शिक्षा समाई थी॥

दोहा (दस्यु सेनापति)

जान बचाकर मैं भागा, मिला न कहीं सुधाम।
दौड़ भाग पाया इसी, पल्ली में विश्राम॥
पल्ली पति अब मैं हुआ, तेज प्रताप प्रचंड।
कोई न आवे सामने, वरतै आन अखंड॥

मैं इस फन का ज्ञाता पूर्ण, नहीं काबू में आ सकता हूं।
एक सिवा आप के नहीं, किसी को खातिर में ला सकता हूं॥
अब चरणों में आ गिरा प्रभु, शरणागत को माफी दीजे।
जन चुरा आपका दास कोई, सेवा मुझको काफी दीजे॥

दोहा

नम्र निवेदन सेनानी का, सुना जिस समय राम।
औदार चित गम्भीर नर, यों बोले सुख धाम॥
छोड़ो तुम वालिखिल्य नृप को, यह पहला कथन हमारा है।
अन्याय कार्य तजो सभी, इसमें ही भला तुम्हारा है॥
वालिखिल्य को छुड़वा कर, कुबेर नगर भिजवाया है।
जहां हुआ विरह दुःख दूर, खुशी का मानो बादल छाया है॥
उस तर्फ खुशी में सब प्रजा, इस तर्फ राम समझाते हैं।
और हटा पाप से चौरों को, फिर आगे कदम बढ़ाते हैं॥
बस महापुरुष हैं सदा वही, जो औरों का हित करते हैं।
यदि धर्म हेत कहीं पड़े काम, तो मरने से नहीं डरते हैं॥

दोहा

विंध्या अटवी अति क्रमी, और तजे कई ग्राम।
तापी नदी का तट जहां, वहां पहुँचे श्रीराम॥
नदी पार आगे मिला, अरुण नाम का ग्राम।
निर्लज्ज निर्धन अति, दुःखी लोक बसें उस धाम॥

२९—अतिथि सम्मान

दोहा

सुशर्मा सुर दायनी, विप्राणी गुणवान्।
कोकिल वाणी मधुरता, बसुधा करे व्याख्यान॥
तृषातुर सीता हुई, पहुंचे उसके स्थान।
आदर दे एक वाई ने, करवाया जलपान॥

लक्ष्मण ने समझाया बहुत, माना नहीं चांडाल है।
लखन का भी हो गया, गुस्से से चेहरा लाल है।।
पकड़ कर ऊपर उठा, करके किया उपहास है।
भयभीत होके महा कायर ने पाई त्रास है।।

दोहा

रोने के सुनकर शब्द. आ पहुँचे नर नार।
भेद समझ देने लगे, उसको सब धिक्कार।।
फिर बोले दोष क्षमा करदो इस पामर की नादानी का।
कहीं नहीं दूसरा मनुष्य कोई. क्रोधी है इसकी शानी का।।
देकर विश्राम पिलाया पानी, कौन दोष शुभ ध्यानी का।
है आदत से लाचार करो मत गिला जरा अज्ञानी का।।

दोहा

छुड़ा दिया श्री राम ने, करुणा दिल में धार।
फिर आगे को चल दिये, पहुंचे वन मंझार।।

यक्ष सेवक

अब दूसरी अटवी में आये, घनघोर भयानक भारी है।
आषाढ़ महीना लगते ही, जहाँ लगा बरसने वारी है।।
एक वट का वृक्ष विशाल देख, श्री राम ने आसन लाया है।
श्रीराम लखन का तेज देख, वटवासी सुर घबराया है।।

दोहा

वटवासी यहाँ देवता, पाया मन में त्रास।
यक्षों के सरदार पे, गया छोड़ निज वास।।

छन्द

विचार तब-मन में उठा, क्या ? माजरा नायाब है।
सो रहे या जागते, या आ रहा कोई ख्वाब है॥
सोये थे हम तो अरण्य में, ? आती नजर क्यों अवध है।
रूप रंग सब नगर के, पड़ता सुनाई शब्द है॥
इतने में सम्मुख आ खड़ा, वर यक्ष वीणा धारके।
देख विस्मित राम को, यों बोला सुर उचार के॥

दोहा—(इम्भकर्ण)

नाथ यह सब मैंने रचा, महल नगर आवास।
इम्भकर्ण वर यक्ष है, तुम चरणों का दास॥
पुण्यवान का पुण्य साथ, जंगल में मंगल होता है।
पुण्यहीन को मिले न कुछ, नगरों में फिरता रोता है॥
यक्ष करें जिनकी सेवा, सब पूर्व पुण्य फल पाया है।
इस जंगल में कपिल याज्ञिक समिधा लेने आया है॥

दोहा

सहसा एक तूफान ने, कपिल लिया उड़ाय।
देव कृत जो नगर था, डाला वहाँ पर जाय॥
वहाँ नूतन नगरी देख कपिल को, आश्चर्य अति आया है।
यदि मिले कोई पूछे उससे, मन में यह भाव समाया है॥
एक यक्षिणी नारी रूप में, नजर सामने आई है।
फिर पास गया विप्र उसके, मन की सब कथा सुनाई है॥

दोहा (कपिल)

क्या तुमको भी कहीं से, उठा लाया तूफान।
या इस नूतन नगर में, है तेरा स्थान॥

दोहा

मन वाञ्छित श्रीराम ने, दिया कपिल को दान।
खुश हो कपिल ने किया, निज मुख से गुणगान॥

खुशी खुशी निज ग्राम गया, कपिल समृद्धि पा करके।
जहां भोगे सुख अनेक धर्म, संध्या में ध्यान जमा करके॥
फिर सोचा किंचित् किया, धर्म जिसने यह कष्ट निवारा है।
सम्पूर्ण धर्म यदि ग्रहण करें, तो खुल्ला मोक्ष द्वारा है॥

दोहा

समझ लिया संसार में, है सब वस्तु निस्सार।
संयम बिन होगा नहीं, आत्म का उद्धार॥

तजा सभी ससार धार, संयम निज आत्म काज किया।
उस तरफ राम सिया लक्ष्मण ने, वहां ही पूरा चौमास किया॥
जब चलने को तैयार हुवे, फिर यक्ष वहाँ पर आया है।
स्वयं प्रभा नामक हार देव ने, राम को भेंट चढ़ाया है॥
रत्न जड़ित कुण्डल जोड़ा, श्री लक्ष्मण को शोभाता है।
और चूड़ामणि सिया के मस्तक, ऊपर चमक दिखाता है॥
वर वीणा चौथी दई देव ने, इच्छित राग मिले जिसमें।
सब साज सहित अद्भुत, गुणदायक अरति दूर हटे जिससे॥

दोहा

पुण्यवान जहां पर वसें, मिले समागम आय।
श्रीराम आगे बढ़े, नगर गया विलाय॥

नगर गया विरलाय, सफर दर सफर रोज जारी है।
करें वहाँ विश्राम जहां, चकती सीता प्यारी है॥

—※※—

सुनी शोभा थी लक्ष्मण की, बालपन से ही लड़की ने ।
पति इस जन्म का लक्ष्मण, यही दिल बीच ठानी थी ॥ २ ॥
भेद रानी के द्वारा सब, मिला पुत्री का राजा को ।
ठीक है लखन संग शादी, यही सब दिल समानी थी ॥ ३ ॥
राम लक्ष्मण गये वन में, सुना जब हाल राजा ने ।
लगा ब्याहने पुरेन्द्र नृप को, चढ़ती जवानी थी ॥ ४ ॥
लगी सोचन वह वनमाला, करूं न और संग शादी ।
पति बस एक होता है, तृण सम जिन्दगानी थी ॥ ५ ॥

छन्द

इन्द्रपुर पुरेन्द्र भूप से, ब्याहने की नृप मंशा करी ।
लक्ष्मण विना ब्याहूँ नहीं, पुत्री ने यह मन में धरी ॥
जिसको दिया न्यौता पिता ने, एक दिन वह आयगा ।
क्या बनाऊंगी मैं फिर. यह धर्म मेरा जायगा ॥
इससे अच्छा प्राण अपने, खत्म पहिले ही करूं ।
जंगल में जा वट वृक्ष ऊपर, ला गले फाँसी मरूं ॥
रात को ले हाथ में, सामान महलों से चली ।
पास पहुँची वृक्ष के तो, कौमुदि रजनी खिली ॥
तल्लीन थी निज ध्यान में, कुछ भी नजर आता नहीं ।
थे अतुल सुख सब तुच्छ, लक्ष्मण के विना भाता नहीं ॥

चौपाई

राम सिया निद्रा गत सोवें । लक्ष्मण जागे दसों दिस जोवें ॥
देख लक्ष्मण राजदुलारी । चन्द्र वदन मुख रूप अपारी ॥

दोहा

लक्ष्मण मन में सोचता. रूप नारी का खास ।
या वन की देवी कोई, वट पर जिसका वास ॥

देख मनुष्य को चमक पड़ी, किसने आ फांसी खोली है।
कोई नकली बना समझ लक्ष्मण, वनमाला ऐसे बोली है॥

दोहा (वनमाला)

कौन यहाँ तू छिप रहा, आन किया मोहे तंग।
इस असली रंग पे तेरा, चढ़े न नक्ली रंग॥
चढ़े न नकली रंग, खड़ा क्यों बातें बना रहा है।
चलें न तेरे दम गंजे क्या पट्टी पढ़ा रहा है॥
वनवास गये हैं राम लखन, किसको बहकाय रहा है।
जली हुई को मुझे कौन तू, आकर जला रहा है॥

दौड़

प्रण हित मरना ठाना है, प्राण यह तुच्छ जाना है।
नहीं त्यागूंगी निश्चय अपना, शील धर्म के सिवा
नहीं मुझको कोई भी शरणा॥

दोहा (वनमाला)

अलग जरा हट जाइये, मुझे नहीं कुछ होश।
फांसी लेने दीजिये, रहें आप खामोश॥

गाना नं० ४३

(वनमाला का)

क्यों रोकें मुझे, मैं सताई हुई हूं।
तपे जिगर से दिल, जलाई हुई हूं॥ १॥
तुझे जिसकी चाहना, नहीं वह यहाँ पर।
यह मुर्दा जिस्म, मैं उठाई हुई हूं॥ २॥
जावो यहाँ से न, हमको सतावो।
रंजो अलम् की दुखाई हुई हूं॥ ३॥

दोहा

खुली आंख सिया राम की; देखी सन्मुख नार।
लक्ष्मण ने फिर कह दिया, सभी बात का सार॥

सिया राम को हर्ष हर्ष में वनमाला शीश झुकाती है।
और अगला पिछला हाल सभी, निज भेद खोल दर्शाती है॥
संतोष दिलाकर श्रीराम ने, सीता पास बैठाई है।
अब उधर महल में, वनमाला की मात अति घबराई है॥

दोहा

वनमाला हा कहां गई रानी करी पुकार।
शोर एकदम से मचा, महलों के मंझार॥

सुना हाल जब राजा ने, जैसे हृदय में बाण लगा।
सब मारे मारे फिरते हैं, सेवक कोई महलों फिरे भगा।
और खड़े सिपाही जगह-जगह, पल्टन सब तर्फी फैल गई।
जिम्मेवारी थी जिन जिनकी, उन सबकी तबियत दहल गई॥
सब फिरें गुप्तचर जगह-जगह, अब लगी तलाशी होने को।
और दूर दूर कई दिये भेज, जहां मिले रास्ते टोहने को॥
कुछ सेना निज साथ लई, राजा जंगल की ओर बढ़ा।
वहां पास सरोवर वृक्ष तले, कुछ इष्ट चिह्न सा नजर पड़ा॥
थे दो अलबेले शूर एक बैठा, और दूसरा पास खड़ा।
फिर नजर पड़ी वनमाला पर जब, राजा आगे और बढ़ा॥
वनमाला है विश्वास हुआ तो, भूप अति झुंझलाया है।
पकड़ो इनको आगे बढ़कर, योद्धों को हुक्म सुनाया है॥
चम चर्म उड़ा दो मार मार, जब तक न सत्य बतावेंगे।
यह दुष्ट चोर डाकू जन, अपने कर्मों का फल पावेंगे॥

इस वनमाला को ले जाओ, हम आपकी इज्जत चाहते हैं।
मत घबराओ अब खड़े रहो, हम निर्भय तुम्हें बनाते हैं॥
अपशब्द सहित यह बतलाओ, किसको तलवार दिखाई है।
जो दशरथ नन्दन रामचन्द्र का, लक्ष्मण छोटा भाई है॥

दोहा

सिया राम और लखन हैं, सुने भूप ने बैन।
फेंक दिये हथियार सब, लगे इस तरह कहन॥

प्रभु आप हैं मुझको ज्ञात नहीं, सब दोष क्षमा अब कर दीजे।
गम्भीर आप शक्तिशाली, अपशब्द मेरे सब जर लीजे॥
मैं आज महा प्रसन्न हुआ, क्योंकि मन वांछित योग मिला।
यह राजपाट सब आपका है, क्या महल खजाना फौज किला॥

दोहा

सीधी दृष्टि जब बने, दुःख सब जाय पलाय।
रणभूमि में परस्पर, हुआ प्रेम सुखदाय॥

बोले लक्ष्मण श्रीरामचन्द्र हैं, दोष क्षमा करने वाले।
हम तो सेवक इन चरणों के, जो आज्ञा सिर धरने वाले॥
फिर उसी समय भूपाल ने जा, श्रीराम को शीश नवाया है।
और विनय सहित अति नम्र होकर, कोमल वचन सुनाया है॥

दोहा (राजा)

निस्सन्देह मैंने किया, आज महा अपराध।
किन्तु दर्शन आपने, दिये महा धन्यवाद॥

क्षमा सभी अपराध करो, फिर आप पधारो महलों में।
शुभ उत्तम बुद्धि कहां प्रभु, हम जैसे वन चर बैलों में॥

जब सभा एन भरपूर हुई, दर्शक जन दर्शन करते हैं।
उस समय 'महीधर' भूप राम, आगे यों गिरा उचरते हैं।

दोहा (राजा)

नम्र निवेदन है यही, सुनिये कृपा निधान।
किस दिन होना चाहिये, शादी का सामान॥
बोले राम सुनो राजन, इस समय विवाह का काम नहीं।
भ्रमण हमारा वन में है, और निश्चय कोई धाम नहीं॥
उसी समय सब कुछ होगा, जब पुरी अयोध्या आवेंगे।
बस विदा करो अब तो हमको, जहां लगा ध्यान वहां जावेंगे।

दोहा

इतने में एक दूत भट, आया सभा मझार।
ऐसे महीधर सामने, खोला कथन पिटार॥

दोहा (दूत)

क्षत्रिय कुल मणिमुकुट, संकट भंजन हार।
कृपा सिन्धु मेरी करो, नमस्कार स्वीकार॥
गौरवशाली भूपति, शूरवीर सिर ताज।
विन्ध्या पुरवर नगर से, आया हू महाराज॥
अति वीर्य नृप ने है भेजा, उनका प्रणाम बताता हूँ।
मैं आया हूँ जिस कारण सारा, भेद खोल समझाता हूं॥
भरत भूप संग रणभूमि मे, युद्ध नित्य अति जारी है।
अवधेश भरत की सेना, अब तक हटी न जरा पिछाड़ी है॥
श्री भरत संग भूप बहुत आये, युद्ध कहा न जाता है।
जहाँ युद्ध हो रहा घोर शब्द सुन, फलक जमी लर जाता है॥
अब दल बल लेकर चलो, भूप ने आप को जल्द बुलाया है।
यम आपके यहां पहुँचते ही, होगा निज पक्ष सवाया है॥

जाता हूँ संधि परस्पर दोनों की मैं करवाय दूं।
यदि माना नहीं अतिवर्य तो, फिर मान सब गिरवाय दूं॥
सुन राम बोले बात यह, हमको नहीं मंजूर है।
सब विकल चित बनता यहां, जहां पर बजे रणतूर हैं॥

दोहा (राम)

हम जाते हैं उस जगह, पुत्र तेरा ले साथ।
आप कष्ट ना कीजिये, है स्पष्ट यह बात॥

क्या शक्ति थी नट जाने की, झट वचन भूप ने मान लिया।
कुछ सेना राम ने कुंवर सहित, ले उसी तरफ प्रस्थान किया॥
हम आते हैं अतिवीर्य को, लक्ष्मण ने पत्र पठाया है।
और नगरी नंदा वर्त पास, जा तम्बू डेरा लाया है॥

दोहा

देवी उस उद्यान की, कहे राम से आन।
मुझ को भी कर दीजिये, आज्ञा कोई प्रदान।
तुम लायक कोई काम न, बोले राम नरेश।
तब देवी कहने लगी, कुछ तो देवो आदेश॥
यदि प्रबल इच्छा तेरी, तो कर इतना काम।
सेना सब ऐसे लगे, जैसे नार तमाम॥
फौज जनानी कर दई देवी ने तत्काल।
आश्चर्य में लीन हो, जो कोई देखे हाल॥

तब अतिवीर्य ने सुना फौज, आई तो अति हर्षाया है।
और किया पूर्ण विश्वास महीपर, मदद हेत नृप आया है।

संकोच माया का किया, देवी ने सब नरतन हुवे।
देखें तो क्या श्रीराम लक्ष्मण हैं, खड़े दर्शन हुवे॥
श्रीराम के चरणों में पड़ा, अतिवीर्य नृप तत्काल है।
बोले क्षमा मुझ को करें, सब आप का धन माल है॥
कुछ ज्ञात मुझको था नहीं, हे नाथ तुम ही हो खड़े।
अन्याय का फल मिल गया, और धूर भी मम सिर पड़े॥

दोहा

श्री राम कहने लगे, अति वीर्य सुन बात।
जैसा मुझको भरत है वैसा तू भी भ्रात।

क्षमा किया अपराध सभी, अब आगे जरा विचार करो।
तुम भरत भूप से सन्धी करके, निर्भय अपना राज्य करो॥
अतिवीर्य कहे महाराज सुनो, अब दिल दुनिया से विरक्त हुवा।
अब यौवन गया बुढ़ापा है, तप संयम ध्यान में चित्त हुवा।

चौपाई

राज विजय रथ सुत को दिया। सिंह गुरु पे संयम लिया॥
तज जंजाल हुए मुनि राज। तप जप किया निज आतमकाज॥

दोहा

भरत भूप की आन में, किया विजय रथ राय।
दारुण दुःख सब दूर कर, झगड़ा दिया मिटाय॥

नृप विजय रथ ने बहन रतीमाला, लक्ष्मण को परणाई।
और विजय सुन्दरी भगिनी दूसरी, भरत भूप को है ब्याही॥
बस फेर वहां से चले राम, मग सेना विजय पुरी आई।
नृप महीधर ने सम्मान किया, वनमाला मन में हर्षाई॥

शत्रु दमन प्रतिज्ञा

छन्द

भेद सब एक मनुष्य से श्री अनुज ने पूछा तभी।
वृत्तान्त यह उस पुरुष ने लक्ष्मण को समझाया सभी॥
शत्रु दमन राजा यहां, शक्ति का न कोई पार है।
भूप हैं आधीन कई, सब का यही सरदार है॥
है जित पद्मा पद्मनी, प्रत्यक्ष पुत्री भूप की।
तुलना न कर सकता कोई, उस पुण्य रूप अनूप की॥
मेरी शक्ति का वार अपने, तन पर सह लेगा कोई।
जित पद्मा मेरी पुत्री को, फिर विवाहेगा वही॥
आज तक आया न कोई, सहने को शक्ति भूप की।
मौत के बदले कोई, करता न चाहना रूप की॥
सुन अनुज लाई चोट, धौंसे पर करी न वार है।
फिर वहां पहुँचे लगा था, खास जहां दरबार है॥
देखी शोभा अनुज की, बांकी अदा का जवान है।
शत्रु दमन कहने लगा, मुझ को बता तू कौन है॥
कहे लखन दूत मैं भरत का, स्वामी के आया काम हूँ।
प्रतिज्ञा पूरी करने तेरी, आ गया इस धाम हूँ॥

दोहा

क्रोध भूप को आ गया, सुना दूत का नाम।
राज पुत्र बिन और को, विवाहना अनुचित काम॥
यह होकर दूत भरत का, मेरी पुत्री ब्याहने आया है।
तो समझ लिया मैंने अब इसके, काल शीश पर छाया है॥

प्रहार पांचवें को नृप ने, फिर सरपे चोट लगाई है।
कुछ असर नहीं हुआ लक्ष्मण पर, यह देख सभा हर्षाई है॥

दोहा

राजकुमारी ने तुरत, पहिनाई वर माल।
परणो अब पुत्री मेरी, यों बोलो भूपाल॥
अनुज कहे उद्यान में, बैठे हैं श्रीराम।
सेवक हूँ रघुवीर का, करूं बताया काम॥

श्रीराम सिया लक्ष्मण जी हैं, सुन राजा मन में हर्षाया।
फिर विनय सहित तीनों को, अपने महलों के अन्दर लाया॥
अति प्रेम से भोजन करवाकर, भूपति ने प्रेम बढ़ाया है।
फिर आज्ञा ले श्रीरामचन्द्र जी, आगे को चल धाया है॥

दोहा

चलते-चलते आ गया, वंशस्थल गिरि देश।
वंशस्थल पुर नगर में। पहुँचे रामनरेश॥

निग्रन्थ मुनि

दोहा

नर नारी उस नगर के, देखे सभी उदास।
पूछा तब श्रीराम ने, बुला मनुष्य एक पास॥

कहे मनुष्य महाराज रात को, शब्द भयानक होता है।
और साथ एक तूफान चले, वह कष्ट सहा नहीं जाता है॥
दिन को यहाँ स्थान होते, कहीं और जगह जा सोते हैं।
उस महा उपद्रव से नरनारी, बच्चे बड़े रोते हैं॥

दोहा

श्रीराम ने लक्ष्मण से कहा, देखो सब रंग ढग।
जल्दी आकर के कहो, चले फेर हम संग॥

छन्द

यह कथन सुन श्रीराम का, लक्ष्मण जी देखन को चला।
दो मुनि आये नजर, कुछ और ना वहां पर मिला॥
लक्ष्मण ने आकर हाल जो, देखा था सब बतला दिया।
श्रीराम ने मुनियो के जा चरणों मे डेरा ला लिया॥

दोहा

विधि सहित वन्दना करी। पांचों अङ्ग नमाय॥
कुछ दूरी पर द्रुम तले, बैठे आसन लाय॥
श्रीराम बजाते हैं वीणा, लक्ष्मण सुरताल उच्चार रहे।
उस जगल मे हो रहा मंगल, निज शुक्ल ध्यान मुनि धार रहे॥
अनल प्रभसुर ने रात्रि मे, रूप भयङ्कर किया भारी।
तूफान सहित सुर शब्द भयानक, करता आ रहा दुखकारी॥

दोहा

मुनियो को देने लिये, दुख आया बैताल।
रूप भयानक अति बुरा, जैसे कोपाकाल॥
श्रीराम सिया लक्ष्मण बैठे हैं, पुण्य प्रताप प्रचण्ड बड़ा।
सुर सह ना सका उस तेजी को, इस कारण उल्टा कदम पड़ा॥
शुभ शुक्ल ध्यान शुद्ध होने से, मुनिजन को केवल ज्ञान हुआ।
जहाँ उत्सव करने सुरपुर से, देवों का आवागमन हुआ॥
करके ज्ञानोत्सव देव सब, निज निज स्थान सिधाये हैं।
फिर विधि सहित सत्कार, सियाराम ने शीश नमाये हैं॥

यों बोले राम कहो भगवन, कारण था कौन उपद्रव का।
कृपया यह सब फरमा दीजे, मिट जावे भ्रम सभी दिल का॥

दोहा

कुल भूषण कहे केवली सुनिये सभी स्वरूप।
पद्मनी नामा नगरी में, विजय पर्वत भूप॥

अमृत स्वर मतिवन्त दूत, उपयोगा जिसकी नारी थी।
और उदित मुदित दो पुत्र जिन्हों की, रूपकला कुछ न्यारी थी॥
वसुभूति एक मित्र दूत का, उपयोगा पर आशक था।
वह जाति का था उच्चवर्ण मिथ्यामत धर्म उपासक था॥

दोहा

प्रेमी को कहे प्रेमिका, अमृत स्वर को मार।
खटका सब मिट जायगा, भोगें सुख अपार॥
एक दिवस भूप ने दूत काम, करने को कहीं पठाया था।
वसुभूति ने मार्ग में अमृत, स्वर परभव पहुंचाया था॥
फेर अधम ने आकर, उपयोगा को यों समझाया है।
तू पुत्रों को दे मार बढ़े फिर राग यही मन भाया है॥
यह लगा पता जब उदित मुदित को, क्रोध वदन में लाया है।
वसुभूति को परभव पहुँचाने, का सब ढंग रचाया है॥
उदित कुंवर ने एक समय वसुभूति परभव पहुंचाया।
मर इपदानल पल्ली में, वसुभूतिने भील जन्म पाया॥
वैराग्य भूप को हुआ छोड़, संसार ध्यान तप जप लाया।
सब शत्रु मित्र समान मुनिने, तजा क्रोध लालच माया॥
संग उदित मुदित भी हुवे मुनि, निज आत्म कार्य सारन को।
मार्ग में आ वही भील मिला, मुनिवन को धाया मारन को॥
तब पल्ली पति ने छुड़वाया, गुण जनमात्र का माना है।

श्री प्रभ नाम एक अन्य भूप के, सुन्दर राज दुलारी थी।
अनुधर कहता था मुझे विवाह दो, उसको यही बीमारी थी॥
नृप ने न विवाही अनुधर को, किसी अन्य भूप को परणाई।
जब आस निरास हुआ अनुधर, तो मन में अति अरती आई॥
फिर लगा उजाड़न देश भूप का, क्रोध में अन्धा बना हुआ।
शिक्षा न हृदय में धरी किसी की, मान में ऐसा तना हुआ॥
तब पकड़ एक दिन राजा ने, निज कैद में उसे ठुकाया था।
फिर रत्न रथ भूप ने आकर, उसको तुरत छुड़ाया था॥
जा बना तापसी तापस के डेरे, नहीं घर में आया है।
अशुभ कर्म की चाल सदा, उल्टी श्री जिन फर्माया है॥
प्रमाद महा शत्रु आत्म को, सदा महा दुःख देता है।
और सम्यक्त्व धारी जीव कोई, शुद्ध ज्ञान चारित्र लेता है॥

दोहा (कुल)

बाल कष्ट वहाँ पर किया, फेर भ्रमा संसार।
कभी पशु कभी नर्क में, फिर तापस अवतार॥
अज्ञान कष्ट महा तप किया, करी कुगुरु की सेव।
अन्यत्म जोतिप चक्र में, अनल प्रभु हुवा देव॥
उधर रत्नरथ और चित्ररथ, दोनों ने संयम धारा है।
हुए अतिबल महाबल नाम बारहवें, स्वर्ग गये सुर भारा है॥
सुरपुर तज विमला रानी के, फिर हम दोनों ने जन्म लिया॥
कुल भूषण और देश भूषण, व्यवहार मात्र यह नाम दिया।

छन्द

बालपन में मात पितु ने, भेज हम गुरुकुल दिये।
आचार्य के वर्ष बारह तक, हमें सुपुर्द किये॥

था उसी समय श्री अतिवीर्य, मुनिराज को केवल ज्ञान हुआ।
वह पिता देव गया उत्सव पर, संग अनल प्रभ का ध्यान हुआ॥

चौपाई

उत्सव ज्ञान अधिक प्रकाशा, दया धर्म अमृत मुनि भाषा।
मानव देव परिषदा मांही, पूछत प्रश्न एक मुनि राई॥
अबके किस की संख्या आवे, जो मुनि केवल ऋद्धि पावे।
कृपया कर कहो अन्तर्यामी, कौन मुनि होगा शिवगामी॥

दोहा

ध्यानस्थ मुनि दो हैं खड़े, वशस्थल के पास।
उन दोनों मुनि जनों को, होगा ज्ञान प्रकाश॥
सर्वज्ञ देव ने फर्माया, कुल भूषण और देश भूषण।
शुभ ज्ञान दर्श चारित्र वर, चारों में नहीं कोई दूषण॥
केवल ज्ञान उन्हें होगा यह, अनल प्रभ ने सुन पाया है।
और उसी समय क्रोधातुर हो, उपसर्ग देने को आया है॥

दोहा

नित्यप्रति करता था यहाँ, शब्द भयानक आन।
और वैक्रिय शक्ति से, लाता था तोफान॥
कई दिवस हो गये किया, उपसर्ग बहुत दुखकारी है।
यहाँ केवल ज्ञान में विघ्न हुआ, विपदा लोगों पर डारी है॥
अब देख तुम्हें सुन अनल प्रभ, हट गया पिशाच घबराकर।
जब शुक्ल ध्यान निर्विघ्न हुआ, केवल प्रगटा हमको आकर॥

दोहा

सुन वाणी सर्वज्ञ की, प्रसन्न चित्त अवधेश।
उसी समय चरणन गिरा, साथा भेव विशेष॥

देख मुनि श्री रामसिया, लक्ष्मणजी अति हर्षाये हैं।
और उसी समय कर नमस्कार, तीनों ने आहार वहराये हैं॥

दौड़

समागम मुश्किल पाया, चरणन गिर शीश झुकाया।
दान देवों मन भाया,खुशी मे आकर देवों ने भी गंधोदक वर्षाया॥

जटायु पक्षी

दोहा

अहो दान उद्घोषणा, करें व्योम में देव।
भेंट करें कुछ राम की, सोचें अमर स्वयमेव॥
अश्व सहित रथ दिया अचित एक रत्नजटी खेचर सुरने।
गंधोदक वृष्टी करके सब, देव गये निज निज घरने॥
यहां बार बार मुनि चरणन मे, रघुपति ने शीश नमाये हैं।
गई फैल वासना गंधोदक की, सभी जीव सुख पाये हैं॥

दोहा

गंधोदक की वासना, फैली वन मंझार।
गंधाभिध नामक पक्षी, के साता हुई अपार॥
साता हुई अपार जिस्म में, लगी दाह थी भारी
पुण्य उदय चल आया, जहाँ थे राम मुनि तपधारी॥
बैठ वृक्ष पर देख रहा था, लम्बी नजर पसारी।
जाति स्मरण हुआ ज्ञान, भावना दिल मे शुद्ध विचारी॥

दौड़

दृष्टि गई पूर्व जन्म में, तुरत फिर गिरा धरन में।
उठा सीता ने कर में, मुनि चरणन गेरा पक्षी,
था भरा रोग तन पर में॥

दोहा (सुगुप्त मुनि)

पालक एक वजीर था, नास्तिक दुष्ट स्वभाव ।
धर्म ध्यान भावे नहीं, लाखों करो उपाय ॥
दण्डक नृप ने एक, दिन भेजा पालक काम ।
जित शत्रु भूपाल पे, ले आया पैगाम ॥
ले आया पैगाम भूपने, सेवा की हित करके ।
धर्म स्थान ले गया दिलावें, शिक्षा इसे दिल धरके ॥
सुन कर्म धर्म सबही का, हृदय कमल अति हर्षे ।
मिथ्या वस पालक सुन, निंदा करे क्रोध में भरके ॥

दौड़

निंदा सुन खंधक आया, तुरत शास्त्रार्थ लगाया ।
हुई तब चर्चा जारी, अन्त में पालक हुआ निरुत्तर
खिन्न सभा में भारी ॥

दोहा (सुगुप्त)

हार सभा के बीच में, गया स्वदेश मंझार ।
उपहास्य देख अपना अति, दिल में द्वेष अपार ॥

चौपाई

खंधक का दिल हुआ वैरागी, पर उपकार करूं लवलागी ।
आज्ञा लेने माता पै आये, तब माता ने वचन सुनाये ॥
जान हथेली जो धरे, वह ले संयम भार ।
यदि पीछे गिरना पड़े तो, उससे भली बेगार ॥
उससे भली बेगार, क्योंकि, यहाँ कष्ट समूह को सहना है ।
यदि कोई गर्दन पर धरे, तेग तो दीन वचन नहीं कहना है ॥
रागद्वेष दो कर्म बीज को, दिल में जगह न देना है ।
कोई कष्ट आनकर पड़े जिस्म पर, सम प्रणामें सहना है ॥

दौड़

न दृष्टि लोटावे, पैर आगे को बढ़ावे।
भीरुता दूर भगावे, प्रतिज्ञा पर रहे दृढ़ चाहे,
प्राण जान पर जावें ॥

दोहा (माता)

कहे श्री सर्वज्ञ ने, अष्ट प्रवचन सार।
इनको धारे बिन कोई, हुआ न भव से पार॥

पांच सुमति और तीन गुप्ती को, हरदम हृदय लाना है।
रुखो नरम सरस जो मिले आहार, सब सम प्रणाम से खाना है॥
रण जग में अड़कर के फिर, मरने से नहीं डरना है।
इस गंदे जिस्म की खातिर, क्षत्रिय कुल दागी नहीं करना है॥

दौड़

एक दिन सबने मरना, धर्म बिन और न शरणा।
भाव ये हृदय में धरना, चक्री तीर्थंकर गये छोड़,
यहां अमर किसी का घर ना॥

गाना नम्बर ४४ (माता का स्कंधक कुमार को समझाना)
तर्ज—(निहालदे की)

दोहा (खंधक)

माता तेरे सामने, लई प्रतिज्ञा धार।
सम दम खम को धारके, करूं धर्म प्रचार॥
करूं धर्म प्रचार पूर्ण, कर्तव्य सभी कर दूंगा।
चाहे सिर कट जाय किन्तु, पीछे नहीं कदम धरूंगा॥
सत्याग्रह अनादि नियम, जैन का हृदय यही धरूंगा।
धर्म प्रचार के लिये मात, कुर्बान जिस्म कर दूंगा॥

दौड़

मुनि का बाना पाऊं, देश दंडक के जाऊं।
धर्म झंडा लहराऊं, अज्ञान अंध में पड़े जीवों को,
सत्य धर्म दर्शाऊं॥

दोहा (सुगुप्त)

माता ले गई पुत्र को, मुनि सुव्रत स्वामी पास।
हाथ जोड़ कहने लगी, सुनो प्रभु अर्दास॥
सुनो प्रभु अर्दास, आपको अपना पुत्र देती हूं।
मोह कर्म वश का भय मुझको, इसलिये विरह को सहती हूँ॥
अब माता पुत्र सम्बन्ध नहीं, खधक को अंतिम कहती हूँ।
इस कर्म जंग मे अड़कर, पीठ न देना शिक्षा देती हूं॥

दौड़

माता गई घर मझारी, पुत्र ने दीक्षा धारी।
लिये महाव्रत सुखकारी, तप जप में हुए लीन,
गुरू के हरदम आज्ञाकारी॥

करी चरण प्रणाम प्रभु जी, हम जावें विचरन को ।
दण्डक राजा को समझाने, और उपकार करन को ॥
सत्य धर्म स्थापन, मिथ्या, नास्तिक पाप हरन को ।
पुरन्दर यशा को दृढ़ करन, निज पूर्ण करन प्रण को ॥

दौड़

प्रभु जी यों फर्मावें, उपद्रव हो दरशावें ।
होनहार बतलावें, सिवा तेरे सब का सिद्ध कार्य,
अन्त मोक्ष मे जावें ॥

दोहा

सर्वज्ञों के वचन को, कोई न टालन हार ।
होनहार होगी वही, यह भी परोपकार ॥
यह भी है उपकार पांचसौ के सिद्ध कार्य होवें ।
धर्म काम में लगे जिस्म तो, दुख समूह को खोवें ।
करेंगे उग्र विहार स्वपर आत्म मन निर्मल होवें ॥
हर व्यक्ति के दिल अन्दर, हम बीज धर्म का बोवें ।

दौड़

ज्ञान वर्षा बरसा कर, मिथ्यात्व को दूर नसा कर ।
धर्म द्विविध दर्शाकर, अज्ञान रूप वन धर्मे,
हस्तिगण को ज्यों सिंह भगाकर ॥

दोहा

सोचा श्री संघ ने मुनि दण्डक देश मे जाय ।
नम्र निवेदन यूं करें, चरणन शीश नवाय ॥

गाना नं० ४५ (सघं० नं०)

अर्ज श्री संघ को स्वामिन, देश दंडक के मत जावें ।
प्रतिज्ञा टल नहीं सकती, चाहे अन्तक निगल जावें ॥

भयभीत हुए कई भव्य जीव, मुनियों को आ समझाने लगे।
बोले आगे मत बढ़ो प्रभु, मृत्यु का भय बतलाने लगे॥

दोहा

ऐसे वचनों को सुना, स्कन्धक ने जिस बार।
मुनि वीर गम्भीर यों, बोला वचन उचार॥

गाना नं० ४६ (स्कन्धकाचार्य का)

सत्य प्रचार में यह, जान रहे या न रहे।
परोपकार में शान, रहे या न रहे॥ १॥
फैला दूंगा मैं शिष्यों को, राष्ट्र भर में।
मिथ्या विष काटने में, कान रहे या न रहे॥ २॥
ज्ञान दर्श चारित्र का, डंका बजाऊँ सारे।
पाँव पीछे न हटे, प्राण रहे या न रहे॥ ३॥
भूले भटकों को, बतावेंगे जिनवाणी।
साफ कह देंगे यह सिर, जान रहे या न रहे॥ ४॥
सर्वस्व लगा कर भी, करूं कर्तव्य पालन।
खाने पीने का मुझे, ध्यान रहे या न रहे॥ ५॥
हरगिज न डरेंगे, किसी की धमकी से।
चाहे हाथ में मैदान, रहे या न रहे॥ ६॥
सुर नर मोक्ष तिर्यञ्च, नर्क है दुनिया में।
आस्तिक धर्म रहे, इन्सान रहे या न रहे॥ ७॥
सिद्ध ईश्वर, सच्चिदानन्द परमात्म।
आन रह जाय अमिट, जान रहे या न रहे॥ ८॥
शुक्ल शुभ ध्यान हैं, दो कर्मों को उड़ाने वाले।
बिन शुभ ध्यान के यह, जहान रहे या न रहे॥ ९॥

खबर नहीं कुछ आपको, स्कन्धक पहुचा आय।
राज्य लेने के वास्ते, मुनि भेष बनाय॥
मन्त्री तेरी भूल है, यह मुनि हैं गुण धार।
त्याग दिया संसार सब, करते धर्म प्रचार॥
निज कर्तव्य मैंने किया, जो मुझ पर था भार।
नमक खाय कर आपका, देऊँ सलाह सुखकार॥
देऊँ सलाह सुखकार, बाग में चलो संग अब मेरे।
शस्त्र दारु गोला देखो, गुफिया पांच सौ चेहरे॥
सहस्र सहस्र पर भारी है, एक शूरवीर दल घेरे।
आलस्य में जो पड़े रहें, तो मौत पुकारी नेड़े॥

दौड़

चलो अब देर न लावो, देख आज्ञा फर्मावो।
यदि स्कंधक न होता, कष्ट नहीं देता तुमको सब काम मैं खुद कर देता॥

दोहा (कुगुप्त)

गद्दी के होते गधे, जिन्हें न कुछ पहिचान।
ज्हाँ लगाये लग गये, तज गौरव का ध्यान॥
मन्त्री को ले बाग में, तुरत गए भूपाल।
दारु गोला शस्त्र सब, दिखलाया जंजाल॥
दिखलाया भ्रम जाल, भूप के चढ़ा रोष अति भारी।
सोचा यदि किया आलस्य तो, करेगा दुष्ट ख्वारी॥

दोहा (सुगुप्त मुनि)

स्कंधक मुनि ने जब सुनी, पत्तान्ध की बात।
गंभीर ऋषि कहने लगे, यों गौरव के साथ॥

दोहा (स्कंधक)

पालक क्यों घबरा रहा, फिरे मचाता शोर।
प्रबल सिंह आगे नहीं, चले स्यार का जोर॥
नहीं चले स्यार का जोर, यहाँ तो मारे शेर बबर हैं।
क्या दिखलाता धौंस, मरण को जान हथेली पर हैं॥
शरतों का रख घर अपने, यहाँ सारे मुनि निडर हैं।
धर्म बली देने को प्रभु ने दान बताये सिर हैं॥
जिस्म यह नहीं हमारा, गया कहाँ ध्यान तुम्हारा।
सोच कर करो विचारा, सत्य धर्म कर महण मिटे,
अज्ञान तिमर तब सारा॥

दोहा

इतनी सुनकर मन्त्री, जल बल हो गया ढेर।
भृकुटि मस्तक डाल कर, लिए मुनि सब घेर॥

दोहा

स्कंदक दिल में सोचता, यह कोई अभव्य विशेष।
मुनियों को अब दृढ़ करूं, देकर के उपदेश॥
दुर्जन को सज्जन करने का, भूतल में कोई उपाय नहीं।
घन घोर घटा कितनी बरसे, चातक की तृषा जाय नहीं॥
बसन्त ऋतु में सब हंसते, नहीं पत्र करीर के आता है।
भानु की इच्छा सब करते, पर उल्लु उसे न चाहता है॥
नागर के फल का अभाव, पीपल के फूल नहीं आता है।
फणीधर को जितना दूध मिले, उतना ही विष बन जाता है॥

अनन्त परमाणुओं से बना मनुष्य तन, अवश्यमेव खिर जावेगा।
रत्न पदार्थ जीव शुक्ल यह, छेद भेद नहीं पावेगा ॥४॥

दोहा (स्कंदक)

सुनों मुनि अब कान धर, है कोल्हू तैयार।
धांय कुमादि शस्त्र सब, हो जावो तैयार ॥
हो जाओ तैयार क्योंकि, अब जल्दी जग छुड़ने वाला है।
तुम बना स्वङ्ग ने घाट कोव का, शीश करो मुँह काला है ॥
मोह कर्म चाडाल दुष्ट यदि, लिया मारकार भाला है।
फिर मान अरि के नाश करने को, काची सूत मसाला है ॥
भय न कुछ मन में लावो, धर्म को शीश चढ़ावो।
चित्र श्री शान्त बनाओ, ध्यान शुक्ल शुभ ध्याय शान्तमय होकर
धर्म बचाओ ॥

गाना नं० (४७)

(स्कंदकाचार्य का मुनियों को उपदेश)

सुनों मुनि प्यारो यह संसार असार ॥ टेर—
यह संसार संशयों का हार, होवे ख्वार जो कोई पहिने।
सुत दार नार, परिवार यार, यह जिस्म सदा स्थिर नहीं रहने ॥
सहे दुख अपार नर्कों के द्वार, जमदों की मार दुःख क्या कहने।
तिर्यंच मार डंडों की मार, गल छुरी धार अग्नि दहने जी ॥
जो थे जिनेश, मेरे सुरेश, इन्द्र नरेन्द्र भी आकर के।
चक्री के धार केवल अपार, संसार सार सुख पा करके ॥
योधा महान, धरते थे ध्यान, देते थे ज्ञान समन्ध करके जी।
सुवर्ण जैसे अंग जिन्हों के, उनकी भी हो गई हार ॥सुनो॥
जो कोई मित्र को कैद में कहे, फंद काट आजाद करे।
सब करो गिला संयोग मिला, जा मोक्ष शिव्य आबाद करे ॥

जो धर्म हेत लगता है रेत, निपजे है खेत सब काम सरें जी।
चाहे मेल बिन्धें चाहे बर्छी बिन्धें, चाहे तेग काढ़ गर्दन धरदें॥
चाहे अग्नि धाए लोहे की लाल, करके कमाल सिर पर धरदें
चाहे घानी डाल पीले, कमाल, नेत्र निकाल कर पर धरदें॥
दश विध का धर्म खंती का मर्म, मत रखो भ्रमदिल में सरधो जी।
धर्म हेत जो लगे अंग तो, मिलता है शिवद्वार॥ सुनो ॥२॥
हो जाओ तैयार सहने को मार, नहीं वार वार ये जन्म मिले
हो जाओ फिदा काया से जुदा हो फर्ज अदा सब दुःख टले।
रहता है नाम सिध होय काम, शूरा संग्राम घानी में पीले।
मेरु समान हो जाओ जवान, अब क्षमा खड्ग करमें गहिये
शान्ति की तेग लो पकड़ वेग, संयम की टेक रखना चाहिये
जिनजी के पूत हो राजपूत, सिर देके कजा चखनी चाहिये जी।
शूरवीर जो रखे धर्म को, चाहे पड़े कष्ट अपार सुनो ॥३॥
जो क्षमा करे वह नहीं मरे, मुक्ति को वरे करो कुर्बानी।
यह जिस्म जान गदा महान, रोगों की खान तुच्छ जिन्दगानी॥
है शुद्ध स्वरूप चेतन अनूप, भूपों का भूप केवल ज्ञानी।
यह जीव जुदा नहीं होता कदा, नहीं जलता नहीं गलता पानी॥
धीरज को धरो संसार तरो, मुक्ति को बरो की जे करणी।
हो जाओ लाल चिन्ता को टाल, जब करो काल मुक्ति वरणी॥
सब कटे फंद कहे शुक्ल चंद, निर्मल ज्यूं चंद धार्मिक तरणी।
मत डरना गीदड़ कर्मों से, हो जाओ होशियार सुनो ॥४॥

दोहा (सुगुप्त)

पालक तब कहने लगा, अब नहीं रही उधार।
निंदना आलोयना कर सभी, खड़े मुनि तैयार॥
निर्यामक बन खधक मुनि, संथारा तुरत कराते हैं।
पैरों से लेत दुष्ट पकड़, घानी में उधर चढ़ाते हैं॥

क्षपक श्रेणी चढ़ें मुनि, समदम खम हृदय लाते हैं।
अन्त केवली बने बन्ध तज, अक्षय मोक्ष पद पाते हैं॥
पिल रहा एक घानी में क्रम से, और एक तैयार खड़ा।
कर दिया माल चूचड़ खाना, बढ़ रहा खून कहीं हाड़ पड़ा॥
उस यन्त्र से मानों निकली, एक रक्त नदी दिखलाती थी।
गृध पक्षी घूम रहे नभ में, और चीलें झपट लगाती थीं॥
जब पील दिये सब ही चेले, एक छोटा शिष्य रहा बाकी।
था होनहार गुणवान कणी, मानों जैसी थी हीरा की॥
जब उसे पीलने के हेतु, पालक ने हाथ बढ़ाया है।
तब उसी समय खंधक ने, पालक को यों वचन सुनाया है॥

दोहा (स्कन्धकाचार्य)

सन्तोष तुझे आया नहीं, अब पालक सुन बात।
लघु शिष्य की न दिखा, मुझे आपने घात॥
घात दिखा मत मुझको इसकी, कहना मान हमारा।
पाला इसको प्रेमभाव मे, ज्ञान सार दिया सारा॥
शत्रु यदि हूं तो मैं हू, न इसने कुछ तेरा बिगाड़ा।
तैयार खड़ा हूं पील यन्त्र में, पहिले जिस्म हमारा॥

दौड़

पील पहिले बस मुझको, द्वेष जिससे है तुझको।
आपसे समझाता हूं, यह दुख मत दिखला मुझको,
बस यही बात चाहता हूं॥

दोहा (शिष्य)

मुनिराज के सुन वचन, बोला पालक बाद।
तन मन खुश सब हो गया, लगा आन अब स्वाद॥

छन्द (पालक)

स्वाद बदले का सभी, अब ही तो है आने लगा।
छोड़ दे लघु शिष्य को, किसको यह समझाने लगा॥
जिस तरह तुझको मिले दुःख, काम वह करना मुझे।
पीलूंगा तड़पा करके इसको, दुःख मैं दिखलाऊं तुझे॥
तूने सावत्थी नगर में; खिष्ट मुझको था किया।
सार यह मत का तुम्हारा, उस वदी का फल लिया॥

दोहा (सुगुप्त)

लघु शिष्य ने सब सुनी, बातें करके ध्यान।
नमस्कार कर गुरु को; बोला मधुर जबान॥

छन्द (लघु शिष्य)

नम्र निवेदन एक मेरा, गुरुजी सुन लीजिये।
बन गया अब सूत निरमल को, कपास न कीजिये॥
सद्धर्म को अर्पण करूं सब, स्वाद अब आने लगा।
भय गुरुजी इस समय मैं, क्षत्रिय कब खाने लगा॥

गाना नं० ४८ (लघु शिष्य का गुरुस्कन्धकाचार्य को कहना)

आपकी कृपा से अब मैं, अपनी सूरत देख ली।
मिट गया सारा भ्रम जब, असली सूरत देख ली॥
थक गया मैं ढूंढता, लेकिन यह थे परदे नशीन।
ज्ञान दीपक से कि अब, परदे में सूरत देख ली॥२॥
सब अनित्य रंगरूप की, खातिर भटकता मैं रहा।
आनन्द अपूर्व मिल गया जा, थी जरूरत देखली॥३॥
जिह्वा और माला के दाने, फेरता मुद्दत रहा।
छोड़ दी जब अपने इस, मन की कदूरत देख ली॥४॥

ज्ञानमय हूं मुझ में अब यह, कर्ममल कुछ भी नहीं।
ध्यान धरके शुक्र सच्चिदानन्द, अमूर्त देख ली ॥४॥

दोहा (लघु शिष्य)

इस दिन के ही वास्ते, शीश मुंडाया आन।
बन्ध अनादि तोड़कर, लेऊं मोक्ष निर्वाण ॥

अवश्यमेव एक दिन छुटे, यह जिस्म साथ नहीं जावेगा।
अनमोल समय यह मिला आन, फिर नहीं पता कब आवेगा ॥
क्षपक श्रेणी चढ़ूं अभी, तन से मोह जाल हटाया है।
जिस दिन के लिये भटकता था, बस आज वही दिन आया है ॥

दोहा (सुगुप्त)

ज्ञान दर्श चारित्र सम, और शान्त रस लीन।
सम दम खम शुभ भाव से, योग हुए शुद्ध तीन ॥
इधर चढ़े परिणाम, उधर दुष्टों ने चढ़ाया घानी में।
पाकर केवल ज्ञान पहुँच गये, अक्षय राजधानी में ॥
सर्वज्ञ देव ने जो भाषा, कहीं आया फर्क न आना है।
हाल देख खन्दक ऋषि के, झट क्रोध वदन भर आया है ॥

दोहा (सुगुप्त)

आयु का बल घट गया, कर न सके कुछ और।
होनहार का एक दम, पड़ा आन कर जोर ॥

दोहा (स्कन्धकाचार्य)

अहो अतुल्य यह पाप है, ऐसा अनर्थ घोर।
नदी खून की बह गई, जरा मचा न शोर ॥

छन्द (स्कन्धक)

क्या सभी अभव्य हैं, मुनि पांचसौ मारे गये।
हृदय सभी के पत्थर हैं, क्या वज्र के ढाले हुये॥
अच्छा जो में जप तप किया, उसका मुझे यह फल मिले।
नाश मैं इनका करूं, और तोड़ डालूं सब किले॥
बेच दी करणी सभी, खंदक ने नियाना कर दिया।
दुष्ट पालक ने मुनि, घानी में उस दम धर दिया॥
श्वास पूरे हो गये गुस्से के, बस विराधक हुआ।
साधक हुआ संसार का, और मोक्ष का बाधक हुआ॥

दोहा (मुगुप्त)

स्कन्धक जाकर देवता, हो गया अग्नि कुमार।
इधर मांस ले व्योम में, पक्षी उड़े अपार॥
जिसको जो कुछ मिला वही, पक्षी वहाँ से ले दौड़ा है।
लालच के वश कोई ले गया, ज्यादा और कोई थोड़ा है॥
टुकड़ा एक रत्न कंबल का, रजोहरण जिसमें लिपटी।
खून मास का भरा हुआ, एक चील उसी को आ चिपटी॥
लेकर उडी वहा से बैठी, राजमहल ऊंचे जाकर।
लगी जिस समय खान मिला, नहीं सार पड़ा नीचे आकर॥
जब देखा इसे महारानी ने तो, रजोहरण कम्बल पाया।
पुरन्द्र यशा मन घबराई, झट भूप महल में बुलवाया॥

दोहा (पुरन्द्र यशा)

प्राणनाथ यह देखिये, कंपा कलेजा आज।
क्या कोई मारा गया, बाग बीच मुनिराज॥

दोहा (सुगुप्त)

हाल देख भूपाल का, गया कलेजा कांप ।
छाती पर से एक दम, गया जिस तरह सांप ॥
हो गया नृप का फक चेहरा, न शक्ति रही वदन में है ।
क्या बतलाऊं अब रानी को, बस यही सोच रहा मन में है।
लाचार कहा क्या बतलाऊं, गई डोर छूट नहीं हाथों में ॥
यह महाघोर किया पाप आन, मैंने वजीर की बातों में ।

दोहा (पुरन्द्रयशा)

दुःख सागर में मग्न हो, बहा रही जल नयन ॥
कहन लगी भूपाल से, रानी ऐसे बैन ।

गाना नं० ४६

(शोकाकुल रानी पुरन्द्र यशा का)

अय पति तूने कराया, जुल्म यह अति घोर है ।
दुष्ट पालक सा अभव्य, दुनियां में न कोई और है ॥१॥
पांच सौ शिष्यों सहित, भाई मेरा स्कन्धक मुनि ।
पीलते-पीलते यंत्र में हा, जिनको हो गया भोर है ॥२॥
उफ तलक किसी ने न किया, अन्धेर कैसा छा गया ।
जहां किसी को दुःख मिले, वहां पर तो मचता शोर है ॥३॥
मातायें सुन मर जायेंगी, जिनके थे यह शोभन कुंवर ।
हाय उस दम वेदना, होगी सही किम नीर है ॥४॥
राज जन और फौज पल्टन, क्या किले नर नारी हैं ।
अब तो सब गारत बने, रहनी न यहां कोई ठौर है ॥५॥
अब सहूं कैसे अतुल दुःख, जान भी जाती नहीं ॥
मैंने कर्म खोटे किये, आय के बन्द का जोर ॥६॥

यदि शुक्ल मुझ को पता, होता अनर्थ हो जायगा ।
फिर पिया यह हाथ से, हरगिज न छुटती डौर है ॥

दोहा (दंडक)

महा खेद मैंने किया, कुछ भी नहीं विचार ।
ऐसे पापी दुष्ट को दिये, सभी अधिकार ॥

गाना नं० ५० (दंडक का विलाप)

(अब मैं धरूँ, किस तरह धीर)

देख देख यह जुल्म भयानक, उठे कलेजे पीर ॥टेक॥
राज कुंवर खन्धक मुनि त्यागी, शूर वीर गम्भीर ।
फूल कमल से वदन पील दिये, घानी सकल शरीर ॥१॥
बिल-बिल रोवे रानी मेरी, जिस का खन्धक वीर ।
खबर सुनत ही प्राण तजेंगी, पीया जिनका क्षीर ॥२॥
ज्ञात मुझे होता नहीं रखता, ऐसा दुष्ट वजीर ।
बात सुनेंगे सेवक जिनके, लेगें कलेजे तीर ॥३॥
शुक्ल समय बीता नहीं आता, बहे नयनों से नीर ।
सब रोगों की एक औषधी, श्री जिन धर्म आखीर ॥४॥

दोहा (दंडक)

धिक ऐसे ससार को, और मुझे धिक्कार ।
अब दिल में यह ही बसा, तप संयम लेऊं धार ॥

इधर विचार किया नृप ने वहां, उपयोग देव ने लाया है ।
सब देख बाग का हाल उसी दम, क्रोध वदन में छाया है ॥
अग्नि कुमार उस सुर ने आकर, अग्नि तुरत लगाई है ।
देख प्रचंड मची ज्वाला, जनता मन में घबराई है ॥

हा हा कार मचा सारे, भागे सब जान बचाने को।
जहां पर कोई मनुष्य नजर पड़ा, सुर अग्नि लगा जलाने को॥
पुरन्द्र यशा की शासन देवी ने, आ करी सहाई है।
मुनि सुव्रत के पास, पहुंचा कर दीक्षा उसे दिलाई है॥
दंडक और पालक दोनों को, दुःख सुर ने दिये अति भारी।
दुःख अतुल भोगने को मंत्री, गया नर्क सातवीं मंझारी॥
काल अनन्त अन्त नहीं आना, पालक ने दुःख भरना है।
अभव्य स्वभाव है जिस प्राणी का, कभी न उसने तरना है॥

दोहा (सुगुप्त)

दंडक नृप के देश में, प्रलय हुई अपार।
नर्क और तिर्यंच में, गये बहुत नर-नार॥

उसी दिवस से यह अटवी, दंडकारण्य कहलाती है।
कर्म बड़े बलवान यहाँ न, पेश किसी की जाती है॥
उस दंडक राजा ने भव-भव में, जन्म मरण दुख पाया है।
फिर जन्मा गधाधिप पक्षी, महारोग बदन मे छाया है॥
अब मुनियों के दर्श से इसको, जाति स्मरण ज्ञान हुआ।
जब लगा देखने पूर्व जन्म, पालक खधक का ध्यान हुआ॥
तब उसी समय यह गिरा धरण में, पक्षी मूर्छा खा करके।
सीता ने हमारे पैरों पर, यह पक्षी डाला ला करके।

छन्द (सुगुप्त)

स्पर्श औषधी लब्धि हमें, पक्षी का जिस दम तन लगा।
वेदना उपशम हुई, जो रोग था सब ही भगा॥
त्याग तन मन से किया, नहीं घात जीवों की करें।
बन गया धर्मी धर्म धारण, विशुद्ध मन से धरें॥
अब तुम्हारे शरण है, इसकी भी रक्षा कीजिये।

गाना नं० ५१

(तर्ज-) (कौन कहता है कि जालिम)

सर्वसिद्धी के लिये ब्रह्मचर्य एक प्रधान है ।।
सत्य भाषण दूसरा निर्वद्य मेढी समान है ॥१॥
समभाव और एकाग्रता, निज लक्ष मे तल्लीन हो ।
निर्भिकनिरभिमान, और साधन सभी का ज्ञान है ॥२॥
सेवा भक्ति और विनय से, योग्य गुरु की हो कृपा ।
एकान्त सेवी मौन ग्राही, अटल श्रद्धा वान है ॥३॥
कार्याकार्य विचारक, और भाव ऊँचे हों सदा ।
गुरु धर्म शास्त्र देव संघ सेवा में जिसका ध्यान है ॥४॥
दान तपजप भावना, शुभ पुण्य का संचय भी हो—
शुकल साधन धर्म ध्यानि, शुद्ध खान अरु पान है ॥५॥
जैसी जिसकी भावना, सिद्धि भी तद्नुसार हो ।
मंत्र का नम्बर बदलने, का भी जिसको भान है ॥६॥

दोहा

एकान्त भूमि शुद्धात्मा, जितेन्द्रिय व्रत धार ।
पाव बांध वह वृक्ष से, नीचे मुख सुविचार ॥
नीचे मुख सुविचार मन्त्र मे, अपना ध्यान जमाया था ।
बारह वर्ष सात दिन का विद्या प्रारम्भ लगाया था ॥
था चहु और बासो का वन, जहा पवन अति गुंजार करे ।
पर क्या मजाल है दृष्टि की, अन्दर को जरा पसार करे ॥
शूर्पणखा वहा तीन दिवस के, बाद मे आया करती थी ।
सुत शम्बूक के लिये खाद्यपदार्थ, वन मे लाया करती थी ॥
विद्या साधत बीत गये, यहा बारा वर्ष चार दिन है ।
सिद्धि प्राप्त लगी होने पर, मिले न रत्न पुण्य बिन है ।

तेज महान सूर्य समान गंधूर में लगा चमकने को॥
लटक रहा था जहां पर खांडा, शम्बूक लगा हर्पने को।

दोहा

रूप ऋद्धि बुद्धि अति, सेवा भक्ति महान्।
होनहार आगे सभी, बन जाते नादान॥
रूप कहे मैं ही मैं हूं, ऋद्धि कहे मैं कहलाती हूँ
बुद्धि कहे मैं तुम दोनों का, एक भास कर जाती हू॥
होनी लगी मुस्कराने, और बोली जब मैं आऊँगी।
रूप ऋद्धि बुद्धि आदि, कुछ हो सब पर छा जाऊँगी॥

— —

विग्रह का बीज

दोहा

क्रीड़ा कारण आ गया, फिरता लक्ष्मण वीर।
दैवयोग आगे बढ़ा, कौंचरवा के तीर॥
वंश जाल में पड़ी नजर, सूर्य मानिन्द प्रकाश हुआ।
क्या रवि आन बैठा इसमें, लक्ष्मण को ऐसा भास हुआ॥
वंश जाल में खड्ग अपूर्व, अपनी चमक दिखाता है।
देख अनुपम शस्त्र वीर, योद्धा का मन ललचाता है॥
झट हाथ पसार के खड्ग लिया, लक्ष्मण का मन हर्षाया है।
अज्ञातपने से परीक्षा कारण, वंश जाल पे वाहा है॥
होनी ने अपना काम किया, शंबूक की आशा धरी रही।
वह जीव बसा जा परभव में, सम्पत्ति मन यहाँ पर पड़ी रही॥

शम्बूक

दोहा

पाताल लक का अधिपति, खर नामक भूपाल।
शूर्पणखा रानी अति, सुन्दर रूप रसाल॥
राजकुमार थे दो जिसके, शम्बूक और था सुनन्दन।
युवावस्था थी जिन की, शुभ रूप वर्ण जैसे कुन्दन॥
सूर्य हास खांडा सांधू, हर घड़ी यही शम्बूक चाहता।
नित्य विघ्न डालते माता पिता, यूं नहीं सफल होने पाता॥

दोहा

एक दिवस हठ मे खड़ा, बोला हो विकाल।
विघ्न यदि देगा कोई, उसका आया काल॥
उसका आया काल, लगे क्यों सोता शेर जगाने।
मारूं धर तलवार अक्ल, सारी आ जाय ठिकाने॥
सोच समझ नहीं करते कायर, अपनी अपनी ताने।
विद्या साधन जाय सूर, शबूक न डर गिज माने॥

दोहा

विघ्न जो कोई देवेगा, जान अपनी खोवेगा:
दण्ड कारण्य मे जाऊँ, द्वादश वर्ष सात दिन का,
साधन प्रारम्भ लगाऊँ॥

दोहा

सूर्य हास साधन अमि, कुंवर के मन उन्माद।
होन हार लेकर गई, दण्डक वन के माह॥

तेज महान सूर्य समान गंधूर में लगा चमकने को ॥
लटक रहा था जहां पर खांडा, शम्बूक लगा हर्पने को ।

दोहा

रूप ऋद्धि बुद्धि अति, सेवा भक्ति महान् ।
होनहार आगे सभी, बन जाते नादान ॥

रूप कहे मैं ही मैं हूं, ऋद्धि कहे मैं कहलाती हूँ
बुद्धि कहे मैं तुम दोनों का, एक ग्रास कर जाती हूं ॥
होनी लगी मुस्कराने, और बोली जब मैं आऊँगी ।
रूप ऋद्धि बुद्धि आदि, कुछ हो सब पर छा जाऊँगी ॥

— —

विग्रह का बीज

दोहा

क्रीड़ा कारण आ गया, फिरता लक्ष्मण वीर ।
देवयोग आगे बढ़ा, कौंचरवा के तीर ॥

वंश जाल में पड़ी नजर, सूर्य मानिन्द प्रकाश हुआ ।
क्या रवि आन बैठा इसमें, लक्ष्मण को ऐसा भास हुआ ॥
वंश जाल में खड्ग अपूर्व, अपनी चमक दिखाता है ।
देख अनुपम शस्त्र वीर, योद्धा का मन ललचाता है ॥
झट हाथ पसार के खड्ग लिया, लक्ष्मण का मन हर्षाया है ।
अज्ञातपने से परीक्षा कारण, वंश जाल पे वाहा है ॥
होनी ने अपना काम किया, शंबूक की आशा धरी रही ।
वह जीव बसा जा परभव में, सम्पत्ति सब यहाँ पर पड़ी रही ॥

दोहा

जो जो कुछ बीतक हुआ, सभी बताया हाल।
रामचन्द्र फिर अनुज से, बोल उठे तत्काल॥

दोहा (राम)

भाई तूने बो दिया, झगड़े का यह बीज।
जिसकी यह तलवार वह, नहीं मामूली चीज॥

मामूली नहीं चीज फना, कर दिया शूर अलबेला।
है कोई उच्च राजवंशीय, न समझो उसे अकेला॥
दल बल सेना आने वाली है, कोई रेलम ठेला।
देख अभी दीखेगा वन में, भरा हुआ रणमेला॥

गाना नं० ५३

(रामचन्द्र जी का लक्ष्मण को कहना)

पहिन वस्त्र अभी तैयार, हो जाना मुनासिब है।
पानी आने से पहिले ही. बन्ध लाना मुनासिब है॥१॥
ख्याल है सिर्फ सीता का, और बस फिकर न कोई।
एक यहां पर रहे दूजे का, जाना ही मुनासिब है॥२॥
यहां का फैसला किये बिना, आगे न जाना है।
जो होता धर्म क्षत्रिय का, वह दर्शाना मुनासिब है॥३॥
जो होना था सो हो बीता, ख्याल मन से भुला दीजे।
उल्लंघ नीति यह आवें तो, धनुष उठाना मुनासिब है॥४॥

तू प्रातःकाल सदा उठकर, माता को शीश झुकाता था।
और माता माता कह कर मेरा, हृदय कमल खिलाता था॥

दोहा (शूर्पणखा)

सिर पीटूं छाती धुनूं, हा शंबूक हा लाल।
और बता किससे कहूं, वन में अपना हाल॥

गाना नं० ५४ (शूर्पणखा का विलाप)

तर्ज—बहर तवील

छैया मैया को तजकर, किनारा गया,
मेरी जान जिगर का सहारा गया।
मुझे छोड़ अभागिन को तू चल बसा,
और सर्वस्व कैसे बिसारा गया॥१॥
मैं तो आई खुशी से यहां दौड़ कर,
साथ लाया न जहर करारा गया।
जिसको खाकर के मैं भी जाती उधर,
जिस जगह मेरा बेटा प्यारा गया॥२॥
हाय लटकता यह धड़ है पड़ा सिर उधर,
इससे धरा कलेजा हमारा गया।
अय बेटा करूं तो करूं क्या बता,
मुझे जान जिगर आति मारा गया॥३॥
मत जा साधन को दिया कहा फेरकर,
जिससे कटकर के सिर यह तुम्हारा गया।
घर चला गोद खाली कुंवर मात की,
मेरे घर का तो सारा उजारा गया॥४॥

पद चिह्न देखती जाय कभी, चहुं ओर को दृष्टि घुमाती है।
जब नजर पड़े वह राम लखन, तब ऐसा सोचती जाती है॥
क्या यह रवि चन्द्रमा हैं, या दो स्वर्गों के इन्द्र हैं।
क्या साक्षात् है नल कुवेर, अति रूप कला में सुन्दर हैं॥

दोहा

काम बाण जिसको लगे, सुध-बुध दे बिसराय।
शोक हुआ काफूर सब, बसे राम दिल मांय॥

लगी देख छिप वृक्षों में, काम बसा रग-रग अन्दर।
लाज शर्म उड़ गई हुई, बेशर्म जाति जैसे बन्दर॥
मध्य भाग में दोनों के, मानो हो रहा उजाला है।
वृक्षों पर यौवन बरसा, रंग हरा बहुत कुछ काला है॥

दोहा (शूर्पणखा मन में)

रत्नों के पुतले बने, कान्ति रवि समान।
क्या सब दुनिया का मिला, रूप इन्हों को आन॥

क्या विजली नक्षत्र व्योम से, बैठे टूट सितारे हैं।
रम गये हाड और मिंजी क्या, रग रग में फूल हजारे हैं॥
हैं निश्चय पुण्यवान् किसी, यह भूप के राजदुलारे हैं।
और सभी कुछ हेच मुझे, बस लगते यही प्यारे हैं॥

दोहा

पलक नहीं झपके जरा, देख रही हर बार।
दृष्टिगोचर फिर हुई, उसी जगह सिया नार॥

देख हुई हैरान कहाँ से, यह चन्द्रमा चढ़ आया।
शरद् ऋतु में प्रातःकाल, जैसे कि सूर्य निकल आया॥
इन्द्राणी से अधिक रूप, फिर मैं पसन्द क्या आऊंगी।
रूप रोशनी और बढ़ा कर, पास इन्हीं के जाऊंगी॥

हाथ कड़े परिवन्द आरसी, चूड़ा पछेली ।
गजरा और जड़ाऊँ पहुची, मेंहदी से रची हथेली ॥
पहिने सब छाप छल्ले, अंगूठी ज्यूं मूंगफली ।
थी पुत्र विरहनी पर, काम वस नीत चली ।

बदल

फूली नहीं समाती तन में, खुश हो रही घूम उस वन में ।
जैसे बिजली चमके घन में, फिरे अकेली नार ॥ फिरे० ॥३॥
कड़े छड़े रमझोल, मेंहदी बिछुवे और मोर ।
ठुमक ठुमक चाले गहरो, सारे करते शोर ॥
पाँवों में पायजेब सोहे, घूंघर वाली चहुं ओर ।
दुबक छुपक आई जैसे, पाड़ लाने चोर ॥

बदल

रही घूम विपन के थल में, गन्धहस्ती जैसे दल में ।
घड़ रही बनावट मन में, करे इधर उधर संचार ॥फिरे० ॥४॥

दोहा

देख हाल यह राम ने, मन में किया विचार ।
किस कारण उद्यान में, फिरे अकेली नार ॥
शूर्पणखा को इस तरह, बोल उठे श्रीराम ।
इस दुर्गम उद्यान में, कौन तुम्हारा काम ॥

कहो वृत्तान्त अपना सारा, किस कारण वन में आई हो ।
और इधर-उधर क्या देख रही, कुछ भय न जरा मन लाई हो ॥
क्या यहीं चौला है गिरफ्तार, जिसकी तुम फिरो तलाशी में ।
क्या आई पैदल इस वन में, या बैठ विमान आकाशी में ॥

छन्द

लड़-लड़ के दोनों मर गये, खोटे व्यसन का फल मिला।
रह गई वन में अकेली, कांपता मेरा दिला॥
फिरते-फिरते थक गई, रस्ता न कोई इन्सान है।
धड़कता है मन मेरा, किन्तु न निकली जान है॥
इस समय मेरा सहायक, धर्म या प्रभु आप हैं।
शान्ति मुझको मिल गई, बस कट गये संताप हैं॥
कष्ट मेरा शील के प्रताप, से सब टल गया।
इस जन्म में बस आपसा. भर्तार मुझको मिल गया॥

गाना नम्बर ५७

(रामचन्द्र और शूरपणखां का सम्मिलित गाना)

शूर्पणखा—कल सुरझ था यह जंगल, अब है महकार छाई।
चमत्कार पंचवटी में, क्या रोशनी फैलाई॥१॥
तुम किस के हो शाहजादे, कब से यहाँ पे आये।
दोनों ही खूबसूरत चेहरे, की क्या गोलाई॥
राम—अयुध्यापुरी सुनी है, दशरथ के हम दुलारे।
सीता यह राजरानी, लक्ष्मण यह मेरा भाई॥३॥
तेरह हैं साल गुजरे, फिरते हैं हम वनों में।
रहती है तू कहाँ पर, यहाँ पे किधर से आई॥४॥
शूर्पणखाँ—क्या तुम न जानते हो, राजा की हूं मैं पुत्री।
मेरी रूप रोशनी ने, सल्तनत में धूम पाई॥५॥
राम—फिरती है क्यों अवारा, जंगल में इस तरह तू।
कामन नादान तेरे, दिल में यह क्या समाई॥६॥
शूर्पणखा—जादू भरी यह सूरत, दिल में वसी है मेरे।
अब आपके है कर में, दुख दर्द की दवाई॥७॥

एक नार है पास मेरे, दिन रात नींद नहीं आती है।
जा लक्ष्मण के पास अर्ज कर, ब्याह करना जा चाहती है॥

दोहा

कामान्धी को खबर ना, गई अनुज के पास।
हाथ जोड़ करने लगी, चरणों में अरदास॥

शूर्प०–हे नाथ विनती दासी की, करुणा कर हृदय धर दीजे।
पास आपके भेजी हूँ, अब विवाह मेरे संग कर लीजे॥
लक्ष्मण एकदम झुंभलाया, बोला ज्यादा बक बक न कर।
जात है तू औरत की, वरना अभी उड़ा दूं तेरा सिर॥

दोहा (लक्ष्मण)

क्यों कामन अन्धी हुई, फिरती शर्म उतार।
पहिले मेरे भ्रात को, बना चुकी भर्तार॥

कहां गया वह सत्य तेरा, जो पति दूसरा चाहती है।
बन की रही चुडैल आन, नखरे हमको बतलाती है॥
शूर्पणखां सहमी जाती, लक्ष्मण बेधड़क सुनाते हैं।
सिया राम उधर हंस हंस कर, दोनों हाथों ताल बजाते हैं॥

दोहा

चल हट यहां से अलग हट, गले न तेरी दाल।
और कहीं पर आप यह, डालो अपना जाल॥

बड़े भाव से करी प्रार्थना, भाभी लगे हमारी है।
देख आरिसा जरा दिखाऊं, क्या यह शक्ल तुम्हारी है॥
टिम टिमा कर खड़ी सामने, नयनों को फड़काती है।
झूठ बोलते हुवे जरा भी, मन में नहीं लजाती है॥
छल फरेब करती घर घालो, रूप बना कर आई है।
क्या इसी शक्ल पर दो पुरुषों, ने कहती मान गंवाई है॥

अनुचित कहती शब्द चली, पाताल लंक में आई है।
खरदूषण को शंबूक के, मारे की खबर सुनाई है॥

दोहा (शूर्पणखा)

महा घोर अन्याय क्या, प्रलय होगया आज।
एक लाल शंबूक बिना, सूना होगया राज॥

हाय निर्दयी ने कैसे, शंबूक की गर्दन काट दई।
और वनचर जीवों को सब, टुकड़े टुकड़े करके बांट दई॥
कुछ मुझसे भी वह पापी, अनुचित छेड़ाखानी करने लगे।
जब मैंने उनको धमकाया, तो लड़ने का दम भरने लगे॥

दोहा

सुत मारा जिस दिन सुना, रोष गया तन छाय।
उसी समय भूपाल ने, योद्धा लिये बुलाय॥

चौदह सहस्र महायोद्धा, दंडकारण्य में आये हैं।
महा गर्द गगन में छाय गई, आँधी से ज्यादा छाये हैं॥
सब देख हाल यह अनुज, भ्रात को रामचन्द्र समझाते हैं।
अब सावधान हो जा भाई, शत्रु टिड्डी दल आवे हैं॥

दोहा (राम)

अब लक्ष्मण तुम यहां रहो, जनक दुलारी पास।
अरि दल के आऊं अभी, उड़ाकर होश हवास॥

हाथ जोड़ लक्ष्मण बोले, महाराज विनती सुन लीजे।
तुम रहो पास सीता जी के, मुझको रण में जाने दीजे॥
मैंने ही कांटे बोए हैं, मैं ही उनका मुँह तोड़ूंगा।
सब करूं चपट मैदान धनुप, लेकर जब रण दौड़ूंगा॥

प्रारंभिक ज्वर में हे भाई, औषधि जहर बन जाती है।
और राग द्वेष में अंधों को, शुभ शिक्षा कभी न भाती है॥

दोहा (राम)

बुद्धिमान् हो तुम लखन, हर फन में होशियार।
जाओ अब रणरंग में, करो अरि की छार॥

रणभूमि

दोहा

शीश नमा करके चले, सुमित्रा का लाल।
या यों कहदें चल दिया, खर दूषण का काल॥
जा ललकारा सामने, करी धनुष टंकार।
मची खलबली फौज में, भाग हो गये चार॥
गड़गड़ाहट घनघोर शब्द, सुन सब दल का मन कांप पड़ा।
यह क्या आफत आती है, खर दूषण का दिल हांप पड़ा॥
आधि शक्ति तोड़ लखन ने, बाणों की झड़ी लगाई है।
आंधी आगे जैसे तृणों, ऐसे सब फौज भगाई है॥
जैसे बादल व्योम बीच, दल में योधा यों गर्ज रहा।
या बालू के घर गेरण को, वारि बाह जैसे बरस रहा॥
शूर्पणखा ने देख हाल यह, दांतों में अंगुली डाली है।
फिर बोली हाय मितम लक्ष्मण, कर देगा सब दल खाली है॥
बिजली के मानिन्द कड़क रहा, इसमें अब कैसे पार पड़े।
शक्ति हीन हो गए योद्धा सब, झांक रहे हैं खड़े खड़े॥
बिना वीर रावण के यहां न, पेश किसी की चलनी है।
एक नपूते ने सबका हृदय, किया छलनी छलनी है॥

और कहती है तो मनुष्यों पर, चौदह हजार चढ़ धाये हैं।
फिर भी बतलाती खतरा है, नहीं तो काबू में आये हैं॥
प्रथम तो यह ठीक नहीं, यदि है भी तो क्या हमें पड़ी।
मर जाने दो उन दुष्टों को, रोने दो इसको खड़ी खड़ी॥
बीज नाश हो जाये तो, कुल का कलंक मिट जायेगा॥
यदि सम्मुख नहीं पीठ पीछे, कहते सो भी हट जायेगा।
दो चार घड़ी सिर पीट पीट, कर अपने रस्ते जावेगी।
क्रिया कर्म जसा इसने, उसका वैसा फल पावेगी॥

दोहा

शूर्पणखा दिल सोचती, बना नहीं कुछ काम।
बतलाऊं इसको वही, जो थी सुन्दर वाम॥

है महा लम्पटी इन बातों का, कान इधर झट लायेगा।
कम से कम यह तो निश्चय है, एक बार वहां पर जायेगा॥
जैसे वीन बजाने पर बस, नाग मस्त हो जाता है।
ऐसे ही मस्त करूं इसको, अब यही समझ में आता है॥

दोहा (शूर्पणखा)

लाज शर्म को छोड़ कर, बोली रावण साथ।
अति आश्चर्य की सुनो, एक और है बात॥

नारी जिनके पास एक, सहस्रांशु जैसे चढ़ा हुआ।
या मानो वनरूपी रजनी के, गल चन्द्रमा पड़ा हुआ॥
स्फटिक रत्न जैसा तन है, जैसे सांचे में ढाली है।
मानिन्द दामिनी के कान्ति, चालि गति हंस निराली है॥
नलकुमरी न तुलना करती, न उपमा कोई जहान में है।
अमृत यदि कुछ है दुनियां में, तो उसकी एक जबान में है॥

काम राग में मस्त हुवे, मृगों की डार गोली खावें।
चक्षु इन्द्रिय के वस पतंग, दीपक की लौ में मर जावें॥
एक एक इन्द्रिय ने इनको, दुःख सागर में गेर दिया।
यहां आन विचारें रावण को, पांचों विषयों ने घेर लिया॥

दोहा

वीतराग उपदेश में, धर्म चार प्रकार।
दान शील तप भावना, यही धर्म का सार॥

चित्त वित्त अनुसार दान भी, कई विध से बतलाते हैं।
निर्मल आत्म बने तभी जब, संयम ध्यान लगाते हैं॥
शुद्ध भावना भाने वाले, जीव अतुल सुख पाते हैं।
पर शील पालना अति कठिन, यहां कायर जन गिर जाते हैं॥

गाना नं० ५८

(ब्रह्मचर्य महिमा)

जीव रे तू शील रंग धर अंग।
बाकी सभी कुरंग है रे, यही करारा रंग॥ टेर॥
अग्नि भी शीतल बने रे, सर्प होय फूलमाल।
शेर हिरन मानिन्द बने रे, अन्धपना लहे व्याल॥१॥
पर्वत सम मार्ग बने जी, विष भी अमृत होय।
विघ्न यहां उत्सव बने जी, दुर्जन सज्जन होय॥२॥
सागर छोटा सर बने जी, अटवी निज घर बार।
मुश्किल सब आसान हों जी, शील अति सुखकार॥३॥
जो कुशील के वश पड़े जी, तब उपजे मोहग।
शुभ करनी को तिलाञ्जलि जी, तप जप जावें भाग॥४॥
अपयश की डौंडी पीटे जी, कुल के लागे दाग।
द्वार दिखावे नर्क का जी, फूट जायें सब भाग॥५॥

नव तेज यह रामचन्द्र के, हृदय मेरा हिलाते हैं।
जो सजे खड़े वस्त्र शस्त्र से, काल रूप दिखलाते हैं॥

दोहा (रावण)

आगे पैर बढ़े नहीं, पीछे घटता मान।
गिरफ्तार चौला हुआ, बने किस तरह काम॥

जब तक बैठे हैं राम सामने, सिया हाथ न आयेगी।
अब करूं याद विद्या अवलोकिनी, भेद वही बतलायेगी॥
जनक सुता हर लेने का, यही एक ढंग निराला है।
आगे बैठा शेर दहूं, पीछे तो भी मुंह काला है॥

दोहा

अवलोकिनी विद्या तुरत, करि याद भूपाल।
आन खड़ी हुई सामने, लगी पूछने हाल॥
लगी पूछने हाल आज, किस कारण मुझे बुलाई।
बतलाओ जो काम मेरे, लायक में करने आई॥
मुश्किल से आसान करूं जैसे बच्चे को दाई।
उसी बात में हूँ प्रसन्न, जो हो तुमको सुखदाई॥

दौड़

सभी कारण बतलाइये, आज मुझको अजमाइये।
हाथ अपने दिखलाऊं, शक्ति के अनुसार काम जो हो,
पूरा कर लाऊं॥

दोहा (रावण)

काम आज ये ही मेरा, पाऊं सीता नार।
और नहीं चाहना मुझे, करो यही उपकार॥

घोर नरक स्वीकार मुझे, ऋद्धि की कुछ दरकार नहीं।
बिना सिया के दुनियां में, मुझको कुछ लगता सार नहीं॥
वे ही ढंग वता मुझको, जैसे सीता पा सकता हूं।
फिर राजी से नाराजी से, जैसे हो समझा सकता हूं॥

दोहा

अवलोकिनी विद्या कहे, तजो ख्याल यह नीच।
फिर भी साच विचार क्यों, हृदय की लई मीच॥

यदि फूट गई किस्मत तेरी तो, मैं क्या यत्न वनाऊँगी।
जिस कारण मुझे बुलाया है, सो तो अब कुछ वतलाऊँगी॥
जब तक है श्री राम यहाँ पर, सिया हाथ न आने को।
सुरपति भी यदि आ जावे, तो पेश न उसकी जाने को॥

दोहा (अवलोकिनी)

लक्ष्मण जब लड़ने गया, राम किया संकेत।
सिंहनाद तेरा शब्द, सुन आऊं रणखेत॥

यदि भीड़ पड़े कोई तुम पर तो, मुझ को शीघ्र बुला लेना।
तू सिंहनाद कर शब्द मेरे, कानों तक जरा पहुचा देना॥
तुम करो शब्द अपने मुख से, बस रामचन्द्र उठ धायेगा।
पीछे सीता रहे अकेली, काम तुरन्त बन जायेगा॥
सुनते ही तजवीज भूप का, हृदय कमल प्रकाश हुआ।
बोला विद्या से तुम जावो, बस काम मेरा सब पास हुआ॥
अब पुण्य मेरा वृद्धि पर है, सब काम ठीक बनता जाता।
सीता को हरण करूं जल्दी, अब समय बहुत निकला जाता॥
अहा कैसा समय मिला, मन वांछित फल मैं पाऊँगा।
छलकर भेजूं अब रामचन्द्र को, सीता हर ले जाऊँगा॥

दोहा (सीता)

हे स्वामिन दिल में जरा, कुछ तो करो विचार।
तुम्हें बुलाने के लिये, लक्ष्मण रहा पुकार॥

गाना नं० ६० (सीता का राम से)

जावो जावो जी महाराज, लक्ष्मण ने सिंह नाद सुनाया॥टेर॥
प्रेमऐसा जिनका तुम साथ, दिवस कहो दिवस रात कहो रात।
तजे सुख राज पाठ सब ठाठ, वनों मे संग तुम्हारे आया॥१॥
जहाँ पर पड़ा कष्ट कोई आन, अगाड़ी हुआ आप सिरतान।
सुना जब चले वनों में राम, अवध का खाना तक न खाया॥२॥
हमारी सेवा करी दिन रात, समझा तुझे पिता मुझे मात।
नजर नीची न ऊँची बात, कभी न मुंह की तर्फ लखाया॥३॥
लिया शत्रु ने देवर घेर, जल्दी जावो मत लावो देर।
फेर में पड़े फेर से फेर, समय बीता न हाथ कभी आया॥४॥
मानो प्रीतम मेरी बात, करो शत्रु की जाकर घात।
मिले ना तुमको ऐसा भ्रात, पसीने की जा खून बहाया॥५॥
किया तुमने उनसे संकेत, पड़ा अब काम बीच रण खेत।
हर घड़ी शब्द सुनाई देत, शुक्ल यह दिल मेरा घबराया॥६॥

दोहा (राम)

यही सोच में कर रहा, अब सीता मनमाय
दुविधा के अन्दर फंसा, कहूं तुझे समझाय॥

गाना नं० ६१

लखन को जीते कोई, साक्षी यह मन देता नहीं।
जाऊँ अकेली छोड़ तुमको, यह भी मन कहता नहीं॥१॥
सोचो यह शत्रु का इलाका, घोर फिर उद्यान है।
हाल क्या तेरा बने, कुछ भी कहा जाता नहीं॥२॥

सीता हरण

गाना नं० ६२

[रावण और सीता का सम्वाद—गाना]

(रावण) कुछ नीर पिलादे, प्यासा मैं आया तेरे द्वार पर।
कुछ ख्याल कर उपकार कर॥ टेर॥
(सीता) विमान पास फिर देर लगी क्यों, जावे निज स्थान पर।
तू कौन कहां से आया,
(रावण) लंकापुर से॥
(सीता) क्या जल कहीं तुझे न पाया ?
(रावण) प्या निज कर से।
(सीता) जलाशय हरजां निर्मल जल, झरने वहें पहाड़ पर॥१॥
(रावण) वह जल हम नहीं पीते हैं,
(सीता) किस कारण से।
(रावण) बस निर्मल पर जीते हैं,
(सीता) तो कारण से॥
(रावण) जल्द पिलायो देर न लावो, कांटे पड़े जबान पर॥२॥
(सीता) पीलो यह धरा हुआ है,
(रावण) दो अन्दर से।
(सीता) शीतल ही भरा हुआ है,
(रावण) फिर दो कर में॥
(सीता) हम नहीं आते बाहर कुटी से, मत ज्यादा तकरार कर॥३॥
(रावण) क्या प्यासे जावें दर से,
(सीता) ऐसा न कहो।
(रावण) तो भर दो लोटा कर से,

(सीता) असुरनरेन्द्र थर्रावे. अरुणावर्त की टंकार पर ॥९॥
(रावण) मैं महाबली त्रिखण्डी,
(सीता) बिल्कुल खर है।
(रावण) है राम फ़कीर पाखण्डी,
(सीता) शेरे नर है ॥
(रावण) हरगिज न शोभे कौवे गल, तू रत्नों का हार वर ॥१०॥

दोहा (रावण)

आया हूं मैं लंक से. कर तेरा अनुराग।
निश्चय हृदय में धरो, खुले आपके भाग ॥
तुम त्रिखण्डी की पटरानी, बन गई चाल शुभ कर्मों की।
अब चन्द दिनों में ज्ञात हो जाओगी, तुम इन सब मर्मों की ॥
अब जल्दी पुष्पक विमान में बैठो, दूर सभी यह शर्म करो।
पलके पर मौज उड़ाओगी, दिल में न रंचक भर्म करो ॥

दोहा

रावण ने अनुचित वचन, कह इस तरह भाष।
सीता के भी उड़ गये, एक दम होश हवास ॥
देख अनुपम रूप भूप की, खुशी का न कोई पार रहा।
अब राजी से नाराजी से, बैठो विमान में मान कहा ॥
वज्र घात हुआ हृदय पर, मानिंद फूल मुर्झाई है।
ऊंचे स्वर से रोई सीता, नयनों में जल भर लाई है ॥

दोहा

प्रबल वीर रस धार कर, बोली सीता नार।
दुष्ट यहां से भाग जा, क्यों मरता बदकार ॥
आकर के श्रीराम वीर यह, धड़ से शीश उड़ादेंगे।
महा वज्रावर्तज धनुष बाण से, तेरे प्राण गंवादेंगे ॥

परवाह नहीं कुछ मरने की, मैं अभी जवान को काढ़ मरू ।
पर राम प्राण तज देवेगे, इसका कहो क्या मैं इलाज करू ॥

दोहा

सीता ऐसे कर रही, दुःख में रुदन अपार ॥
सुनने वाला कौन था, उस वन में नर नार ॥

अर्क जटी का पुत्र एक, जो रत्न जटी कहलाता था ।
विमान के द्वारा शूरवीर वह, कम्बुरू द्वीप में आता था ॥
रुदन सुना जब सीता का, कुछ मन में जरा विचारा है ।
यह सिया बहन भामडल की, जो जिगरी मित्र हमारा है ॥
श्री दशरथ की कुल वधू, रामचन्द्र की नार कहाती है ।
रावण हर के ले चला लंक में, अपना दुख सुनाती है ॥
यदि लड़ूं मैं रावण से तो, निश्चय प्राण गंगाऊंगा ।
पर कुछ भी हो क्षत्रापन को, हरगिज नहीं लाज लजाऊंगा ॥
जो कर्त्तव्य अपना पालूंगा, बेशक फल हाथ नहीं आवे ।
जो वक्त पड़े करदे टाला, वह क्षत्रिय नर्क बीच जावे ॥
खिला फूल जो आज बाग में, वह एक दिन कुमलावेगा ।
इस तन पिंजरे को छोड़, जीव मात्र परभव को जावेगा ॥

दोहा

कर्त्तव्य अपना समझ कर, खैंच लई तलवार ।
रावण के सन्मुख अड़ा, यों बोला ललकार ॥

दोहा (रत्नजटी)

दुर्बुद्धि दुरात्मा, नामर्द चोर के चोर, ।
कहां सिया को ले चला, देखूं तेरा जोर ॥

मूर्च्छित हुआ वहाँ से, फिसल कंदर के अन्दर जा पड़ा।
सीता सहायक देख, अपना यों कहे रावण खड़ा॥

दोहा (रावण)

जनक सुता रहो रंग में, सुख में दुःख न दिखाय।
भाग्य हीन संग राम के, फिरती थी वन मांय॥
मैं तीन खंड का नाथ, मेरे चरणों में राजे गिरते हैं।
उन सब के हृदय कांप उठें, जब मेरे नेत्र फिरते हैं॥
भूचर खेचर क्या तीन खंड के, भूप सभी आधीन मेरे।
क्यों रोती है पटरानी बन जावेगी, खुल गये भाग्य तेरे॥
थी कौवे रूप राम गल तू, रत्नों की माला पड़ी हुई।
तब लौट गई थी किस्मत तेरी, अब दीखे कुछ चढ़ी हुई॥
शोभे दूध शंख अन्दर, और जैसे लाल अगूठी में।
ऐसे तू मेरे संग शोभे, शस्त्र शूरे की मुट्ठी में॥
शशि सहित रजनी शोभे, हस्ती शोभे दो दांतों से।
मौन सहित मूर्ख शोभे, और चतुर आदमी वातों से॥
मोर शीश कलगी शोभे, शूरा शोभे रण के अन्दर।
यों तेरी शोभा रंग महल में, नहीं शोभती वन अन्दर॥
सब महारानियों के ऊपर, पटरानी तुझे बना दूंगा।
जो भी आज्ञा तुम देओगी, मस्तक पर उसे उठा लूंगा॥
निर्भय निजमन में हो जाओ, तुमको न कभी सताऊंगा।
मैं चाकर बनकर रहूं तेरा, किंकर बन हुक्म बजाऊंगा॥
शुभ जगह सदा मोती शोभे, मन में कुछ ध्यान लगाले तू।
धैर्य धर दस बीस दिनों तक, और मुझे अजमा ले तू॥
जो स्वयं हृदय से न चाहे, उस नारी का है नियम मुझे।
बस यही जरा सी अटक हटा दे, साफ साफ अब कहूं तुझे॥

जैसे हवा चले पूर्व की, ध्वजा तुरन्त पश्चिम जाती ।
यदि चले पश्चिम की तो, फटकारा खा पूर्व आती ॥
मन में सोच रही सीता, अपना नहीं धर्म गवाऊंगी ।
समय यदि आया तो रसना, खेंच तुरन्त मर जाऊंगी ॥

दोहा (सीता)

शील रत्न ही रत्न है, बाक़ी सब पाषाण ।
कहा श्री सर्वज्ञ ने, मिले अन्त निर्वाण ॥

जो नाक कान दोनों तोड़े, किस काम का वह फिर सोना है ।
यह ऐसा मुझको रूप मिला, बस रात दिवस का रोना है ॥
इस पापी रूप के कारण, पहिले, माता पिता ने दुख पाया ।
फिर भामण्डल भाई का मन था, इसी रूप ने भरमाया ॥
और इसी रूप को अटवी में, चोरों ने घेरा लाया था ।
उस समय श्री लक्ष्मण जी ने, उन सबको मार भगाया था ॥

दोहा (सीता)

कर्मों ने मुझ पर बुरा, डाला अब यह जाल ।
अनुमान सभी यह कह रहे, आने वाला काल ॥

दुर्निवार यह आपत्ति, पापी मम धर्म गवांयेगा ।
प्राणान्त यहाँ पर मैं कर दूं, पीछे रघुपति मर जावेगा ॥
धर्म हेत सब को त्यागो, सर्वज्ञ देव बतलाया है ।
यह बाक़ी सब सयोग जगत् के, झूठी सारी माया है ॥
राज्य पति परिवार सभी, अवसान में एक दिन छूटेगा ।
यह तन मेरा चमकीला भांडा, अवश्यमेव ही फूटेगा ॥
चोट पड़ी अब सिर पर आकर, तो फिर क्या घबराना है ।
सरवस्व चाहे अर्पण करदूं, आत्म का धर्म बचाना है ॥

तेरा धड़ से लें सिर तार, बनावे क्या मुझको पटरानी ॥२॥
तेरी सम्पति ऐशोआराम, खाक की मुट्ठी करूं तमाम।
मेरे भर्तार एक श्रीराम, बके मत काँचे सुनी कहानी ॥३॥
मुझे तू पैनी वर्छी जान, विष या कालकूट सामान।
किया तैं दुष्ट कर्म नादान, बचे न अब तेरी जिंदगानी ॥४॥

दोहा

वचन काट करते हुये, सुने खुशी से भूप।
जैसे सर्दी में लगे, मीठी सबको धूप॥

जैसे बाराती जन गाली, जान बूझ कर सहते हैं।
सुन अयोग्य भाषा अधिकारी को, हजूर ही कहते हैं॥
यही हाल कामांधे का, कुछ नहीं समझ में लाता है।
वर्ताव देख वैदेही का, रावण मन को समझाता है॥

दोहा (रावण)

सीता की सब गालियाँ, मानो लगते फूल।
जो मर्जी मुख से कहे, मुझे रंज न मूल॥

प्रेम पुराना राम संग है, नया नया यह काम सभी।
किया तंग तो ऐसा न हो, खेल जान पर जाय कभी॥
प्रेम पशु का भी जैसे अपने रक्षक से होता है।
फिर यह तो राजदुलारी है, त्रिया हठ भी नहीं छोटा है॥
अब रोती हुई इसको महलों में ले जाना नहीं अच्छा है।
सुन न लेवे रुदन कोई, जितना नर नारी बच्चा है॥
देव रमण उद्यान बीच, पद्मन्त इसे ठहराना है।
प्रेम भाव से शनैः-शनैः फिर, सीता को समझाना है॥

कर्म शुभाशुभ जीवों को, कैसा सुख दुख दिखलाते हैं।
सम ज्ञान दर्श चरित्र विन, यह नष्ट नहीं हो पाते हैं॥

दोहा

सीता बैठी बाग में, रावण लंका मांय।
लक्ष्मण की श्री राम जी, करने गये सहाय॥

भाग दूसरा हुआ खतम. सीता का हरण हुआ इसमें।
कोई छूटे कर्म विना भुगते, यह शक्ति बतलाओ किसमें॥
रामचन्द्र का हाल शेष, सब पढ़ो तीसरे हिस्से में।
धन्य 'शुक्ल' यह पुरुष धर्म पर, कायम रहें परिषह में॥

❀ पूर्वार्धस्य द्वितीयो भागः समाप्तः ❀